सामाजिक विज्ञान

लोकतांत्रिक राजनीति–1

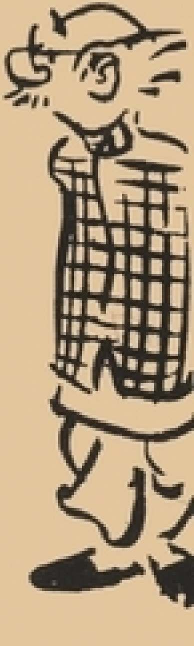

कक्षा 9 के लिए राजनीति विज्ञान की पाठ्यपुस्तक

सामाजिक विज्ञान

लोकतांत्रिक राजनीति

कक्षा 9 के लिए

राजनीति विज्ञान की पाठ्यपुस्तक

© NCERT not to be republished

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
मई 2006 ज्येष्ठ 1928

पुनर्मुद्रण
दिसंबर 2006 पौष 1928
जनवरी 2009 माघ 1930
जनवरी 2010 माघ 1931
नवम्बर 2010 कार्तिक 1932
जनवरी 2012 माघ 1933
मार्च 2013 फाल्गुन 1934
जनवरी 2014 माघ 1935
दिसंबर 2014 पौष 1936
दिसंबर 2015 पौष 1937
जनवरी 2017 माघ 1938

PD 50T RPS

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् , 2006

₹ 80.00

आवरण पर अंकित चित्र आर.के. लक्ष्मण, मेरियो मिरेंडा और हरिशचन्द्र शुक्ल 'काक' के कार्टूनों से लिए गए हैं।

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा द सेंट्रल प्रेस, 123/443, फैक्ट्री एरिया, फ़ज़ल गंज, कानपुर 208 012 द्वारा मुद्रित।

ISBN 81-7450-573-3

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुन: प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन सी ई आर टी के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108ए 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी ष्ष्ष् इस्टेज
बेंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग	: *एम. सिराज अनवर*
मुख्य संपादक	: *श्वेता उप्पल*
मुख्य व्यापार प्रबंधक	: *गौतम गांगुली*
मुख्य उत्पादन अधिकारी (प्रभारी)	: *अरुण चितकारा*
सहायक संपादक	: *शशि चड्‌डा*
उत्पादन अधिकारी	: *अब्दुल नईम*

आवरण और सज्जा
अरूण दास

चित्रांकन
राजीव कुमार

कार्टूंस
इरफ़ान खान

© NCERT not to be republished

आमुख

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) सुझाती है कि बच्चों के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ा जाना चाहिए। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत के विपरीत है जिसके प्रभाववश हमारी व्यवस्था आज तक स्कूल और घर के बीच अंतराल बनाए हुए है। नई राष्ट्रीय पाठ्यचर्या पर आधारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इस बुनियादी विचार पर अमल करने का प्रयास हैं। इस प्रयास में हर विषय को एक मज़बूत दीवार से घेर देने और जानकारी को रटा देने की प्रवृत्ति का विरोध शामिल है। आशा है कि ये कदम हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में वर्णित बाल-केंद्रित व्यवस्था की दिशा में काफ़ी दूर तक ले जाएँगे।

इस प्रयत्न की सफलता अब इस बात पर निर्भर है कि स्कूलों के प्राचार्य और अध्यापक बच्चों को कल्पनाशील गतिविधियों और सवालों की मदद से सीखने और अपने अनुभव पर विचार करने का अवसर देते हैं। हमें यह मानना होगा कि यदि जगह, समय और आज़ादी दी जाए तो बच्चे बड़ों द्वारा सौंपी गई सूचना-सामग्री से जुड़कर और जूझकर नए ज्ञान का सृजन करते हैं। शिक्षा के विविध साधनों व स्रोतों की अनदेखी किए जाने का प्रमुख कारण पाठ्यपुस्तक को परीक्षा का एकमात्र आधार बनाने की प्रवृत्ति है। सर्जना और पहल को विकसित करने के लिए ज़रूरी है कि हम बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में पूरा भागीदार मानें और बनाएँ, उन्हें ज्ञान की निर्धारित खुराक का ग्राहक मानना छोड़ दें।

ये उद्देश्य स्कूल की दैनिक ज़िंदगी और कार्यशैली में काफ़ी फेरबदल की माँग करते हैं। दैनिक समय-सारणी में लचीलापन उतना ही ज़रूरी है जितना वार्षिक कैलेण्डर के अमल में चुस्ती, जिससे शिक्षण के लिए नियत दिनों की संख्या हकीकत बन सके। शिक्षण और मूल्यांकन की विधियाँ भी इस बात को तय करेंगी कि यह पाठ्यपुस्तक स्कूल में बच्चों के जीवन को मानसिक दबाव तथा बोरियत की जगह खुशी का अनुभव बनाने में कितनी प्रभावी सिद्ध होती है। बोझ की समस्या से निपटने के लिए पाठ्यक्रम निर्माताओं ने विभिन्न चरणों में ज्ञान का पुनर्निर्धारण करते समय बच्चों के मनोविज्ञान एवं अध्यापन के लिए उपलब्ध समय का ध्यान रखने की पहले से अधिक सचेत कोशिश की है। इस कोशिश को और गहराने के यत्न में यह पाठ्यपुस्तक सोच-विचार और विस्मय, छोटे समूहों में विचार-विमर्श और ऐसी गतिविधियों को प्राथमिकता देती है जिन्हें करने के लिए व्यावहारिक अनुभवों की आवश्यकता होती है।

एन.सी.ई.आर.टी. इस पुस्तक की रचना के लिए बनाई गई पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के परिश्रम के लिए कृतज्ञता व्यक्त करती है। परिषद् सामाजिक विज्ञान सलाहकार समूह के अध्यक्ष प्रोफ़ेसर हरि वासुदेवन और राजनीति विज्ञान पाठ्यपुस्तक समिति के मुख्य सलाहकार

© NCERT not to be republished

प्रोफ़ेसर योगेंद्र यादव तथा प्रोफ़ेसर सुहास पळशीकर की विशेष आभारी है। इस पाठ्यपुस्तक के निर्माण में कई शिक्षकों ने योगदान दिया; इस योगदान को संभव बनाने के लिए हम उनके प्राचार्यों के आभारी हैं। हम उन सभी संस्थाओं और संगठनों के प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्री और सहयोगियों की मदद लेने में हमें उदारतापूर्वक सहयोग दिया। हम माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रोफ़ेसर मृणाल मीरी एवं प्रोफ़ेसर जी.पी. देशपांडे की अध्यक्षता में गठित निगरानी समिति (मॉनिटरिंग कमेटी) के सदस्यों को अपना मूल्यवान समय और सहयोग देने के लिए धन्यवाद देते हैं। व्यवस्थागत सुधारों और अपने प्रकाशनों में निरंतर निखार लाने के प्रति समर्पित एन.सी.ई.आर.टी. टिप्पणियों व सुझावों का स्वागत करेगी जिनसे भावी संशोधनों में मदद ली जा सके।

निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्

नयी दिल्ली
20 दिसंबर 2005

© NCERT not to be republished

एक चिट्ठी आपके नाम

प्रिय शिक्षक और अभिभावक,

शायद आपने अपने छात्र-छात्राओं या बच्चे को कहते सुना हो कि 'नागरिकशास्त्र बड़ा बोरिंग है।' हो सकता है, आपको भी लगता हो कि उनकी बात में दम है। अपने देश में नागरिकशास्त्र के पाठ्यक्रम में शासन की संस्थाओं की जानकारी पर ज़ोर रहा है। पाठ्यपुस्तकों में संवैधानिक, कानूनी पेचीदगियों के नीरस और उबाऊ ब्यौरे भरे रहते हैं। ज़ाहिर है, ऐसे में बच्चा जो कुछ अपने वास्तविक जीवन में देखता है और जो बातें किताबों में पढ़ता है, उनके बीच कोई तालमेल नहीं बैठा पाता। शायद इसी कारण हमारे किशोर-किशोरियों को नागरिक शास्त्र की पढ़ाई बोरिंग लगती है जबकि वास्तव में स्थिति यह है कि हमारे देश के नागरिकों की राजनीति में भागीदारी और रुचि बहुत गहरी है।

मौजूदा किताब इस स्थिति को बदलने की दिशा में एक कोशिश है। इस बदलाव की प्रेरणा मिली 'राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005' से। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या ने इस बुनियादी बदलाव की ज़मीन तैयार की। इस पुस्तक की प्रस्तावना स्वयं राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के निदेशक ने लिखी है। प्रस्तावना का ज़ोर 'नागरिकशास्त्र' के पुराने पाठ्यक्रम को पूरी तरह बदलने पर है। प्रस्तावना में नई पाठ्यचर्या की सोच और दर्शन को स्पष्ट किया गया है। विषय का नाम 'नागरिक शास्त्र' से बदलकर 'राजनीति विज्ञान' रखा गया है। नाम का यह बदलाव नज़रिए के बदलाव को भी ज़ाहिर करता है। नया पाठ्यक्रम यह मानकर चलता है कि इस स्तर के छात्र-छात्राओं को राजनीति की कच्ची-पक्की कुछ न कुछ जानकारी है। ज़रूरत है, इस जानकारी को और मज़बूत करने की और उनकी समझ को माँजने की। इसी के अनुरूप कक्षा 9 और 10 के विद्यार्थियों का राजनीति के अलग-अलग पहलुओं से परिचय कराया जाएगा। परिचय कराने की इस कोशिश में लोकतंत्र वह झरोखा है जिससे वे राजनीति के सिद्धांत और हकीकत को देख पाएँगे।

इस पुस्तक के सहारे आप अपने विद्यार्थियों को लोकतंत्र की दुनिया की सैर कराने ले जा रहे हैं। पहले आप इन्हें जल्दी-जल्दी से कुछ कथाएँ सुनाएँगे। एक बार विद्यार्थी के मन में लोकतंत्र का बोध और भाव घर कर जाए तो आप उससे कुछ गहरे सवाल भी पूछ सकते हैं, जैसे कि लोकतंत्र क्या है? लोकतंत्र ही क्यों? एक बार विद्यार्थी इन सवालों से दो-चार होना शुरू कर दे तो आप उसे संविधान का नक्शा दिखा सकते हैं। संविधान क्या है, क्यों और कैसे बनता है—जैसी बातों की जानकारी विद्यार्थियों को लोकतांत्रिक राजनीति के तीन पहलुओं—चुनाव, संस्थागत ढाँचा और अधिकारों तक पहुँचा देगी। आपको इस यात्रा में अनेक

© NCERT not to be republished

विवादग्रस्त मुद्दों का भी सामना करना पड़ सकता है। यहाँ हमारी मंशा विद्यार्थियों पर किसी बनी-बनायी धारणा को लादना नहीं है। कोशिश यही है कि उनकी खुद अपने बूते सोचने की आदत और क्षमता को बढ़ावा दिया जाए।

इस किताब का उद्देश्य राजनीति की इस सैर को विद्यार्थियों के लिए मज़ेदार बनाना और उनके मार्गदर्शन में आपकी सहायता करना है। यह किताब सिर्फ़ सूचना नहीं देती। यह उन्हें खुद सोचने के लिए उकसाती है। यह किताब सवालों के ज़रिए विद्यार्थियों से हेल-मेल करती है, कथाओं और तस्वीरों से उनका मनोरंजन करती है और कार्टूनों के ज़रिए गुदगुदाती है। आपने स्वयं अनुभव किया होगा कि सूझबूझ से भरा कोई एक सवाल या झकझोरने वाला कोई एक कार्टून भी किसी छात्र-छात्रा की कल्पना और विचारों को पंख लगा सकता है। ऐसी बहुत-सी चीज़ों को इस किताब में जुटाने की कोशिश की गई है। विद्यार्थियों की प्रगति को परखने और उन्हें विभिन्न गतिविधियों में शामिल करने में यह किताब आपकी भी मदद करती है। इन सारी विशेषताओं को एक जगह समेटने की कोशिश में ही किताब का आकार थोड़ा बढ़ गया है या यूँ कहें कि सूचनाओं के बोझ को कम करने के कारण ही इस पुस्तक में कुछ पन्ने बढ़ गए हैं। आगे के पन्नों पर **इस किताब का उपयोग कैसे करें** शीर्षक से जानकारी दी गई है। इसे ज़रूर पढ़ें। इससे आपको पुस्तक का उपयोग करने में मदद मिलेगी। यह यात्रा कक्षा 10 की पाठ्यपुस्तक में भी ज़ारी रहेगी। कक्षा 10 की पुस्तक में ज़ोर लोकतंत्र और राजकाज की प्रक्रियाओं पर रहेगा। हमें उम्मीद है कि लोकतंत्र की इस सैर से विद्यार्थी राजनीति को ज़्यादा सावधानी से समझ सकेंगे और यह पुस्तक उन्हें सक्रिय भागीदारी वाला नागरिक बनाने में मददगार साबित होगी।

हमारी यह उम्मीद आपके दम पर है। इसी कारण यह किताब आपसे कुछ ज़्यादा की अपेक्षा रखती है। संभव है नये नाम, घटना और जगहों के बारे में आपको ज़्यादा खोजबीन करनी पड़े। आपको ऐसे सवालों का भी सामना करना पड़ सकता है जिसके जवाब यह किताब न दे। जब हम राजनीति की चर्चा करते हैं तो भावनाओं को उत्तेजित करने वाली बहसें उठती ही हैं। संवेदनशील मुद्दों पर उठी इन बहसों के दौरान आपको विद्यार्थियों को संभालना है। जब आपको ऊब या चिढ़ होने लगे तो एक बात पर गौर कीजिए—अगर विद्यार्थी कोई ऐसा सवाल पूछे जिसका जवाब देते आपको कठिनाई हो, ऐसी सूचनाएँ माँगे जिन्हें तलाशना मुश्किल हो या ऐसी बात कहे जो आपको नहीं जँचती हो, तो इसे अपनी कमी या असफलता न मानें। दरअसल, एक शिक्षक या अभिभावक के रूप में यह आपकी सफलता की निशानी भी हो सकती है। छात्र-छात्रा का सवाल करना उनके सीखने-जानने की प्रक्रिया का ज़रूरी हिस्सा है, विद्यार्थी के रूप में भी और जागरुक नागरिक के रूप में भी। यह किताब इसी संभावना को पालने-पोसने की कोशिश करती है।

'बोरिंग नागरिकशास्त्र' के ठप्पे से छुटकारा पाने की इच्छा के चलते ही अपने देश में संभवतया पहली बार राजनीतिशास्त्री, स्कूली शिक्षक और शिक्षाशास्त्रियों की एक टोली इस बात पर विचार करने के लिए एकजुट हुई कि अगली पीढ़ी को राजनीति की शिक्षा किस तरह मिले।

'पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति' नाम की इस टोली का ज़िक्र अगले पृष्ठों में किया गया है। इन सभी साथियों ने अपना बेशकीमती वक्त निकाला। अकादमिक व्यस्तता के बीच,

© NCERT not to be republished

अचानक आ पड़े इस काम में अपनी विशेषज्ञता से मदद दी। एन.सी.ई.आर.टी. के निदेशक प्रोफ़ेसर कृष्ण कुमार ने न सिर्फ़ इस दिलचस्प काम में हम में से कई साथियों को मानो एक तरह से खींचकर लगाया वरन् काम के हर पायदान पर मदद भी दी। प्रोफ़ेसर हरिवासुदेवन और प्रोफ़ेसर गोपाल गुरु ने इस पहल की ठीक वैसी ही हिफ़ाजत की जिसकी यह हकदार थी। प्रोफ़ेसर मृणाल मीरी, प्रोफ़ेसर जी.पी. देशपाण्डे और राष्ट्रीय निगरानी समिति के शेष सदस्यों ने अपने मूल्यवान सुझावों और आलोचना से हमारा मार्गदर्शन किया। इस पहलकदमी ने अपने सफ़र में कई दोस्त बनाये: राजदूत जार्ज हाईन, अरविन्द सरदाना, आदित्य निगम, सुमनलता और चांदनी खंडूजा ने प्रारुप के अलग-अलग हिस्सों को पढ़ा और उपयोगी सुझाव दिए। कई अवसरों पर इस पाठ्यपुस्तक की तैयारी में विकासशील समाज अध्ययन पीठ के 'लोकनीति शोध-कार्यक्रम तथा 'लोकनीति की टीम' से मदद ली गई। प्रोफ़ेसर पीटर डिसूजा और संजय कुमार ने हर स्तर पर पूरा सहयोग दिया। सबसे बड़ी बात यह है कि इस पहलकदमी को मूलगामी शिक्षाशास्त्र के लिए प्रतिबद्ध तीन युवा शिक्षाशास्त्रियों एलेक्स एम. जार्ज, पंकज पुष्कर और मनीष जैन की अंतर्दृष्टि तथा ऊर्जा का साथ मिला। इन तीनों साथियों ने हमें सिखाया कि स्कूली शिक्षा की चुनौतियों के बारे में कैसे सोचना है। डिज़ाइनर अरूण दास और हिंदी संस्करण के डिज़ाइनर योगेश समदर्शी, कार्टूनिस्ट इरफ़ान खान तथा कॉपी-एडिटर सैयद अज़फ़र अहसन ने इस पाठ्यपुस्तक के विचार को साकार करने में हमारी मदद की।

यह पुस्तक मूलत: अंग्रेज़ी में लिखी गई थी। इसके हिंदी अनुवाद के बारे में हमें यह चिंता थी कि वह सामान्य अनुवाद की तरह बोझिल न हो जाए। हम यह भी चाहते थे कि हिंदी माध्यम के विद्यार्थी के पास जो पाठ्यपुस्तक पहुँचे वह गुणवत्ता के मामले में आगे के लिए नए रास्ते दिखाए। अरविंद मोहन ने एक सहज और सरल अनुवाद करने का बीड़ा उठाया और इसे बहुत कम समय में पूरा कर दिखाया। इस अनुवाद का मूल प्रति की एक-एक पंक्ति से मिलान करना और भाषा को और भी सहज बनाना कोई आसान काम नहीं था—यह काम अद्भुत लगन से चंदन श्रीवास्तव ने किया। लेकिन अगर यह पुस्तक आपके हाथ पहुँच रही है तो पंकज पुष्कर के अथक प्रयास के चलते। उन्होंने इस पूरी प्रक्रिया की हर कड़ी को एक-दूसरे से जोड़ा और हर स्तर पर गुणवत्ता पर निगाह रखी।

हमें पूरी उम्मीद है कि आपको और विद्यार्थियों को यह पुस्तक रुचिकर लगेगी। शायद, ऐसा भी हो कि आप राजनीति को कुछ मूल्यवान चीज़ मानने लगें—एक ऐसी चीज़ जिसे ज़्यादा गंभीरता से लेने की ज़रूरत है—जिसके अध्ययन की ज़रूरत है। हमें आपकी प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

योगेंद्र यादव
सुहास पळशीकर
मुख्य सलाहकार

के.सी. सूरी
सलाहकार

© NCERT not to be republished

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1]**[संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य]** बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सब में**

व्यक्ति की गरिमा और [2]**[राष्ट्र की एकता और अखंडता]** सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

---

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''राष्ट्र की एकता'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।

© NCERT not to be republished

इस किताब का उपयोग कैसे करें?

हर अध्याय की शुरूआत में परिचय दिया गया है। किसी अध्याय का उद्देश्य क्या है और किताब के बाकी हिस्से से इसे कैसे जोड़ा जाए–इसे समझने के लिए आप परिचय का सहारा ले सकते हैं। इससे आपको यह बताने में भी मदद मिलेगी कि किसी अध्याय को अलग-अलग हिस्सों में क्यों बाँटा गया है। क्या पढ़ाएँ, किस बात पर ज़ोर दें और किस तरह के सवाल पूछें–जैसे संदेह आपके मन में उठते हैं तो परिचय को दुबारा पढ़ें।

अध्याय की सामग्री को सहूलियत से पढ़ाने में खंड और उप-खंड आपके लिए मददगार साबित होंगे। इससे आप अध्याय की बातों को एक-एक करके उठा सकेंगे। अमूमन हर अध्याय को चार खंडों में बाँटा गया है। एक खंड को आप तीन 'पीरियड' में पूरा कर सकते हैं। खंड के शीर्षक के साथ संख्या दी गई है। शीर्षक इस बात का इशारा है कि अध्याय के भीतर अब नई बात शुरू होने जा रही है। उप-खंडों के शीर्षक के सहारे किसी बात को बिंदुवार बताने में आपको सहूलियत होगी। मुख्य बात को ज़्यादा स्पष्ट करने वाली अतिरिक्त सूचनाओं अथवा विश्लेषण को बॉक्स में डाला गया है। 'बॉक्स' मुख्य पाठ का ज़रूरी हिस्सा है और इसे भी पढ़ना है।

हर अध्याय की शुरूआत किसी कहानी या संवाद से होती है। अध्याय की विषयवस्तु में दिलचस्पी पैदा करने और उसे समझाने के लिए ऐसा किया गया है। विद्यार्थी को किसी खंड या उप-खंड तक ले जाने के लिए कहीं-कहीं छोटी कथा अथवा उदाहरणों का इस्तेमाल किया गया है। इन कथाओं अथवा उदाहरणों को कक्षा में विस्तार से बताने से विद्यार्थी की रुचि बढ़ेगी। अगर छात्र शुरूआती तौर पर किसी कथा के मंतव्य को नहीं समझ पाता तो खास परेशानी की बात नहीं। शुरूआती कथा को अपना आधार बनाकर ही अध्याय आगे बढ़ता है और मूर्त से अमूर्त की ओर ले जाता है। लेकिन, किसी कथा के ब्यौरे मसलन् तारीख, व्यक्ति अथवा स्थल के नाम छात्र-छात्राओं को रटवाने पर ज़ोर न दें। किताब में उपयोग किए गए बाकी उदाहरणों के साथ भी यही बात लागू होती है। रटने के चक्कर में विद्यार्थी की दिलचस्पी जाती रहेगी और कथाएँ व्यर्थ हो जाएँगी। यदि कथा रुचिकर है तो विद्यार्थी के मन में कुछ ब्यौरे टिक जाएँगे। भले ही विद्यार्थी के मन में कोई ब्यौरा दर्ज़ नहीं हो, लेकिन वह किसी कथा या उदाहरण के ज़रिए कही गई बात बता दे तो आपका प्रयास सफल हुआ।

इस किताब के लिए कार्टूनिस्ट इरफ़ान खान ने मुन्नी और उन्नी नाम के दो चरित्र खास तौर पर गढ़े हैं। ये दोनों चरित्र इस अध्याय में जहाँ-तहाँ नमूदार होते हैं और तरह-तरह के सवाल पूछते हैं–कुछ सीधे-सपाट, कुछ आड़े-तिरछे तो कुछ बेतुके और बेअदब। पाठ में जिन बातों की चर्चा की गई है, उन्हीं से ये सवाल इन चरित्रों के मन में कौंधते हैं। अमूमन

© NCERT not to be republished

आपको इन सवालों के ज़वाब इस किताब में नहीं मिलेंगे। इन चरित्रों को गढ़ने का उद्देश्य छात्र–छात्राओं को यह भरोसा दिलाना है कि उनके मन में जो 'बेसिर-पैर की बातें' उठती हैं वे बातें केवल बकवास नहीं है। मुन्नी–उन्नी की तरह वे भी हिम्मत करके ऐसे सवाल पूछ सकते हैं। मुन्नी–उन्नी के सवालों के सहारे आपको चर्चा के बीच थोड़ा रुकने की राहत मिल जाती है और आप कुछ ऐसी चर्चाओं में शामिल होने से नहीं हिचकते जो कई बार मुख्य बात की चर्चा से कहीं ज़्यादा लाभकर होती है। यूँ कहें कि आम के स्वाद के साथ गुठली के दाम भी वसूल हो जाते हैं।

आपको इस किताब में बहुत-से कार्टून और चित्र मिलेंगे। देखने में ये रुचिकर हैं और आँखों को अच्छा लगता है। लेकिन इन तस्वीरों का उद्देश्य इतना ही भर नहीं। ये पढ़ने-सीखने की प्रक्रिया का हिस्सा हैं। हर चित्र के साथ सूचना दी गई है। इससे छात्र-छात्राओं को चित्र के संदेश को समझने में मदद मिलती है। बेहतर होगा कि आप हर कार्टून और चित्र के सामने थोड़ा रुकें और विद्यार्थियों को संदेश समझने-बूझने में शामिल करें। संभव हो तो अपनी क्षेत्रीय भाषा में उपलब्ध कुछ और कार्टून जुटाएँ और उनका उपयोग करें। ठीक इसी तरह, पुस्तक में कुछ मानचित्र और ऐसे देशों के संदर्भ आते हैं जिनसे विद्यार्थी अनजान होंगे। इस पुस्तक का एक उद्देश्य विद्यार्थी की कल्पना को अपने देश के भूगोल से बाहर तक ले जाना है। अच्छा होगा कि इस किताब को पढ़ाते समय आप अपने पास विश्व का एक ताज़ातरीन राजनैतिक नक्शा रखें और उसके हवाले से पढ़ाएँ।

'कहाँ पहुँचे? क्या समझे?' के सवाल अमूमन हर खंड के अंत में दिए गए हैं। इन सवालों के ज़रिए आप यह भरोसा कर सकते हैं कि किसी खंड की चर्चा में आयी बातों को विद्यार्थी अच्छी तरह समझ गए हैं या नहीं। इन सवालों से आपको इस बात का भी इशारा मिल जाएगा कि आगे पढ़ाने में किन-किन बातों पर ज़ोर देना है। आपसे एक अनुरोध यह भी है कि इस तरह के कुछ और सवाल गढ़ें और पूछें ताकि विद्यार्थी को रट्टू तोता बनने का रोग न लगे।

'खुद करें–खुद सीखें' के काम छात्र–छात्राएँ कक्षा के अंदर या बाहर मिल-बाँटकर कर सकते हैं। छात्र–छात्राओं को समूहों में बाँटकर या एक-एक विद्यार्थी को अलग-अलग काम सौंप कर आप इस सिलसिले में उनका दिशा-निर्देश कर सकते हैं। इस हिस्से में बताए गए काम या जगह सिर्फ़ सुझाव भर हैं। यदि आप कोई ऐसी गतिविधि सोच सकें जो विद्यार्थियों की ज़िंदगी से ज़्यादा जुड़ी हो तो किताब में बताए गए सुझावों की जगह अपनी ओर से सोचे हुए काम कराने से जरा भी न हिचकें।

अपरिचित शब्दों और अवधारणाओं की एक तालिका हर अध्याय के अंत में दी गई है। जहाँ इन शब्दों का प्रयोग पहली दफ़ा हुआ है वहाँ इन्हें गुलाबी रंग में दिखाया गया है। बच्चों को यह पारिभाषिक शब्दावली देखने तथा अलग-अलग संदर्भों में प्रयोग करने के लिए उत्साहित करें। लेकिन, उनसे इन शब्दों की परिभाषा रटवाने की ज़रूरत नहीं है।

© NCERT not to be republished

प्रश्नावली

हर अध्याय के अंत में एक प्रश्नावली आती है। आप पाएँगे कि पहले की तुलना में कहीं ज़्यादा सवाल दिए गए हैं। इतना ही नहीं, ये सवाल कुछ अलग किस्म के भी हैं। इन सवालों का उद्देश्य यह जानना नहीं कि विद्यार्थी ने जो कुछ अध्याय में पढ़ा उसे याद करके फटाफट दुहरा सकता है या नहीं। नई राष्ट्रीय पाठ्यचर्या को ध्यान में रखते हुए हमने ऐसे सवाल पूछे हैं जो अध्याय की पढ़ाई के आधार पर नई व्याख्या, विश्लेषण, प्रयोग और दिमाग दौड़ाने की माँग करते हैं। इन सवालों के ज़वाब तलाशने में आपको थोड़ा वक्त विद्यार्थियों को देना होगा। अगर आपको नए और बेहतर सवाल सूझें तो उन्हें ही पूछें और उन सवालों के आधार पर विद्यार्थी का मूल्यांकन करें।

'आइए, अखबार पढ़ें' एक अभ्यास भी है और 'खुद करें-खुद सीखें' का विस्तार भी। इस हिस्से का प्रयोग आप यह जानने में कर सकते हैं कि विद्यार्थी अपने सीखे हुए का प्रयोग विभिन्न संदर्भों में कर सकते हैं या नहीं। आप इसका इस्तेमाल अखबार पढ़ने की आदत डलवाने में भी कर सकते हैं। जहाँ अधिकांश विद्यार्थियों को टेलीविज़न के विभिन्न समाचार चैनलों को देखने की सुविधा हो वहाँ आप इस हिस्से में ज़रूरत के अनुरूप बदलाव कर लें। आप समाचार और सामयिक विषयों के कार्यक्रम देखने का काम करा सकते हैं। अगर आपको लगता है कि विद्यार्थी के परिवेश और संसाधन के लिहाज़ से कोई और काम कराना उचित रहेगा तो समझें कि आपका यह फ़ैसला सही है। किताबों में बदलाव शिक्षा में व्यापक बदलावों की प्रक्रिया की एक कड़ी भर है। सच तो यह है कि अब कमान आपके हाथों में है। अब बस अपनी सोच के अनुरूप चल पड़िए।

अपनी राय ज़रूर दें :

आपको यह किताब कैसी लगी? इसे पढ़ने या इसका प्रयोग करने का आपका अनुभव कैसा रहा? आपको इसमें क्या-क्या परेशानियाँ हुईं? पुस्तक के अगले संस्करण में आप इसमें क्या-क्या बदलाव चाहेंगे? इन सबके बारे में या किसी भी नए सुझाव के संबंध में हमें अवश्य लिखें। आप अध्यापक हों, अभिभावक हों, छात्र हों या सामान्य पाठक, हर कोई सलाह दे सकता है। किताबों के बदलाव की प्रक्रिया में आपके सुझाव अमूल्य हैं। हम हर सुझाव का सम्मान करते हैं।

कृपया हमें इस पते पर लिखें:
समन्वयक (राजनीति विज्ञान)
सामाजिक विज्ञान शिक्षा विभाग
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016

आप हमें इस पते पर ई-मेल भी कर सकते हैं: politics.ncert@gmail.com

© NCERT not to be republished

ऑनलाइन सूचनाओं को हासिल करना

हम लोग अब सूचना और संचार-क्रांति के युग में रह रहे हैं। छपी-छपाई किताब, पाठ्यपुस्तक और दैनिक अखबार अथवा साप्ताहिक जैसे जनसंचार के माध्यम ही अब सूचना के एकमात्र स्रोत न रहे। अब लाखों वेबसाइट हैं। (हम चाहें तो इन्हें जगत-जोड़ता-जाल (वर्ल्ड वाइड वेब) कह सकते हैं) और इन वेबसाइटों से बैठे-बिठाए कई किस्म की सूचनाएँ बड़ी तादाद में बाआसानी हासिल हो जाती हैं। जगत-जोड़ता-जाल ने बड़ी तेजी से और अति की हद तक सूचना का विकेंद्रीकरण किया है। बहुत-से विद्यालयों में अद्यतन विश्वकोष अथवा आमफहम पुस्तकालय नहीं होते। ऐसी स्थिति में छात्र और शिक्षक ज़रूरी सूचनाओं को पाने के लिए इंटरनेट का सहारा ले सकते हैं।

संभव है, इस पाठ्यपुस्तक का इस्तेमाल करते हुए कभी-कभी शिक्षक और छात्रों को लगे कि दी गई सूचना नाकाफी है। संभव है, आप कुछेक विचार, धारणा अथवा घटनाओं के बारे में ज्यादा तफ़्सील से जानना चाहें। इसके लिए इंटरनेट के उपयोग के कुछ तरीके हम आपकों बता रहे हैं।

आपको सूचनाएँ www.en.wikipedia.org अथवा www.britannica.com जैसी मुफ्त विश्वकोष की वेबसाइटों पर मिल जाएँगी। आपकों जिन विषयों में रुचि हो उससे जुड़ी वेबसाइट को ढूँढ़ने के लिए आप google और yahoo की सर्च-इंजन का इस्तेमाल कर सकते हैं।

ठीक ऐसे ही, बहुत-से अखबार और मैंगज़ीन ऑन लाइन उपलब्ध हैं। इनमें से कुछ आपको बगैर भुगतान अथवा पंजीकरण के अपने सामग्री-संग्रह में जाने की अनुमति देते हैं। इसी तरह कुछ टीवी चैनलो से बगैर भुगतान अथवा पंजीकरण के आप सूचना हासिल कर सकते हैं।

अध्यायों में विभिन्न संस्थाओं की चर्चा की गई है। इनके बारे में ज्यादा जानकारी के लिए कुछ और वेबसाइट आपके मददगार हो सकते हैं। भारत सरकार की संस्थाओं की वेबसाइट www.india.gov.in के जरिए पहुँचा जा सकता है। ख़ासकर http://india.gov.in/directories_gov.php से आपको विभिन्न संस्थाओं की सीधी 'लिंक' मिल जाएगी। इसी तरह संयुक्त राष्ट्रसंघ, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, और मानवाधिकार संगठन जैसे, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की भी अपनी वेबसाइट हैं। भारत सहित कई देशों के संविधान ऑनलाइन उपलब्ध हैं। आप चाहें तो इंटर पार्लियामेंटरी यूनियन की वेबसाइट www.ipu.org/english/home.htm के जरिए विश्व की संसदों पर भी एक नज़र डाल सकते हैं।

हो सकता है कि आप चर्चा के लिए कुछ और कार्टून, तस्वीर या छविचित्र जुटाना चाहें। ऑनलाइन उपलब्ध अखबारों में ये चीजें आपकों मिल जाएँगी। इसके अलावा आप www.politicalcartoons.com का भी इस काम के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं। google में एक विकल्प images का होता है। इसमें भी आप इन्हें खोज सकते हैं।

अगर कुछ सैद्धांतिक बातों को ज्यादा सफ़ाई से समझना चाहें या राजनीतिक विचार और धारणाओं के बारे में आप और जानकारी चाहते हों तो जैसी वेबसाइट www.plato.standford.edu. www.opendemocracy.net और www.brainyencyclopeid.com जैसी वेबसाइट आपके लिए उपयोगी होंगी।

© NCERT not to be republished

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्ष, सामाजिक विज्ञान पाठ्यपुस्तक विकास सलाहकार समिति
हरि वासुदेवन, *प्रोफ़ेसर,* इतिहास विभाग, कलकत्ता विश्वविद्यालय, कोलकाता।

मुख्य सलाहकार
योगेंद्र यादव, *सीनियर फ़ेलो,* विकासशील समाज अध्ययन पीठ, दिल्ली।
सुहास पळशीकर, राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन विभाग, पुणे विश्वविद्यालय, पुणे, महाराष्ट्र।

सलाहकार
के.सी. सूरी, *प्रोफ़ेसर,* राजनीति विज्ञान एवं प्रशासन विभाग, नागार्जुन विश्वविद्यालय, गुंटूर, आंध्र प्रदेश।

सदस्य
मुज़फ्फर असदी, *प्रोफ़ेसर,* राजनीति विज्ञान विभाग, मैसूर विश्वविद्यालय, मानसगंगोत्री, मैसूर, कर्नाटक।
एलेक्स एम. जॉर्ज, *स्वतंत्र अनुसंधानकर्ता,* इरुवट्टी, जिला कुन्नूर, केरल।
मालिनी घोष, *निरंतर,* सेंटर फॉर जेंडर ऐंड एजुकेशन, नई दिल्ली।
मनीष जैन, *पूर्व अध्यापक,* वर्तमान शोध छात्र, शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
नीरजा गोपाल जयाल, *प्रोफ़ेसर,* सेंटर फ़ॉर स्टडी ऑफ ला एंड गवर्नेंस, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।
अमन मदान, *एसिस्टेंट प्रोफ़ेसर,* मानविकी और समाज विकास विभाग, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, कानपुर, उत्तर प्रदेश।
पंकज पुष्कर, *सीनियर लेक्चरर,* राजनीति विज्ञान, उच्च शिक्षा निदेशालय (उत्तरांचल), हल्द्वानी, उत्तरांचल।
सव्यसाची बसु राय चौधरी, *प्रोफ़ेसर,* राजनीति विज्ञान विभाग, रवींद्र भारती विश्वविद्यालय, कोलकाता।

हिंदी अनुवाद
अरविंद मोहन, वरिष्ठ पत्रकार, 78 डी, आई पॉकेट, दिलशाद गार्डन, दिल्ली–92।
चंदन कुमार श्रीवास्तव, स्वतंत्र अनुवादक और शोधार्थी, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।
पंकज पुष्कर, उच्च शिक्षा निदेशालय (उत्तरांचल), हल्द्वानी, उत्तरांचल।

सदस्य-समन्वयक
संजय दुबे, *रीडर,* राजनीति विज्ञान, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

© NCERT not to be republished

आभार

पाठ्यपुस्तक विकास समिति के उल्लिखित नामों के अलावा इस पुस्तक की परिकल्पना और रूपरेखा बनाने में अनेक शिक्षक और शिक्षाविदों का सहयोग मिला। हम इनके आभारी हैं– अंजु आनंद, *शिक्षक*, जी.एस. पब्लिक स्कूल, रामकृष्णपुरम, सैक्टर–7, नई दिल्ली; अमित, आधारशिला स्कूल, ग्राम–सकाल, पोस्ट–चताली, जिला–बड़वानी, मध्यप्रदेश; श्रीमती सुब्बाराव, *शिक्षक*, बी.जी.एस. इंटरनेशनल स्कूल, नित्यानन्द, बंगलूरू; पी. जिशा, नोबल पब्लिक स्कूल, मंजेरी, जिला–मालाबार, केरल; ए. कामाक्षी, जे.एस.एस. पब्लिक स्कूल, वाणशंकरी, मंगलोर, कर्नाटक; राममूर्ति, *स्वतंत्र शोधकर्ता और अध्यापक*, नांगल स्लांगरी, जिला उना, हिमाचल प्रदेश; यामे पर्टिन, *शिक्षक*, राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, दोइमुख, इटानगर, अरुणाचल प्रदेश; मदन साहनी, *शिक्षक*, राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, रामकृष्णपुरम, सैक्टर–7, नई दिल्ली; अनुराधा सेन, *शिक्षक*, स्प्रिंगडेल्स स्कूल, धौला कुआँ, नई दिल्ली; उषा रानी त्रिपाठी, *शिक्षक*, केंद्रीय विद्यालय, बोल्लाराम, सिकंदराबाद, आंध्र प्रदेश

पाठ्यपुस्तक के लिए चित्र और कार्टून जुटाने में हमें कई स्रोतों से मदद मिली–

केगल कार्टून्स ने इस पुस्तक के लिए एंजेल बेलिगन, पेट्रिक केपेट, स्टेफन पेरे, एरेस, एमद हज़्ज़ाज़, नर्लिकॉन, जान ट्रेवर, एरिक एली, सिमेंसा और एम.ई. कोहन के कार्टूनों को उपलब्ध कराया। ला नेशन (चिले), साउथ अफ्रीका हिस्ट्री ऑन लाइन, गुजरात सहकारी दुग्ध उत्पादक संघ, पत्र–सूचना कार्यालय ने आवश्यक चित्र उपलब्ध कराए। इन सभी का योगदान बहुमूल्य है। इन सभी को धन्यवाद।

हम शंकर, आर.के. लक्ष्मण, मारियो मिरांडा और हरिश्चन्द्र शुक्ल (काक) के विशेष रूप से आभारी हैं। इन्होंने अपने कार्टून हमें छापने की अनुमति दी। चिल्ड्रेन बुक ट्रस्ट ने शंकर जी के कार्टून प्रकाशित करने का अधिकार दिया। उनको भी धन्यवाद।

डी.टी.पी. ऑपरेटर विक्रम रावत और विनोद साही ने पुस्तक की शुरूआत से अंत तक की यात्रा में बड़े मनोयोग से सहयोग किया। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के विजय कुमार, अरविंद शर्मा और उत्तम कुमार के महत्त्वपूर्ण योगदान ने किताब को निखारने का काम किया। कॉपी एडिटर सतीश झा ने किताब को जाँचने में पूरा सहयोग दिया। इन सभी साथियों की व्यवसायिक कुशलता से ही यह कार्य सम्पन्न हो सका।

© NCERT not to be republished

अध्याय 1

समकालीन विश्व में लोकतंत्र

परिचय

यह किताब लोकतंत्र के बारे में है। पहले अध्याय में हम देखेंगे कि पिछले सौ वर्षों में लोकतंत्र किस प्रकार दुनिया के ज़्यादा से ज़्यादा देशों में फैलता गया है। दुनिया के स्वतंत्र देशों में से आधे से अधिक में आज लोकतंत्र है। आप यह भी देखेंगे कि लोकतंत्र का फैलाव बहुत सरलता से और एक जैसे रूप में नहीं हुआ है। विभिन्न देशों में इसने काफी सारे उतार-चढ़ाव देखे हैं। आज भी लोकतंत्र की स्थिरता और उसके टिकाऊपन को लेकर संदेह बना रहता है।

इस अध्याय में दुनिया के विभिन्न हिस्सों में लोकतांत्रिक व्यवस्था के बनने-बिगड़ने की अलग-अलग कहानियाँ दी गई हैं। ये उदाहरण आपको यह बताएँगे कि लोकतांत्रिक शासन के होने और न होने के क्या अर्थ हैं। हम लोकतंत्र के विस्तार की इस प्रवृत्ति को नक्शों के माध्यम से दिखाने के बाद एक संक्षिप्त इतिहास दे रहे हैं। इस अध्याय में एक ही देश के लोकतंत्र के कामकाज पर ही ध्यान केंद्रित किया गया है। लेकिन अध्याय के आखिर में हमने यह देखने का प्रयास किया है कि विभिन्न देशों के आपसी संबंध लोकतांत्रिक हैं या नहीं। हमने कुछ अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के कार्य-कलापों का परीक्षण किया है। इससे हम यह सवाल पूछ सकते हैं कि क्या हम वैश्विक स्तर पर लोकतंत्र की तरफ बढ़ रहे हैं?

© NCERT not to be republished

© ला नेशन

राष्ट्रपति आयेंदे (हेलमेट में) और उनके सुरक्षा गार्ड चिले के राष्ट्रपति-भवन *ला मोनेदा* के सामने। यह चित्र 11 सितंबर 1973 का है और इसके कुछ घंटों बाद ही आयेंदे की हत्या कर दी गई। इस चित्र में आए लोगों के चेहरे के भाव क्या कहते हैं?

1.1 लोकतंत्र के दो किस्से

"मेरे मुल्क के मेहनतकश मज़दूरों! चिले और इसका भविष्य बहुत ही अच्छा है, इस बात का मुझे पूरा भरोसा है। जब देशद्रोह करने वाली ताकतें अपनी सत्ता पूरी तरह कायम कर लेंगी तब भी चिले के लोग उस मुश्किल और अंधियारे दौर से पार पा लेंगे। हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि देर-सबेर वे स्थितियाँ बनेंगी ही जिसमें आज़ाद लोग एक बेहतर समाज की रचना के लिए आगे बढ़ेंगे। चिले जिंदाबाद! चिलेवासी जिंदाबाद! मज़दूर जिंदाबाद!

ये मेरे आखिरी शब्द हैं और मुझे पूरा भरोसा है कि मेरी कुर्बानी बेकार नहीं जाएगी और मैं महापराध, कायरता और देशद्रोह के खिलाफ़ एक नैतिक सबक बनकर मौजूद रहूँगा।"

ये सल्वाडोर आयेंदे के आखिरी भाषण के कुछ अंश हैं। वे दक्षिण अमेरिकी महाद्वीप के एक प्रमुख देश, चिले, के राष्ट्रपति थे। यह भाषण उन्होंने 11 सितंबर, 1973 की सुबह दिया था और उसी दिन फ़ौज ने उनकी सरकार का तख्तापलट कर दिया था। आयेंदे, चिले की सोशलिस्ट पार्टी के संस्थापक थे और उन्होंने 'पॉपुलर यूनिटी' नामक गठबंधन का नेतृत्व किया। 1970 में राष्ट्रपति चुने जाने के बाद से आयेंदे ने गरीबों और मज़दूरों के फायदे वाले अनेक कार्यक्रम शुरू कराए थे। इनमें शिक्षा प्रणाली में सुधार, बच्चों को मुफ़्त दूध बाँटना और भूमिहीन किसानों को ज़मीन बाँटने के कार्यक्रम शामिल थे। उनका राजनैतिक गठबंधन विदेशी कंपनियों द्वारा देश से ताँबा जैसी प्राकृतिक संपदा को बाहर ले जाने के खिलाफ़ था। उनकी नीतियों को मुल्क में चर्च, जमींदार वर्ग और अमीर लोग पसंद नहीं करते थे। अन्य राजनैतिक पार्टियाँ इन नीतियों के खिलाफ़ थीं।

राष्ट्रपति आयेंदे बार-बार मज़दूरों की बात क्यों करते हैं? अमीर लोग उनसे नाखुश क्यों थे?

1973 का सैनिक तख्तापलट

11 सितंबर 1973 को आयेंदे को पता चला कि नौसेना के एक समूह ने बंदरगाह पर कब्ज़ा कर लिया है। जब रक्षा मंत्री अपने कार्यालय पहुँचे

तो सेना के लोगों ने उन्हें ही गिरफ़्तार कर लिया। सेना के अधिकारियों ने रेडियो के माध्यम से घोषणाएँ कीं और राष्ट्रपति से पद छोड़ने को कहा। आयेंदे ने इस्तीफा देने या देश से बाहर चले जाने से इनकार किया। फ़ौज कुछ करती इसके पहले ही उन्होंने रेडियो पर अपना वह संदेश दिया जिसके कुछ अंश हमने शुरू में पढ़े हैं। फिर फ़ौज ने राष्ट्रपति के निवास को घेर लिया और उस पर बम बरसाने लगी। इस फ़ौजी हमले में राष्ट्रपति आयेंदे की मौत हो गई। अपने आखिरी भाषण में वे इसी कुर्बानी की बात कर रहे थे।

11 सितंबर 1973 को चिले में जो कुछ हुआ उसे सैनिक तख्तापलट कहते हैं। इस बगावत की अगुवाई जनरल ऑगस्तो पिनोशे कर रहे थे। अमेरिका की सरकार आयेंदे के शासन से खुश नहीं थी। उसने तख्तापलट करने वालों की गतिविधियों में मदद की, उनके लिए पैसे उपलब्ध कराए। तख्तापलट के बाद पिनोशे मुल्क के राष्ट्रपति बन बैठे और उन्होंने अगले 17 वर्षों तक राज किया। पिनोशे की सरकार ने आयेंदे के समर्थकों और लोकतंत्र की माँग करने वालों का दमन किया, उनकी हत्या कराई। इनमें चिले की वायुसेना के प्रमुख जनरल अल्बर्टो बैशेले और अनेक वे फ़ौजी अधिकारी शामिल थे जिन्होंने तख्तापलट में शामिल होने से इंकार किया था। जनरल बैशेले की पत्नी और बेटी को भी जेल में डालकर काफी प्रताड़ित किया गया। सेना ने 3000 से ज्यादा लोगों को मौत के घाट उतार दिया। काफी सारे लोग 'लापता' हो गए। कोई नहीं जानता कि उनका क्या हुआ।

खुद करें, खुद सीखें

- **नक्शे में चिले की खोज करो और उसमें रंग भरो। हमारे देश के किस राज्य का आकार चिले की तरह का है?**
- **अगले एक हफ़्ते तक अखबार में दक्षिणी अमेरिका महादेश के बारे में छपने वाली सभी खबरों की कतरनें जुटाओ। क्या हमारे अखबारों में इस महादेश के बारे में पर्याप्त जानकारी मिलती है?**

लोकतंत्र की वापसी

पिनोशे का सैनिक शासन 1988 में तब समाप्त हुआ जब उन्होंने जनमत संग्रह कराने का फ़ैसला किया। उन्हें भरोसा था कि लोग उनके शासन को जारी रखने के पक्ष में मतदान करेंगे। लेकिन

क्या सेना को यह अधिकार है कि वह देश के रक्षा मंत्री को गिरफ्तार करे? क्या सेना को देश के किसी नागरिक को गिरफ़्तार करने का अधिकार होना चाहिए?

जनवरी 2006 में हुए राष्ट्रपति चुनाव में जीत के बाद अपने समर्थकों को संबोधित करतीं राष्ट्रपति मिशेल बैशेले। इस चित्र को देखने के बाद आपको भारत और चिले की चुनावी जनसभाओं में कोई अंतर दिखता है?

© ला नेशन

लेक वालेशा

पोलैंड पोस्टर बनाने की कला के लिए विख्यात है। सोलिडेरिटी के अधिकांश पोस्टरों में संगठन का नाम इसी शैली में लिखा जाता था। क्या आप भारतीय राजनीति में कहीं पोस्टर कला या दीवार लेखन के ऐसे उदाहरण खोज सकते हैं?

चिले के लोगों ने अपनी लोकतांत्रिक परंपरा को भुलाया नहीं था। उन्होंने भारी बहुमत से पिनोशे की सत्ता को ठुकरा दिया। इससे पिनोशे की राजनैतिक सत्ता और फिर सैनिक सत्ता भी चली गई। अपने आखिरी भाषण में आयेंदे ने जो उम्मीद जाहिर की थी वह सही साबित हुई। चिले की जनता ने कायरता और देशद्रोह करने वाले अपराधियों को उनके किए की सजा दे दी। इसके बाद से अभी तक चिले में चार चुनाव हो चुके हैं और विभिन्न दल एक-दूसरे से मुकाबला करते हुए जीत-हार रहे हैं। धीरे-धीरे शासन में सेना की भूमिका खत्म होती गई है। बाद में आई सरकारों ने पिनोशे के राज में हुई गड़बड़ियों की जाँच के आदेश दिए हैं। इन जाँचों से पता चलता है कि पिनोशे सरकार सिर्फ़ क्रूर ही नहीं थी, उसने भारी भ्रष्टाचार भी किया था।

ऊपर हमने जिक्र किया था कि पिनोशे सरकार ने जनरल बैशेले की पत्नी के साथ उनकी बेटी को भी जेल में डाला और काफ़ी परेशान किया। वही लड़की, मिशेल बैशेले आज चिले की राष्ट्रपति हैं और जनवरी 2006 से सत्ता संभाल रही हैं। समाजवादी रुझान वाली मिशेल पेशे से डॉक्टर हैं और लातिनी अमेरिका में रक्षा मंत्री के पद पर आने वाली पहली महिला हैं। राष्ट्रपति के चुनाव में उन्होंने जिस व्यक्ति को हराया वह चिले के सर्वाधिक धनी व्यक्तियों में गिना जाता है। चिले में लोकतंत्र के पतन और उत्थान की इस कथा को हम उनके ही भाषण के एक अंश से समाप्त करते हैं:

''चूंकि मैं नफ़रत का शिकार बनी थी इसलिए मैंने अपना यह जीवन नफ़रत को खत्म करने, सहनशीलता और समझदारी के साथ-साथ प्रेम को बढ़ाने के प्रति समर्पित कर दिया है।''

मिशेल बैशेले ने चिले के राष्ट्रपति (2006-2010) और यूएन विमेन (UN women) के कार्यकारी निदेशक (2010-2013) के रूप में सेवा की। वह 2014 में दूसरे कार्यकाल के लिए चिले के राष्ट्रपति के रूप में चुनी गई हैं।

पोलैंड में लोकतंत्र

आइए एक और घटना पर गौर करें जो 1980 में पोलैंड में घटी थी। उस समय पोलैंड पर जारूज़ेल्स्की के नेतृत्व में पोलिश यूनाइटेड वर्कर्स पार्टी का शासन था। यह उन साम्यवादी दलों में से एक था जो तब पूर्वी यूरोप के अनेक देशों पर शासन करते थे। इन देशों में किसी अन्य राजनीतिक दल को राजनीति में भाग लेने की अनुमति नहीं थी। लोग साम्यवादी शासन या दल के पदाधिकारियों का चुनाव अपनी इच्छा से नहीं कर सकते थे। नेताओं या पार्टी या सरकार के खिलाफ़ आवाज़ उठाने वालों को जेल में डाल दिया जाता था। पोलैंड की सरकार को एक बड़े साम्यवादी देश, सोवियत संघ का समर्थन हासिल था और वही इस पर नियंत्रण भी करता था।

14 अगस्त 1980 को ग्डांस्क शहर स्थित 'लेनिन जहाज कारखाना' के मज़दूरों ने हड़ताल की। यह जहाज-कारखाना सरकारी था। दरअसल पोलैंड के सारे कारखाने और बड़ी संपत्तियाँ सरकारी थीं। मज़दूरों ने एक क्रेन चालक महिला को गलत ढंग से नौकरी से निकाले जाने के खिलाफ़ हड़ताल शुरू की। उनकी माँग थी कि इस महिला को काम पर वापस लिया जाए। कानून के अनुसार हड़ताल की इजाज़त नहीं थी क्योंकि देश में शासक दल से अलग किसी स्वतंत्र मज़दूर संघ की अनुमति नहीं थी। हड़ताल

© NCERT not to be republished

ज़ारी रही और फिर पहले काम से निकाला गया एक इलेक्ट्रिशियन बंदरगाह की दीवार लांघकर अंदर पहुँचा और हड़ताली कर्मचारियों के संग हो लिया। इस आदमी का नाम था – लेक वालेशा और बहुत जल्दी ही यह हड़ताली कर्मचारियों का नेता बन गया। हड़ताल को समर्थन बढ़ता गया और जल्दी ही यह पूरे शहर में फैल गई। अब मज़दूरों ने ज्यादा बड़ी माँगें करनी शुरू कर दीं। उन्होंने स्वतंत्र मज़दूर संघ बनाने की माँग की। उन्होंने यह भी माँग की कि राजनैतिक बंदियों को रिहा किया जाए और प्रेस पर लगी सेंसरशिप हटाई जाए।

यह आंदोलन इतना लोकप्रिय हो गया कि सरकार को हार माननी पड़ी। लेक वालेशा के नेतृत्व में मज़दूरों ने सरकार के साथ 21 सूत्री करार किया और हड़ताल खत्म हुई। ग्डांस्क संधि के बाद एक नया मज़दूर संगठन 'सोलिडरनोस्क' (जिसे अंग्रेजी में सोलिडेरिटी कहते हैं) बना। किसी भी साम्यवादी देश में पहली बार एक स्वतंत्र मज़दूर संघ का गठन हुआ। एक वर्ष के अंदर ही सोलिडेरिटी का विस्तार पूरे देश में हो गया और इसकी सदस्य संख्या एक करोड़ के करीब पहुँच गई। सरकार के कुप्रबंधन और भ्रष्टाचार की व्यापकता के किस्से सामने आने से सत्ता में बैठे लोगों की परेशानियाँ बढ़ती गईं। जनरल जारूज़ेल्स्की के नेतृत्व वाली सरकार एकदम बौखला गई और उसने दिसंबर 1981 में मार्शल लॉ घोषित कर दिया। सोलिडेरिटी के हजारों सदस्यों को जेल में डाल दिया गया और संगठन बनाने, विरोध करने और अभिव्यक्ति की आज़ादी फिर से छीन ली गई।

1988 में सोलिडेरिटी ने फिर से हड़तालें करवाईं और लेक वालेशा ने इनकी अगुवाई की। इस समय पोलैंड की सरकार पहले से कमज़ोर थी, सोवियत संघ से मदद का भी पहले जैसा भरोसा न था और अर्थव्यवस्था में तेज़ी से गिरावट आ रही थी। लेक वालेशा के साथ समझौता–वार्ता का एक और दौर चला और अप्रैल 1989 में जो समझौता हुआ उसमें स्वतंत्र चुनाव कराने की माँग मान ली गई। सोलिडेरिटी ने सीनेट के सभी 100 सीटों के लिए चुनाव लड़ा और उसे 99 सीटों पर सफलता मिली। अक्तूबर 1990 में पोलैंड में राष्ट्रपति पद के लिए पहली बार चुनाव हुए जिसमें एक से ज़्यादा दल हिस्सा ले सकते थे। लेक वालेशा को पोलैंड का राष्ट्रपति चुना गया।

खुद करें, खुद सीखें

- **नक्शे में पोलैंड को ढूँढ़ें। उसके चारों ओर स्थित देशों के नाम लिखें।**
- **1980 के दशक में पूर्वी यूरोप के किन-किन अन्य देशों में साम्यवादी शासन था? नक्शे में उन देशों पर रंग भरें।**
- **उन राजनैतिक गतिविधियों की सूची बनाएँ जो 1980 के दशक में पोलैंड में नहीं हो सकती थीं पर आप अपने देश में कर सकते हैं।**

लोकतंत्र की दो विशेषताएँ

हमने अभी दो तरह के सच्चे किस्सों को पढ़ा। चिले का मामला आयेंदे की लोकतांत्रिक सरकार को हटाकर पिनोशे की अलोकतांत्रिक सैनिक सरकार के कब्ज़े और फिर से लोकतंत्र की वापसी का है। पोलैंड में हमने एक अलोकतांत्रिक सरकार की जगह लोकतांत्रिक सरकार के आने का किस्सा पढ़ा।

आइए, अब इन दोनों मामलों में आई दो अलोकतांत्रिक सरकारों की तुलना करें। चिले के पिनोशे शासन और पोलैंड के साम्यवादी शासन में काफी अंतर है। चिले में सैनिक तानाशाह का राज था जबकि पोलैंड में एक पार्टी का राज था। पोलैंड की सरकार का दावा था कि वह मज़दूर वर्ग की ओर से शासन चला रही है। पिनोशे ने ऐसा कोई दावा नहीं किया और खुलेआम बड़े पूँजीपतियों को लाभ पहुँचाया। इन असमानताओं के बावजूद दोनों में कुछ समानताएँ भी थीं:

पोलैंड में एक स्वतंत्र मज़दूर संघ क्यों इतना महत्त्वपूर्ण था? मज़दूर संघों की ज़रूरत क्यों है?

© NCERT not to be republished

- लोग अपने शासकों का चुनाव या उनमें बदलाव नहीं कर सकते थे।
- किसी को अपने विचार व्यक्त करने, संगठन बनाने, विरोध करने और राजनैतिक गतिविधियों में हिस्सा लेने की वास्तविक आज़ादी न थी।

इसी प्रकार जिन तीन लोकतांत्रिक सरकारों–आयेंदे की चिले सरकार, वालेशा की पोलिश सरकार और मिशेल की चिले सरकार–का जिक्र ऊपर हुआ है, उनका भी आर्थिक और सामाजिक मामलों के प्रति नज़रिया एक जैसा नहीं रहा है। आयेंदे ने अर्थव्यवस्था को नियंत्रित और निर्देशित ढंग से चलाना पसंद किया जबकि वालेशा चाहते थे कि बाज़ार सरकारी दखल से मुक्त हों। मिशेल इस मामले में कुछ मध्यमार्गी रास्ता अपनाने वाली हैं। फिर भी इन तीनों सरकारों की कुछ विशेषताएँ समान थीं। यहाँ लोगों द्वारा चुनी गई सरकारें ही शासन चला रही थीं। बिना चुने हुए नेता या बाहर से संचालित शक्तियाँ या फ़ौज शासन नहीं चला रही थी। लोगों को विभिन्न प्रकार की बुनियादी राजनैतिक स्वतंत्रता हासिल थी।

आइए, हम इन्हीं दो कथाओं से लोकतंत्र की पहचान का एक तरीका विकसित करें। **अब तक हम जान चुके हैं कि लोकतंत्र में यह व्यवस्था रहती है कि लोग अपनी मर्जी की सरकार चुनें।** लोकतंत्र में–

- सिर्फ लोगों द्वारा चुने गए नेताओं को ही देश पर शासन करना चाहिए।
- लोगों को अभिव्यक्ति की आज़ादी, संगठन बनाने और विरोध करने की आज़ादी जरूरी है।

हम अध्याय 2 में इस प्रश्न पर दोबारा गौर करेंगे और लोकतंत्र की परिभाषा बनाएँगे। हम लोकतंत्र की कुछ विशेषताएँ भी नोट करेंगे।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

अभी तक हमने जिन पाँच सरकारों का जिक्र किया है, अनिता ने उन सबके गुण-दोषों की सूची तैयार की। पर इस सूची में घालमेल हो गया। अब उसके पास पूरी सूची तो है पर उसे याद नहीं कि ये गुण-दोष किस-किस सरकार के हैं। क्या आप नीचे दी गई सारणी में सरकारों की सूची के साथ उनके गुण-दोषों को दर्ज कर सकते हैं? याद रखिए कि इनमें से कुछ विशेषताएँ एक से ज्यादा सरकारों पर लागू होती हैं और उन सबके खाने में इनको अलग-अलग दर्ज करना होगा।

विशेषताएँ:

- सरकार की आलोचना की इजाज़त नहीं
- फ़ौज की तानाशाही
- व्यापक स्तर पर भ्रष्टाचार
- राष्ट्रपति भी राजनैतिक बंदी
- सभी उद्योगों पर सरकारी स्वामित्व
- शासक का चुनाव लोगों के द्वारा
- एक से अधिक पार्टियाँ मौजूद होना
- शासक का चुनाव लोगों के द्वारा नहीं
- लापता होते लोग
- लोगों को बुनियादी राजनैतिक आज़ादी प्राप्त
- घरेलू मामले में विदेशी दखल

चिले आयेंदे	चिले पिनोशे	चिले मिशेल	पोलैंड जारूज़ेल्स्की	पोलैंड लेक वालेशा

not to be republished © NCERT

1.2 लोकतंत्र के तीन नक्शे

ऊपर हमने जो कथाएँ पढ़ी हैं, बीसवीं सदी के दुनिया के इतिहास में वैसी कथाएँ भरी पड़ी हैं– लोकतंत्र आने की, लोकतंत्र को मिलने वाली चुनौतियों की, सैनिक तख्तापलटों की, लोकतंत्र बहाल करने के लिए लोगों के संघर्ष की। लोकतंत्र की तरफ़ जाने और उसके रास्ते में आने वाली परेशानियों में क्या कोई स्पष्ट संकेत या प्रवृत्ति भी दिखाई देती है? तो आइए हमने लोकतंत्र की जिन मूल विशेषताओं का जिक्र पहले किया था उनके आधार पर दुनिया के विभिन्न देशों में लोकतांत्रिक व्यवस्था की पहचान करें।

यहाँ दिए गए नक्शे यही काम करते हैं। नीचे दिए गए तीनों नक्शों को गौर से देखिए और यह जानने की कोशिश कीजिए कि बीसवीं सदी में जिस तरह से लोकतांत्रिक व्यवस्था का विस्तार और विकास हुआ है उसमें कोई स्पष्ट धारा या प्रवृत्ति दिखाई देती है या नहीं। पहले नक्शे में द्वितीय विश्वयुद्ध के थोड़े ही समय बाद 1950 तक लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था वाले देशों को दर्शाया गया है। इस नक्शे में ऐसे देश भी शामिल हैं जहाँ सन् 1900 तक लोकतांत्रिक व्यवस्था कायम हो चुकी थी। दूसरा नक्शा सन् 1975 का है। तब तक दुनिया के अधिकांश उपनिवेशों को राजनैतिक आज़ादी मिल गई थी। आखिर में हम एक और कदम आगे बढ़कर इक्कीसवीं सदी की शुरूआत में सन् 2000 का नक्शा देखते हैं।

इन नक्शों को देखते हुए आइए हम खुद से कुछ सवाल पूछें। बीसवीं सदी में लोकतंत्र की यात्रा कैसी रही? इसके विस्तार में क्या कोई स्पष्ट प्रवृत्ति दिखाई देती है? यह विस्तार कब हुआ और किस क्षेत्र में हुआ?

नक्शा 1.1 : 1900 और 1950 के बीच लोकतांत्रिक सरकारें

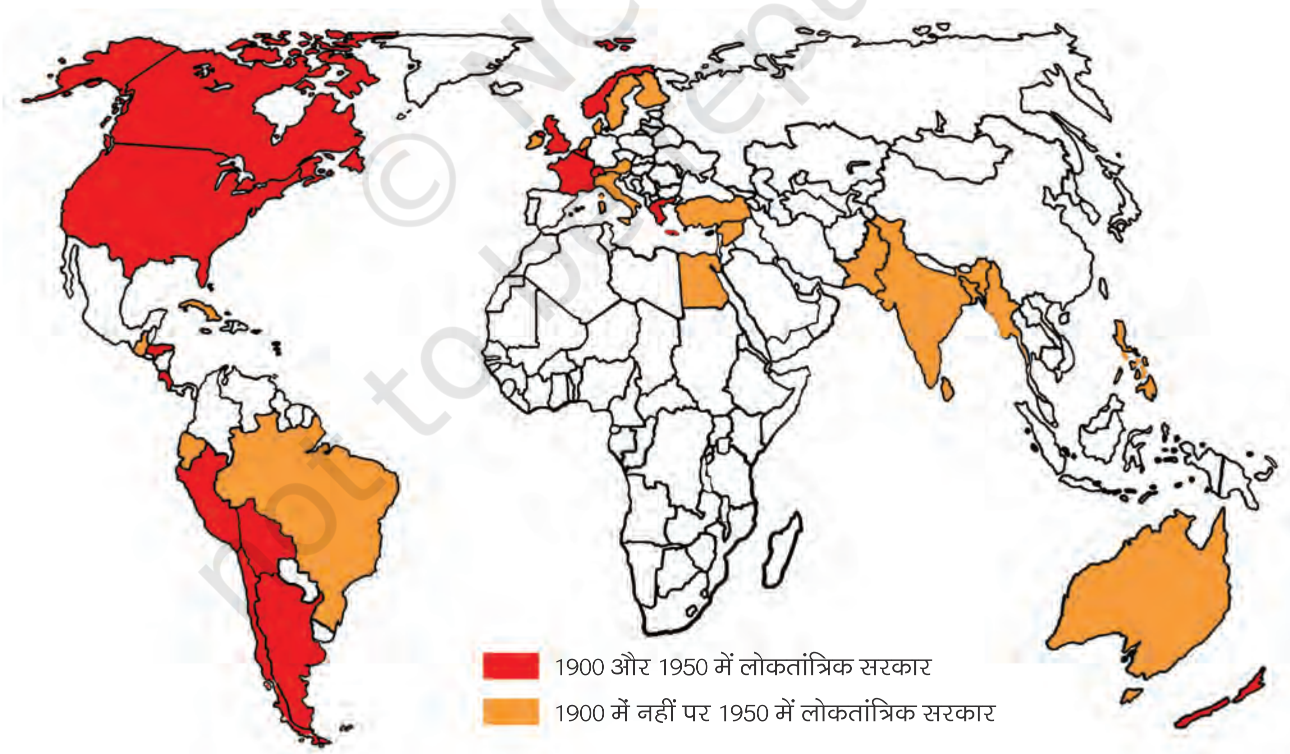

नक्शा 1.2 : 1975 में लोकतांत्रिक सरकारें

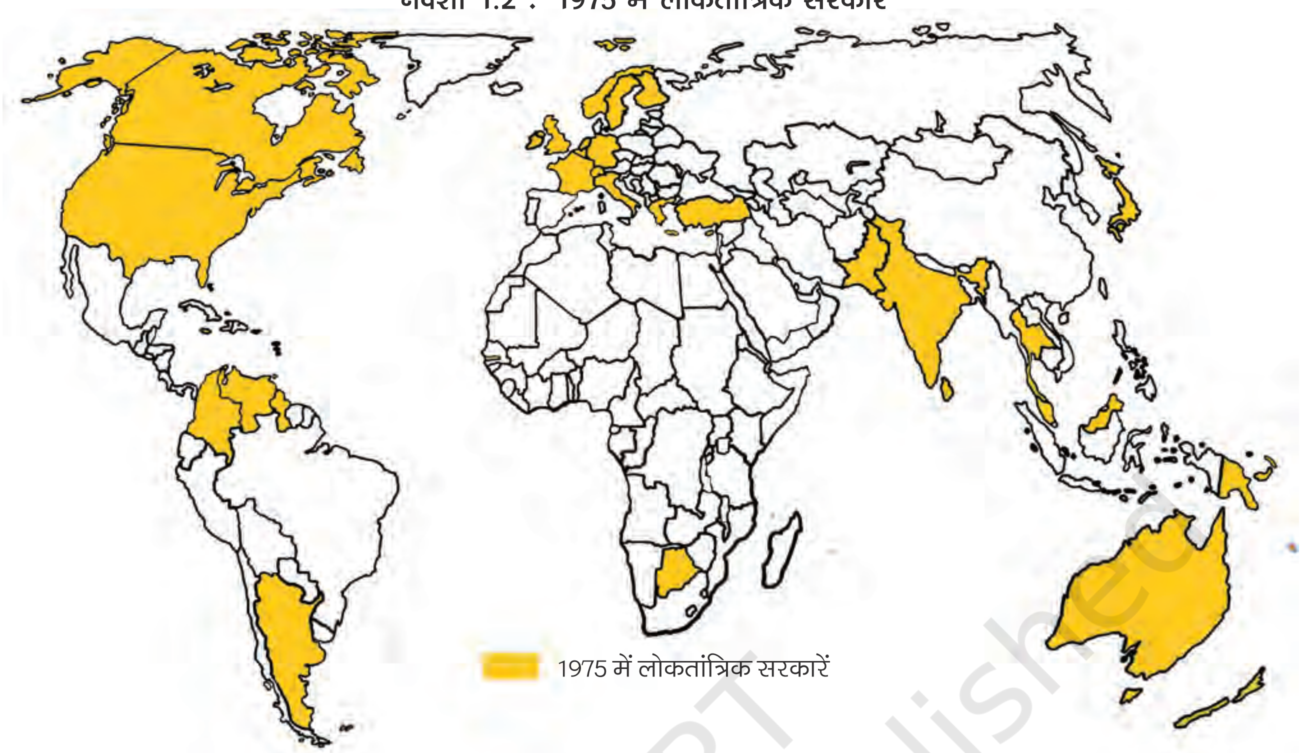

नक्शा 1.3 : 2000 में लोकतांत्रिक सरकारें

स्रोत: इन नक्शों के लिए ऐतिहासिक आँकड़े मेरीलैंड विश्वविद्यालय के पोलिटी IV प्रोजेक्ट से एकत्रित किए गए हैं। ये आँकड़े लोकतंत्र की तीन बुनियादी विशेषताओं–नीतियों और नेताओं को चुनने में लोगों की आज़ादी, कार्यकारी अधिकारों पर नियंत्रण और नागरिक आज़ादी की गारंटी को आधार मानकर इकट्ठा किए गए हैं। हमने यहाँ लोकतंत्र की मौजूदगी के लिए 'पोलिटी' के धनात्मक स्कोर का उपयोग किया है। कुछ मामलों में डाटासेट के स्कोर में बदलाव भी किया गया है। विस्तार के लिए देखें। http://www.cidcm.umd.edu

इन नक्शों को पढ़ने से जो मुख्य मुद्दे उभरे हैं, आइए उन्हें संक्षेप में समेट लें। हर बिंदु के बाद जो सवाल उभरेंगे उनका जवाब ढूँढ़ने के लिए आपको बार-बार नक्शों को देखना होगा।

- **पूरी बीसवीं सदी में लोकतंत्र का विस्तार हुआ है।** क्या यह कहना सही होगा कि इन नक्शों में हर बिंदु पर यह दिखता है कि काल के पिछले पड़ाव की तुलना में लोकतांत्रिक व्यवस्था मानने वाले देशों की संख्या बढ़ती गई है?
- **लोकतंत्र का विस्तार दुनिया के सभी हिस्सों में एक समान नहीं हुआ है। यह पहले कुछ हिस्सों में स्थापित हुआ और फिर इसका विस्तार अन्य क्षेत्रों में हुआ।** 1900 और 1950 में किस महादेश के सबसे ज़्यादा देशों में लोकतांत्रिक व्यवस्थाएँ थीं? और किस महादेश में तब लोकतंत्र के बारे में बहुत-से लोग जानते भी नहीं थे?
- **आज दुनिया के अधिकांश देशों में लोकतंत्र है पर अभी भी काफ़ी बड़े हिस्से ऐसे हैं जहाँ लोकतंत्र नहीं है।** सन् 2000 तक लोकतांत्रिक व्यवस्था न अपनाने वाले ज़्यादातर देश दुनिया के किन-किन हिस्सों में अवस्थित हैं?

नक्शे को देखते हुए बताएँ कि कौन-सा दौर लोकतंत्र के विस्तार के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण था और क्यों?

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इन नक्शों के आधार पर तीन देशों तक की पहचान करें जहाँ नीचे दिए वर्षों में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाएँ थीं और फिर नीचे दी गई तालिका को भरें।

वर्ष	अफ्रीका	एशिया	यूरोप	लातिनी अमेरिका
1950				
1975				
2000				

- नक्शा 1.1 से ऐसे देशों की पहचान कीजिए जहाँ सन् 1900 से 1950 के बीच लोकतंत्र था।
- नक्शा 1.1 और 1.2 से कुछ ऐसे देशों की पहचान कीजिए जहाँ 1950 से 1975 के बीच लोकतंत्र आया।
- नक्शा 1.2 और 1.3 से यूरोप के कुछ ऐसे देशों की पहचान कीजिए जो सन् 1975 और 2000 में लोकतांत्रिक थे।
- लातिनी अमेरिका के कुछ ऐसे देशों की पहचान कीजिए जिन्होंने 1975 के बाद लोकतंत्र अपना लिया।
- कुछ ऐसे देशों की सूची बनाइए जो सन् 2000 तक भी लोकतांत्रिक नहीं हुए थे।

1.3 लोकतंत्र के विस्तार के विभिन्न चरण

शुरुआत

इन नक्शों से हमें बीसवीं सदी के पहले के घटनाक्रम का कुछ भी पता नहीं चलता। आधुनिक लोकतंत्र की कहानी कम-से-कम दो सदी पहले शुरु हुई। आपने अपनी इतिहास की पुस्तक में 1789 की फ्रांसीसी क्रांति के बारे में जरूर पढ़ा होगा। इस जनविद्रोह ने फ्रांस में टिकाऊ और पक्के लोकतंत्र की स्थापना नहीं की थी। पूरी उन्नीसवीं सदी भर फ्रांस में बार-बार लोकतंत्र को उखाड़ फेंका गया और बार-बार इसे बहाल किया गया। लेकिन फ्रांसीसी क्रांति ने पूरे यूरोप में जगह-जगह पर लोकतंत्र के लिए संघर्षों की प्रेरणा दी।

ब्रिटेन में लोकतंत्र की तरफ कदम उठाने की शुरूआत फ्रांसीसी क्रांति से काफ़ी पहले ही हो गई थी। लेकिन वहाँ प्रगति की रफ़्तार काफ़ी कम थी। अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी में हुए राजनैतिक घटनाक्रमों ने राजशाही और सामंत वर्ग की शक्ति में कमी कर दी थी। फ्रांसीसी क्रांति के आसपास ही उत्तर अमेरिका में स्थित

© NCERT not to be republished

अधिकांश देशों में महिलाओं को पुरुषों की तुलना में काफी देर से मताधिकार क्यों मिला? भारत में ऐसा क्यों नहीं हुआ?

ब्रिटिश उपनिवेशों ने 1776 में खुद को आज़ाद घोषित कर दिया था। अगले कुछ ही वर्षों में इन उपनिवेशों ने साथ मिलकर संयुक्त राज्य अमेरिका अर्थात् आधुनिक अमेरिका का गठन किया। 1787 में उन्होंने एक लोकतांत्रिक संविधान को मंजूर किया। लेकिन इस व्यवस्था में भी मतदान का अधिकार पुरूषों तक सीमित था।

उन्नीसवीं सदी में लोकतंत्र के लिए होने वाले संघर्ष अकसर राजनैतिक समानता, आजादी और न्याय जैसे मूल्यों को लेकर ही होते थे। एक मुख्य माँग यह रहा करती थी कि सभी वयस्क नागरिकों को मतदान का अधिकार हो। यूरोप के जो देश तब लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपनाते जा रहे थे वे भी सभी लोगों को वोट देने की अनुमति नहीं देते थे। कुछ देशों में केवल उन्हीं लोगों को वोट का अधिकार था, जिनके पास सम्पत्ति थी। अकसर महिलाओं को तो वोट का अधिकार मिलता ही नहीं था। संयुक्त राज्य अमेरिका में पूरे देश में अश्वेतों को 1965 तक मतदान का अधिकार नहीं था। लोकतंत्र के लिए संघर्ष करने वाले लोग सभी वयस्कों– औरत या मर्द, अमीर या गरीब, श्वेत या अश्वेत–को मतदान का अधिकार देने की माँग कर रहे थे। इसे 'सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार' या 'सार्वभौम मताधिकार' कहा जाता है। यहाँ दिए गए बॉक्स में यह बताया गया है कि दुनिया के किस देश के कब सार्वभौमिक मताधिकार दिया गया।

सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार का काल क्रम

1893	न्यूज़ीलैंड
1917	रूस
1918	जर्मनी
1919	नीदरलैंड
1928	ब्रिटेन
1931	श्रीलंका
1934	तुर्की
1944	फ्रांस
1945	जापान
1950	भारत
1951	अर्जेंटीना
1952	यूनान
1955	मलेशिया
1962	आस्ट्रेलिया
1965	अमेरिका
1978	स्पेन
1994	दक्षिण अफ्रीका

नोटः इस सूची में उन देशों के नाम नहीं हैं जहाँ मताधिकार प्रभावी रूप से सभी नागरिकों को उपलब्ध नहीं है या जहाँ ऐसा अधिकार देने के बाद उसे वापस ले लिया गया।

जैसा कि आप देख सकते हैं सन् 1900 तक न्यूज़ीलैंड ही अकेला ऐसा देश था जहाँ के हर वयस्क व्यक्ति को मतदान का अधिकार प्राप्त था। लेकिन अगर आप नक्शे पर गौर करेंगे तो पाएँगे कि बीसवीं सदी के शुरू में अनेक दूसरे देशों को भी 'लोकतांत्रिक' बताया गया है। तब इन देशों में लोगों की एक बड़ी संख्या सरकार का चुनाव करती थी। इन लोगों में अधिकांश पुरुष ही होते थे। यहाँ अनेक तरह की राजनैतिक आज़ादी भी मिल गई थी। यूरोप, उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका के यही देश आधुनिक लोकतंत्र का पहला समूह बनाते हैं।

उपनिवेशवाद का अंत

काफी लंबे समय तक एशिया और अफ्रीका के अधिकांश देश यूरोपीय राष्ट्रों के उपनिवेश बने रहे। इन परतंत्र देशों के लोगों को आज़ादी पाने के लिए संघर्ष करना पड़ा। यह लड़ाई अपने औपनिवेशिक शासकों से आज़ादी की ही नहीं थी, इसमें अपना नेता खुद चुनने की इच्छा भी शामिल थी। हमारा देश उन थोड़े से परतंत्र देशों में एक था जहाँ लोगों ने औपनिवेशिक शासन से

© NCERT not to be republished
2018-19

मुक्ति के लिए राष्ट्रीय संघर्ष किया। इनमें से अनेक देशों ने दूसरे विश्वयुद्ध के तत्काल बाद लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था अपना ली। भारत ने 1947 में आज़ादी हासिल की और एक गुलाम देश से लोकतांत्रिक देश बनने की राह पर चल पड़ा। यहाँ आज तक लोकतंत्र बना हुआ है और फल-फूल रहा है। उपनिवेश रहे अधिकांश दूसरे देशों का अनुभव अच्छा नहीं रहा है।

पश्चिमी अफ्रीका के देश घाना का उदाहरण उपनिवेश रहे देशों के सामान्य अनुभव को बहुत अच्छी तरह दर्शाता है। यह ब्रिटिश उपनिवेश था और तब इसका नाम गोल्ड कोस्ट था। यह 1957 में आज़ाद हुआ। यह अफ्रीका के सबसे पहले आज़ादी पाने वाले देशों में एक था। इससे अनेक अफ्रीकी देशों को आज़ादी के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा मिली। एक सुनार के पुत्र और शिक्षक रहे वामे एनक्रूमा ने देश की आज़ादी की लड़ाई में सक्रिय भूमिका निभाई थी।

आज़ादी के बाद एनक्रूमा घाना के पहले प्रधानमंत्री और फिर राष्ट्रपति बने। वे जवाहर लाल नेहरू के मित्र और अफ्रीका में लोकतंत्रवादियों के लिए एक प्रेरणा पुरुष थे। लेकिन वे नेहरू के नक्शे-कदम पर नहीं चल पाए। उन्होंने अपने आपको आजीवन राष्ट्रपति के रूप में चुनवा लिया। लेकिन थोड़े समय बाद ही 1966 में सेना ने उनका तख्तापलट कर दिया। घाना की तरह ही अधिकांश अफ्रीकी देशों का रिकॉर्ड कमो-बेश इसी तरह का रहा। जिन्होंने आज़ादी के बाद लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था अपनाई थी वहाँ लोकतंत्र लंबे समय तक नहीं चल पाया।

खुद करें, खुद सीखें

- **एटलस में घाना को ढूँढ़ें और फिर पिछले हिस्से में दिए गए तीनों नक्शों पर घाना की जगह बताएँ। क्या सन् 2000 में घाना में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था थी?**
- **किसी को जीवन भर के लिए राष्ट्रपति चुनने को क्या आप उचित मानते हैं या हर कुछ वर्षों की निश्चित अवधि के बाद चुनाव कराना बेहतर है?**

हाल का दौर

लोकतंत्र की दिशा में ज़्यादा तेज़ी से कदम उठाने का सिलसिला लातिनी अमेरिका के अनेक देशों में लोकतांत्रिक व्यवस्था की बहाली के साथ 1980 के बाद शुरु हुआ। 1990 के दशक में सोवियत संघ के बिखराव के साथ यह प्रक्रिया और तेज़ हुई। पोलैंड वाली कथा से हमने जाना कि सोवियत संघ का अपने पड़ोसी, पूर्वी-यूरोपीय साम्यवादी देशों पर नियंत्रण था। 1989-90 के दौर में पोलैंड और अनेक दूसरे देश सोवियत नियंत्रण के बाहर हो गए। उन्होंने लोकतांत्रिक शासन प्रणाली अपनाई। आखिरकार 1991 में सोवियत संघ खुद भी बिखर गया। सोवियत संघ में कुल 15 गणराज्य थे। ये सभी स्वतंत्र देशों के रूप में सामने आए। इनमें से अधिकांश ने लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था ही अपनाई। पूर्वी यूरोप पर से सोवियत नियंत्रण की समाप्ति और सोवियत संघ के टूटने का दुनिया के राजनैतिक नक्शे पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा।

घाना की राजधानी अकरा में बना एनक्रूमा स्मारक पार्क। यह स्मारक एनक्रूमा की मौत के बीस साल बाद 1992 में बना। इसमें इतनी देरी का कारण क्या हो सकता है?

© देव ले, विकीपेडिया, जी एन यू फ्री डाक्यूमेंटेशन लाइसेंस

© NCERT not to be republished

इस अवधि में भारत के पड़ोस में भी काफ़ी बड़े बदलाव हुए। 1990 के दशक में ही पाकिस्तान और बांग्लादेश में सैनिक शासन की जगह लोकतंत्र का आगमन हुआ। नेपाल में राजा ने अपने अनेक अधिकार, चुने हुए प्रतिनिधियों की सरकार को सौंपे और खुद संवैधानिक प्रमुख बने रहे। लेकिन ये बदलाव स्थायी नहीं थे। 1999 में जनरल मुशर्रफ़ ने पाकिस्तान में फिर से सैनिक शासन कायम कर लिया। 2005 में नेपाल के नए राजा ने चुनी हुई सरकार को बर्खास्त कर दिया और पिछले दशक में लोगों को दी गई राजनैतिक आज़ादी को समाप्त कर दिया। लेकिन 2006 में फिर लोकतांत्रिक शक्तियों की विजय हुई। राजा को संसद की बैठक बुलानी पड़ी और संसद ने राजा की शक्तियों को घटाकर उसे सिर्फ़ नाममात्र का शासक बना दिया। लेकिन 2008 में पाकिस्तान फिर से लोकतांत्रिक बना और नेपाल राजशाही को खत्म करने के बाद एक लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में उभरा।

इस अवधि में नित नए देशों में लोकतांत्रिक व्यवस्था कायम होने या उसकी चाह बढ़ने की प्रवृत्ति ही प्रमुख रही। यह दौर अभी ज़ारी है। सन् 2016 तक करीब 140 देशों में बहुदलीय प्रणाली के तहत चुनाव कराए जाते थे। यह संख्या पहले कभी भी इतनी अधिक नहीं रही। पहले अलोकतांत्रिक रहे 80 से ज़्यादा देश 1980 के बाद से लोकतांत्रिक व्यवस्था की तरफ़ बढ़े हैं। लेकिन, आज भी अनेक देशों में लोग न तो अपने विचारों को मुक्त भाव से व्यक्त कर सकते हैं और न ही वे अपना नेता चुन सकते हैं। वे अपने वर्तमान और भविष्य के बारे में बड़े फ़ैसले भी नहीं ले सकते।

ऐसा ही एक देश है म्यांमार, जिसे पहले बर्मा कहा जाता था। यह 1948 में ही औपनिवेशिक शासन से आज़ाद हुआ और इसने लोकतंत्र को अपनाया। लेकिन 1962 में सैनिक तख्तापलट से लोकतंत्र का अंत हो गया। 1990 में लगभग 30 वर्षों बाद पहली बार चुनाव कराए गए। आंग सान सू ची की अगुवाई वाली नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी (एनएलडी) ने चुनाव जीते। पर म्यांमार के फ़ौजी शासकों ने सत्ता छोड़ने से इंकार कर दिया और चुनाव परिणामों को मान्यता नहीं दी। बल्कि

कार्टून बूझें

यह कार्टून 2005 में छपा जब आंग सान सू ची 60 वर्ष की हुईं। इस कार्टून के जरिए कार्टूनिस्ट क्या कहना चाहता है?

© स्टेफन पे, थाइलैंड, केगल कार्टून्स।

उन्होंने सूची समेत चुने हुए लोकतंत्र समर्थक नेताओं को गिरफ़्तार कर जेल में डाल दिया या उनके घर में ही नज़रबंद कर दिया। बहुत छोटी-छोटी राजनैतिक गतिविधियों के लिए भी लोगों को पकड़ कर जेल की सज़ा दी गई। यहाँ सरकार के खिलाफ़ सार्वजनिक रूप से बोलने या बयान जारी करने वाले किसी भी व्यक्ति को बीस वर्ष तक की जेल की सज़ा हो सकती है। म्यांमार की फ़ौजी सरकार की ज़्यादतियों से तंग आकर वहाँ के 6 से 10 लाख लोगों ने अपना घर-बार छोड़ दिया है और दूसरी जगहों पर शरणार्थी बनकर रह रहे हैं।

नज़रबंदी की सज़ा झेलने के बावजूद सू ची ने लोकतंत्र के लिए अपना अभियान जारी रखा है। उनके अनुसार

"बर्मा में लोकतंत्र की मुहिम वहाँ के लोगों का विश्व समुदाय के स्वतंत्र और बराबरी के सदस्य के रूप में पूर्ण और सार्थक जीवन जीने का संघर्ष है।"

उनके संघर्ष को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता मिली है। उन्हें नोबल शांति पुरस्कार भी मिला है। अंत में उनके नेतृत्व में एनएलडी ने 2015 के ऐतिहासिक चुनाव लड़े और एक लोकतांत्रिक गणराज्य स्थापित किया।

खुद करें, खुद सीखें

- एटलस में म्यांमार को ढूँढ़िए। भारत के कौन-कौन से राज्य इस देश की सीमा से लगे हैं?
- आंग सान सू ची के जीवन पर संक्षिप्त निबंध लिखें।
- म्यांमार में लोकतंत्र के लिए संघर्ष से संबंधित अखबार की खबरों को जमा करें।

1.4 विश्व स्तर पर लोकतंत्र

लोकतंत्र के विस्तार के विभिन्न चरणों की पढ़ाई पूरी करने के बाद एक अध्यापक ङ्गसह सर अपने छात्रों से इसके बारे में संक्षेप में बताने को कहते हैं। यह बातचीत कुछ इस प्रकार होती है:

फरीदा: हमने जाना कि लोकतंत्र का विस्तार अधिक से अधिक इलाकों में और दुनिया भर के देशों में हो रहा है।

राजेश: हाँ, हम आज पहले से बेहतर दुनिया में रह रहे हैं। ऐसा लगता है कि हम विश्व लोकतंत्र की तरफ़ बढ़ रहे हैं।

सुष्मिता: विश्व-लोकतंत्र! क्या बात कर रहे हो? मैंने टीवी में देखा कि बिना किसी उचित कारण के अमेरिका ने इराक पर हमला कर दिया। इराक के लोगों की राय कभी भी नहीं जानी गई। तुम इसे किस तरह विश्व लोकतंत्र कह सकते हो?

फरीदा: मैं विभिन्न देशों के बीच आपसी संबंधों की बात नहीं कर रही हूँ। मैं इतना भर कह रही हूँ कि अधिक से अधिक देश लोकतांत्रिक व्यवस्था अपनाते जा रहे हैं।

राजेश: लेकिन दोनों में अंतर क्या है? अगर ज़्यादा से ज़्यादा देश लोकतंत्र को अपना रहे हैं तो क्या इसका यह अर्थ नहीं है कि दुनिया ज़्यादा लोकतांत्रिक हो रही है? आखिर इराक युद्ध भी तो उस देश में लोकतंत्र कायम करने के लिए ही हुआ।

सुष्मिता: नहीं, मुझे तो बिल्कुल ऐसा नहीं लगता।

सिंह सर: मुझे लगता है कि यहाँ हम दो एकदम अलग-अलग चीज़ों को मिलाकर चर्चा कर रहे हैं। फरीदा ने आज की दुनिया के विभिन्न देशों में लोकतांत्रिक शासन कायम होने की बात कही। राजेश और सुष्मिता के बीच किसी अन्य मुद्दे पर मतभेद है। यह मामला विभिन्न देशों के बीच आपसी संबंधों का है। राजेश, यह संभव है कि एक देश के लोगों द्वारा लोकतांत्रिक ढंग से चुने हुए शासक अन्य देशों पर दबदबा कायम करना चाहें।

क्या कोई वैश्विक सरकार होनी चाहिए? अगर हाँ तो उसका चुनाव किसे करना चाहिए और उसके पास क्या अधिकार होने चाहिए?

© NCERT not to be republished

सुष्मिताः जी सर, इराक युद्ध का मामला ठीक यही है।

सुरिंदरः मुझे कुछ भी साफ़ समझ नहीं आता। हम वैश्विक स्तर पर लोकतंत्र की बात कैसे कर सकते हैं? क्या कोई वैश्विक सरकार है? विश्व का राष्ट्रपति या प्रमुख कौन है? अगर कोई सरकार ही नहीं है तो वह लोकतांत्रिक या गैर-लोकतांत्रिक कैसे हो सकती है?

क्या संयुक्त राष्ट्र में स्थायी सदस्य देशों को वीटो का अधिकार होना चाहिए?

अंतर्राष्ट्रीय संगठन

इस बातचीत में हम जिस सवाल पर आए हैं, आइए उस पर भी विचार करें। क्या पूरी दुनिया में लोकतांत्रिक देशों की संख्या बढ़ने से देशों के बीच आपसी संबंध भी स्वतः लोकतांत्रिक बन जाएँगे? लेकिन इस सवाल पर विचार करने से पहले सुरिंदर द्वारा उठाए मुद्दे पर गौर करें। सुरिंदर का कहना है कि एक भारत की सरकार है, एक अमेरिका की सरकार है फिर, और भी देशों की सरकारें हैं। लेकिन दुनिया की कोई सरकार नहीं है। कोई ऐसी सरकार नहीं है जिसके द्वारा बनाए गए कानून दुनिया भर के लोगों पर लागू होते हों। अगर ऐसी कोई सरकार नहीं है, अगर कोई शासक नहीं है–कोई शासित नहीं है तो हम लोकतंत्र की दो बुनियादी विशेषताओं को यहाँ कैसे लागू करेंगे? आपको याद होगा कि ये दो विशेषताएँ हैं कि शासकों का चुनाव लोग करेंगे और लोगों को बुनियादी राजनैतिक आज़ादी होगी।

सुरिंदर की शंका सामान्य ढंग से ठीक है पर हम यह नहीं कह सकते कि यहाँ लोकतंत्र का सवाल नहीं उठता। कोई एक विश्व सरकार नहीं है, पर दुनिया में ऐसी कई संस्थाएँ हैं जो आंशिक रूप में ऐसी सरकार के कुछ काम करती हैं। ये संगठन विभिन्न देशों और लोगों पर उस तरह का नियंत्रण नहीं रख सकते जैसा कि कोई सरकार रख सकती है, लेकिन वे ऐसे नियम बनाते हैं जो सरकारों के कामकाज की सीमा तय करते हैं–उनके लिए दिशा-निर्देश देते हैं। इन बिंदुओं पर गौर कीजिएः

- किसी एक देश की सीमा में न आने वाले समुद्री क्षेत्र के कार्य-व्यापार को संचालित करने वाले कायदे-कानून कौन बनाता है? या सभी देशों को प्रभावित करने वाले पर्यावरण के नुकसान रोकने संबंधी नियम-कानून कौन बनाता है? इन सवालों के बारे में **संयुक्त राष्ट्र** ने अनेक नियम बनाए हैं जो अधिकांश देशों पर लागू होते हैं। संयुक्त राष्ट्र दुनिया भर के देशों का एक वैश्विक संगठन है जो अंतर्राष्ट्रीय कानून, सुरक्षा, आर्थिक निकाय और सामाजिक समता के मामले में परस्पर सहयोग स्थापित करने में मदद करता है। संयुक्त राष्ट्र के महासचिव इसके मुख्य प्रशासनिक अधिकारी हैं।

कार्टून बूझें

© एंजल बोलिगन, यूनिवर्सल, मैक्सिको, केगल कार्टूंस।

यह कार्टून 2005 में मैक्सिको में प्रकाशित हुआ था और इसका शीर्षक थाः 'अंतरराष्ट्रीय खेल'। कार्टूनिस्ट यहाँ किस खेल की बात कर रहा है? चित्र में गेंद किस चीज का प्रतीक है? खिलाड़ी कौन-कौन से हैं?

- जब कोई देश दूसरे देश पर गलत ढंग से हमला करता है तब क्या होता है? संयुक्त राष्ट्र की ही एक संस्था, **संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद्** के जिम्मे विभिन्न देशों के बीच शांति और सुरक्षा बनाए रखने की ज़िम्मेवारी है। यह एक अंतर्राष्ट्रीय शांति दस्ता बनाकर गलती करने वाले के खिलाफ़ कार्रवाई कर सकती है।
- जब सरकारों को पैसों की ज़रूरत होती है तो उन्हें उधार कौन देता है? यह काम **अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष** करता है। **विश्व बैंक** भी सरकारों को ऋण देता है। उधार देने के पहले ये संस्थाएँ संबद्ध सरकार से अपना हिसाब-किताब दिखाने को कहती है और उनकी आर्थिक नीतियों में बदलाव का निर्देश देती हैं।

क्या ये निर्णय लोकतांत्रिक हैं ?

इस प्रकार हम देखते हैं कि विश्व स्तर पर अनेक ऐसी संस्थाएँ हैं जो कुछ-कुछ ऐसे काम करती हैं जिन्हें कोई भी विश्व-सरकार करती। लेकिन हमें यह जानने की जरूरत भी है कि ये संस्थाएँ खुद कितनी लोकतांत्रिक हैं और इस बात को जाँचने का सबसे अच्छा पैमाना यह है कि खुद को प्रभावित करने वाले फ़ैसलों में इन संस्थाओं के सदस्य देशों को किस हद तक स्वतंत्र और बराबर की भागीदारी मिलती है? इस परिप्रेक्ष्य में कुछ वैश्विक संस्थाओं के संगठन और कामकाज पर नज़र डालनी चाहिए।

संयुक्त राष्ट्र के सभी 193 सदस्य देशों (1 सितंबर 2012 की स्थिति) को संयुक्त राष्ट्र महासभा में एक-एक वोट मिला हुआ है। संयुक्त राष्ट्र महासभा की बैठक सदस्य देश के प्रतिनिधियों द्वारा चुने गए अध्यक्ष की अगुवाई में हर साल चलती है। महासभा का स्वरूप काफी कुछ संसद की तरह है जिसमें सभी तरह की चर्चाएँ होती हैं। इस हिसाब से संयुक्त राष्ट्र बहुत ही लोकतांत्रिक संगठन लगेगा। लेकिन विभिन्न देशों के बीच टकराव की स्थिति में महासभा कोई कार्रवाई नहीं कर सकती।

संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् ऐसे महत्त्वपूर्ण फैसले लेती है। इसके कुल पंद्रह सदस्य होते हैं। परिषद् के पाँच स्थायी सदस्य हैं–अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन। बाकी दस सदस्यों का चुनाव आम सभा दो वर्ष के लिए करती है। पर असली ताकत पाँच स्थायी सदस्यों के हाथ में ही होती है। स्थायी सदस्य ही, खासकर अमेरिका, संयुक्त राष्ट्र के कामकाज पर होने वाले खर्च का ज़्यादातर भाग वहन करते हैं। इन स्थायी सदस्यों को वीटो अधिकार मिला है। अगर कोई भी स्थायी सदस्य देश इस अधिकार का प्रयोग करता है तो सुरक्षा परिषद् उसकी मर्जी के खिलाफ़ फैसला नहीं कर सकती। इसी के चलते संयुक्त राष्ट्र को ज्यादा लोकतांत्रिक बनाने की माँग करने वाले लोगों और देशों की संख्या बढ़ती जा रही है।

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष दुनिया के किसी भी देश को उधार और ऋण देने वाली सबसे बड़ी संस्था है। पर इसके सभी 189 सदस्य देशों (12 अप्रैल 2016 की स्थिति) को समान मताधिकार प्राप्त नहीं है। हर देश इस कोष में जितने धन का योगदान करता है उसी अनुपात में उसके वोट का वजन भी तय होता है। मुद्रा कोष के 40% से अधिक वोटों पर सिर्फ सात देशों (अमेरिका, जापान, जर्मनी, फ्रांस, यूके, इटली और कनाडा) का अधिकार है। बाकी 182 सदस्य इस अंतर्राष्ट्रीय संगठन के फ़ैसलों को ज़्यादा प्रभावित करने की स्थिति में नहीं हैं। विश्व बैंक में भी वोटिंग की ऐसी ही प्रणाली है। विश्व बैंक का अध्यक्ष हमेशा कोई

2018-19

खुद करें, खुद सीखें

- संयुक्त राष्ट्र के इतिहास और उसके विभिन्न संगठनों के बारे में ज्यादा जानकारी जुटाएँ।
- विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व व्यापार संगठन के फ़ैसलों से जुड़ी खबरें इकट्ठी करें।

अमेरिकी नागरिक ही रहा है जिसका मनोनयन अमेरिकी वित्त मंत्री करते हैं।

फ़ैसले लेने के इन तरीकों की तुलना उन लोकतांत्रिक तरीकों से करें जिनकी चर्चा हम इस अध्याय में करते रहे हैं। जरा सोचिए, आप उस देश के बारे में क्या कहेंगे जहाँ कुछ लोगों के लिए सरकार में मंत्री का पद स्थायी रूप से बना रहे और जिन्हें पूरे संसद द्वारा लिए गए फ़ैसले को भी रोकने का अधिकार हो? या फिर आप उस संसद के बारे में क्या कहेंगे जहाँ के सिर्फ पाँच फीसदी सदस्य ही बहुमत की राय को पलट देने या रोक देने में सक्षम हों? क्या आप इनको लोकतांत्रिक कहेंगे? राष्ट्रीय सरकारों के लोकतांत्रिक होने न होने के लिए हम जिस सरल कसौटी का प्रयोग करते हैं, अधिकांश वैश्विक संस्थाएँ उस पर खरी नहीं उतरतीं।

अगर वैश्विक संस्थाएँ लोकतांत्रिक नहीं हैं तो क्या वे कम-से-कम पहले की तुलना में ज्यादा लोकतांत्रिक हो रही हैं? इस बात के भी कोई बहुत उत्साहवर्द्धक संकेत नहीं दिखते। दरअसल विभिन्न राष्ट्र तो पहले की तुलना में ज्यादा लोकतांत्रिक हो रहे हैं पर अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के लोकतांत्रिक चरित्र में कमी आती जा रही है। बीस साल पहले दुनिया में दो महाशक्तियाँ थीं—अमेरिका और सोवियत संघ। इन दो महाशक्तियों और उनके पीछे रहने वाले देशों के समूहों की प्रतिद्वंद्विता और टकराव से इन सभी वैश्विक संगठनों का शक्ति संतुलन

© पैट्रिक चेपट, इंटरनेशनल हैरल्ड ट्रिब्यून, केगल कार्टून्स।

कार्टून बूझें

वाल्फोविज़ अमेरिका के रक्षा मंत्रालय में, जिसे आम बोलचाल में पेंटागन कहते हैं, एक बड़े अधिकारी थे। वे इराक पर हमला करने के प्रबल पक्षधर थे। यह कार्टून उन्हें विश्व बैंक का अध्यक्ष बनाने पर टिप्पणी करता है। यह कार्टून विश्व बैंक और अमेरिका के संबंधों के बारे में हमें क्या बताता है?

ज़्यादा बेहतर रहा करता था। सोवियत संघ के पतन के बाद अमेरिका दुनिया की एकमात्र महाशक्ति लगता है। यह अमेरिकी प्रभुत्व अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के कामकाज को प्रभावित करता है। यह कहने का ऐसा अर्थ नहीं निकालना चाहिए कि वैश्विक लोकतंत्र की ज़रूरत नहीं है या इस दिशा में कोई भी प्रगति ही नहीं हो रही है। ज़रूरत तो उन लोगों की तरफ़ से पैदा की जा रही है जो विभिन्न कारणों से आज एक-दूसरे के ज़्यादा संपर्क में आ रहे हैं। पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न देशों के लोग अपनी सरकारों की मदद के बिना एक-दूसरे के ज़्यादा संपर्क में आए हैं। उन्होंने युद्ध और दुनिया पर कुछ देशों या व्यापारिक कंपनियों के प्रभुत्व के खिलाफ़ वैश्विक संगठन बनाए हैं। किसी भी देश में लोकतंत्र जिस तरह लोगों के संघर्षों और पहल से मज़बूत हुआ है वैसे ही वैश्विक मामलों में यह पहल भी लोगों के संघर्षों से ही आगे बढ़ी है।

यहाँ विश्व-लोकतंत्र को मजबूत करने के लिए कुछ सुझाव हैं। क्या आप इन बदलावों का समर्थन करते हैं? क्या ये बदलाव हो सकते हैं? प्रत्येक सुझाव के लिए अपने तर्क दीजिए।

- सुरक्षा परिषद् के स्थायी सदस्यों की संख्या बढ़नी चाहिए।
- संयुक्त राष्ट्र की आम सभा को विश्व संसद के रूप में काम करना चाहिए जिसमें सदस्य देशों के प्रतिनिधियों की संख्या उस देश की आबादी के आधार पर तय हों। ये प्रतिनिधि एक विश्व सरकार का चुनाव करें।
- अलग-अलग देश अपनी सेना नहीं रखें। विभिन्न राष्ट्रों के बीच टकराव की स्थिति में शांति कायम करने के लिए संयुक्त राष्ट्र अपने कार्य दल रखे।
- संयुक्त राष्ट्र के प्रमुख का चुनाव दुनिया भर के लोग प्रत्यक्ष मतदान से करें।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

बाहरी समर्थन का सवाल

पृष्ठ 19 तथा 20 पर दिए गए दोनों कार्टूनों को गौर से देखिए। ये कार्टून वैश्विक लोकतंत्र के बारे में एक मौलिक सवाल उठाते हैं। हाल में दुनिया के ताकतवर देशों, खास तौर से अमेरिका ने शेष दुनिया में लोकतंत्र को बढ़ाने का जिम्मा खुद संभाल लिया है। उनका कहना है कि सिर्फ़ लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रचार से काम नहीं चलेगा, लोकतांत्रिक देशों को उन देशों में लोकतंत्र स्थापित करने के लिए सीधी दखल देनी चाहिए जहाँ लोकतंत्र नहीं है। कुछ मामलों में तो ताकतवर देशों ने गैर-लोकतांत्रिक देशों पर सशस्त्र हमला भी किया है। सुष्मिता यही बात कर रही थी।

आइए देखें कि इराक में क्या हुआ। इराक पश्चिमी एशिया का एक देश है। 1932 में यह ब्रिटिश गुलामी से आज़ाद हुआ। तीन दशक बाद यहाँ फ़ौज ने कई सरकारों का तख्ता पलटा। 1968 से यहाँ अरब सोशलिस्ट बाथ पार्टी (अरबी शब्द बाथ का मतलब होता है पुनर्जागरण) का शासन था। बाथ पार्टी के नेता सद्दाम हुसैन ने 1968 के तख्तापलट में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी और उसी से यह पार्टी सत्ता में आई। इस

© NCERT not to be republished

2018-19

कार्टून बूझें

‘लोकतंत्र की नागफनी’ नामक यह कार्टून 2004 में प्रकाशित हुआ था। कार्टून में नागफनी किस रूप में दिखाई गई है? इसे कौन किसे दे रहा है? इसका संदेश क्या है?

© स्टेफन पेरे, थाइलैंड, केगल कार्टून्स।

सरकार ने पारंपरिक इस्लामी कानूनों को हटाया और औरतों को अनेक ऐसे अधिकार दिए जो अन्य पश्चिम एशियाई देशों में कहीं नहीं दिए गए थे। 1979 में राष्ट्रपति बनने के बाद से सद्दाम हुसैन ने अपनी तानाशाही चलाई और अपने शासन का विरोध करने वालों का सख्ती से दमन किया। अपने अनेक राजनैतिक विरोधियों की हत्या और जातीय अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों का नरसंहार कराने के लिए भी वे कुख्यात हुए।

अमेरिका और ब्रिटेन आदि उसके सहयोगी देशों ने आरोप लगाया कि इराक के पास गुप्त परमाणु हथियार और ‘जनसंहार के हथियार’ हैं और इनसे दुनिया को बहुत खतरा है। लेकिन जब संयुक्त राष्ट्र ने यह जाँचने के लिए अपनी विशेषज्ञ टीम इराक भेजी तो उस टीम को ऐसे कोई हथियार नहीं मिले। फिर भी 2003 में अमेरिका और उसके साथी देशों ने इराक पर हमला किया, उस पर कब्ज़ा कर लिया और सद्दाम हुसैन को सत्ता से हटा दिया। अमेरिका ने अपनी पसंद की अंतरिम सरकार बनवा दी। इराक के खिलाफ़ युद्ध को सुरक्षा परिषद् ने भी मंजूरी नहीं दी थी। संयुक्त राष्ट्र महासचिव कोफी अन्नान ने कहा कि इराक के खिलाफ़ अमेरिकी युद्ध गैर-कानूनी है।

खुद करें, खुद सीखें

- इराक के बारे में अमेरिका और ब्रिटेन में चलने वाली बहसों से जुड़ी सूचनाएँ इकट्ठी करें। इराक पर हमला करने का अमेरिकी राष्ट्रपति और ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने पहले क्या कारण बताया था? युद्ध के बाद क्या कारण बताए गए?

© NCERT not to be republished

इराक का उदाहरण कई मूलभूत प्रश्न उठाता है जिन पर हमें सोचने की ज़रूरत है:

- क्या यह लोकतंत्र को बढ़ावा देने का सही तरीका है? क्या किसी देश में लोकतंत्र की स्थापना करने के लिए किसी लोकतांत्रिक देश को उस देश पर हमला कर देना चाहिए?
- क्या बाहरी सहायता हर मामले में मददगार साबित होती है या वह केवल तभी कारगर होती है जब किसी देश के लोग अपने यहाँ के समाज को लोकतांत्रिक बनाने के संघर्ष में लगे हों?
- अगर बाहरी दखल से किसी देश में लोकतंत्र कायम भी हो जाता है तो क्या वह टिकाऊ होगा? क्या इसे अपने नागरिकों का समर्थन प्राप्त होगा?
- कोई बाहरी शक्ति लोकतंत्र कायम कर दे, क्या यह विचार लोकतंत्र की बुनियादी भावना के एकदम उलट नहीं है?

इस अध्याय में सीखी गई बातों की रोशनी में इन सवालों पर विचार कीजिए।

गठबंधन: लोगों, संगठनों, पार्टियों या राष्ट्रों का

कार्टून बूझें

इराक में चुनाव के दौरान अमेरिकी फ़ौज की मौजूदगी के पक्ष में तर्क दिया जा रहा था कि ऐसा लोकतंत्र की मदद के लिए किया जा रहा है। क्या यह कार्टून किसी और स्थिति पर भी लागू हो सकता है? इस अध्याय के उन उदाहरणों को पहचाने जिन्हें समझने में यह कार्टून मददगार हो सकता है।

© एरेस, केगल कार्टून्स डॉट कॉम, केगल कार्टून्स।

© NCERT not to be republished

एकजुट होना। यह गठबंधन अस्थायी होता है या सुविधाजनक रहने तक ही रह सकता है।

जनमत संग्रह: जनमत संग्रह सभी मतदाताओं के सामने कोई एक प्रस्ताव रखकर उस पर हाँ या ना में जवाब लेने वाला प्रत्यक्ष चुनाव है। यह नए संविधान, किसी कानून या सरकार की किसी एक नीति पर कराया जा सकता है।

तख्तापलट: किसी सरकार को गैर-कानूनी ढंग से अचानक उखाड़ फेंकने को तख्तापलट कहते हैं। यह हिंसक हो सकता है और नहीं भी।

मज़दूर संघ: मज़दूरी करने वालों का अपने रोजगार को बनाए रखने और बेहतरी के उद्देश्य से बना संगठन।

साम्यवादी शासन: साम्यवादी पार्टी द्वारा चलाया जाने वाला किसी देश का शासन जिसमें अन्य पार्टियों को सत्ता के लिए प्रयास करने की इजाज़त नहीं होती। राज्य सारी बड़ी संपत्ति और उद्योगों पर नियंत्रण रखता है।

राजनैतिक बंदी: जेल में डाले गए या अपने घर में नज़रबंद ऐसे लोग जिनके विचारों, कामकाज या छवि को सरकार अपने लिए खतरा मानती है। अकसर ऐसे लोगों के खिलाफ़ झूठे या बढ़ा-चढ़ाकर मामले दायर किए जाते हैं और कानून द्वारा तय प्रक्रिया को ताक पर रखकर उन्हें कैद रखा जाता है।

मार्शल लॉ: सेना द्वारा प्रशासन और न्यायपालिका को अपने नियंत्रण में लेने के बाद लागू कायदे-कानून।

हड़ताल: कुछ शिकायतों के चलते या किसी माँग के पूरा न होने तक मज़दूरों या कर्मचारियों द्वारा सामूहिक रूप से काम करने से इंकार करना। अधिकांश लोकतांत्रिक देशों में हड़ताल का अधिकार वैध है।

वीटो: किसी व्यक्ति, पार्टी या राष्ट्र को मिला यह अधिकार कि वह किसी कानून को अकेले रोक सकता है। वीटो किसी फैसले को रोकने का असीमित अधिकार देता है, उसे लागू कराने का नहीं। वीटो, लातिनी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ होता है, 'मैं मना करता हूँ।'

उपनिवेश: किसी अन्य शासन व्यवस्था के राजनैतिक नियंत्रण में रहने वाला क्षेत्र।

प्रश्नावली

1. इनमें से किससे लोकतंत्र के विस्तार में मदद नहीं मिलती?
   क. लोगों का संघर्ष
   ख. विदेशी शासन द्वारा आक्रमण
   ग. उपनिवेशवाद का अंत
   घ. लोगों की स्वतंत्रता की चाह

2. आज की दुनिया के बारे में इनमें से कौन-सा कथन सही है?
   क. राजशाही शासन की वह पद्धति है जो अब समाप्त हो गई है।
   ख. विभिन्न देशों के बीच संबंध पहले के किसी वक्त से अब कहीं ज़्यादा लोकतांत्रिक हैं।
   ग. आज पहले के किसी दौर से ज़्यादा देशों में शासकों का चुनाव लोगों के द्वारा हो रहा है।
   घ. आज दुनिया में सैनिक तानाशाह नहीं रह गए हैं।

© NCERT not to be republished

3. निम्नलिखित वाक्यांशों में से किसी एक का चुनाव करके इस वाक्य को पूरा कीजिए।
अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में लोकतंत्र की जरूरत है ताकि...
क. अमीर देशों की बातों का ज़्यादा वज़न हो।
ख. विभिन्न देशों की बात का वज़न उनकी सैन्य शक्ति के अनुपात में हो।
ग. देशों को उनकी आबादी के अनुपात में सम्मान मिले।
घ. दुनिया के सभी देशों के साथ समान व्यवहार हो।

4. इन देशों और लोकतंत्र की उनकी राह में मेल बैठाएँ।

देश	लोकतंत्र की ओर
क. चिले	1. ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से आजादी
ख. नेपाल	2. सैनिक तानाशाही की समाप्ति
ग. पोलैंड	3. एक दल के शासन का अंत
घ. घाना	4. राजा ने अपने अधिकार छोड़ने पर सहमति दी

5. गैर-लोकतांत्रिक शासन वाले देशों के लोगों को किन-किन मुश्किलों का सामना करना पड़ता है? इस अध्याय में दिए गए उदाहरणों के आधार पर इस कथन के पक्ष में तर्क दीजिए।

6. जब सेना लोकतांत्रिक शासन को उखाड़ फेंकती है तो सामान्यत: कौन-सी स्वतंत्रताएँ छीन ली जाती हैं?

7. वैश्विक स्तर पर लोकतंत्र बढ़ाने में इनमें से किन बातों से मदद मिलेगी? प्रत्येक मामले में अपने जवाब के पक्ष में तर्क दीजिए।

क. मेरा देश अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं को ज़्यादा पैसे देता है इसलिए मैं चाहता हूँ कि मेरे साथ ज़्यादा सम्मानजनक व्यवहार हो और मुझे ज़्यादा अधिकार मिलें।
ख. मेरा देश छोटा या गरीब हो सकता है लेकिन मेरी आवाज़ को समान आदर के साथ सुना जाना चाहिए क्योंकि इन फैसलों का मेरे देश पर भी असर होगा।
ग. अंतर्राष्ट्रीय मामलों में अमीर देशों की ज़्यादा चलनी चाहिए। गरीब देशों की संख्या ज़्यादा है, सिर्फ़ इसके चलते अमीर देश अपने हितों का नुकसान नहीं होने दे सकते।
घ. भारत जैसे बड़े देशों की आवाज़ का अंतर्राष्ट्रीय संगठनों में ज़्यादा वज़न होना ही चाहिए।

प्रश्नावली

8. नेपाल के संकट पर हुई एक टीवी चर्चा में व्यक्त किए गए तीन विचार कुछ इस प्रकार के थे। इनमें से आप किसे सही मानते हैं और क्यों?

वक्ता 1: भारत एक लोकतांत्रिक देश है इसलिए राजशाही के खिलाफ़ और लोकतंत्र के लिए संघर्ष करने वाले नेपाली लोगों के समर्थन में भारत सरकार को ज़्यादा दखल देना चाहिए।
वक्ता 2: यह एक खतरनाक तर्क है। हम उस स्थिति में पहुँच जाएँगे जहाँ इराक के मामले में अमेरिका पहुँचा है। किसी भी बाहरी शक्ति के सहारे लोकतंत्र नहीं आ सकता।
वक्ता 3: लेकिन हमें किसी देश के आंतरिक मामलों की चिंता ही क्यों करनी चाहिए? हमें वहाँ अपने व्यावसायिक हितों की चिंता करनी चाहिए लोकतंत्र की नहीं।

© NCERT not to be republished

9. एक काल्पनिक देश आनंदलोक में लोग विदेशी शासन को समाप्त करके पुराने राजपरिवार को सत्ता सौंपते हैं। वे कहते हैं, *'आखिर जब विदेशियों ने हमारे ऊपर राज करना शुरू किया तब इन्हीं के पूर्वज हमारे राजा थे। यह अच्छा है कि हमारा एक मज़बूत शासक है जो हमें अमीर और ताकतवर बनने में मदद कर सकता है।'* जब किसी ने लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की बात की तो वहाँ के सयाने लोगों ने कहा कि यह तो एक विदेशी विचार है। हमारी लड़ाई विदेशियों और उनके विचारों को देश से खदेड़ने की थी। जब किसी ने मीडिया की आज़ादी की माँग की तो बड़े-बुज़ुर्गों ने कहा कि शासन की ज़्यादा आलोचना करने से नुकसान होगा और इससे अपने जीवन स्तर को सुधारने में कोई मदद नहीं मिलेगी। *''आखिर महाराज दयावान हैं और अपनी पूरी प्रजा के कल्याण में बहुत दिलचस्पी लेते हैं। उनके लिए मुश्किलें क्यों पैदा की जाएँ? क्या हम सभी खुशहाल नहीं होना चाहते?''*

उपरोक्त उद्धरण को पढ़ने के बाद चमन, चंपा और चंदू ने कुछ इस तरह के निष्कर्ष निकाले:

चमन: आनंदलोक एक लोकतांत्रिक देश है क्योंकि लोगों ने विदेशी शासकों को उखाड़ फेंका और राजा का शासन बहाल किया।

चंपा: आनंदलोक लोकतांत्रिक देश नहीं है क्योंकि लोग अपने शासन की आलोचना नहीं कर सकते। राजा अच्छा हो सकता है और आर्थिक समृद्धि भी ला सकता है लेकिन राजा लोकतांत्रिक शासन नहीं ला सकता।

चंदू: लोगों को खुशहाली चाहिए इसलिए वे अपने शासन को अपनी तरफ़ से फैसले लेने देना चाहते हैं। अगर लोग खुश हैं तो वहाँ का शासन लोकतांत्रिक ही है।

इन तीनों कथनों के बारे में आपकी क्या राय है? इस देश में सरकार के स्वरूप के बारे में आपकी क्या राय है?

अपनी कक्षा में अलग-अलग समूह बना लें और किसी भी गैर-लोकतांत्रिक देश में लोकतंत्र के लिए हो रहे संघर्ष से संबंधित अलग-अलग तरह की सूचनाएँ इकट्ठी करें। इन सवालों पर ध्यान केंद्रित करें:

- कोई सरकार किस आधार पर गैर-लोकतांत्रिक होती है?
- उस देश के लोगों की मुख्य शिकायत और माँगें क्या हैं?
- लोगों की इन माँगों पर वर्तमान शासकों की क्या प्रतिक्रिया है?
- लोकतंत्र के संघर्ष के मुख्य नेता कौन हैं?

इस तरह जुटाई गई सूचनाओं को आप प्रदर्शनी, कोलाज़, रिपोर्ट या दीवार पर अखबार के रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं।

© NCERT not to be republished

अध्याय 2

लोकतंत्र क्या? लोकतंत्र क्यों?

परिचय

पिछले अध्याय की कथाओं और विश्लेषणों से हमें इस बात का आभास हुआ कि लोकतंत्र कैसा होता है। उन कथाओं में हमने कुछ सरकारों को लोकतांत्रिक कहा था और कुछ को अलोकतांत्रिक या गैर-लोकतांत्रिक। हमने देखा कि इनमें से कुछ देशों की सरकारें औरों से भिन्न है। आइए, अब इन कथाओं से हम कुछ सबक सीखें और कुछ और बुनियादी सवाल पूछें। लोकतंत्र क्या है? इसकी विशेषताएँ क्या है? हम बहुत सरल परिभाषा से शुरुआत करते हैं। फिर हम बारी-बारी से इन बिंदुओं का व्यावहारिक अर्थ जानेंगे। यहाँ हमारा उद्देश्य किसी भी सरकार के लोकतांत्रिक होने की न्यूनतम विशेषताओं को चिह्नित करना है। यह अध्याय पढ़ लेने के बाद हम लोकतांत्रिक और गैर-लोकतांत्रिक शासन में अंतर कर सकते हैं। अध्याय के अंत में हम इस न्यूनतम लक्ष्य से आगे बढ़कर लोकतंत्र की वृहत्तर परिभाषा पर आएँगे।

पिछले अध्याय में हमने जाना है कि समकालीन दुनिया में लोकतंत्र ही सबसे लोकप्रिय शासन पद्धति है। पर ऐसा क्यों है? कौन-सी चीज़ इसे दूसरी व्यवस्थाओं से बेहतर बनाती है? क्या यही शासन की सर्वोत्तम व्यवस्था है? इन सवालों पर हम इस अध्याय के बाद वाले हिस्से में चर्चा करेंगे।

© NCERT not to be republished

2.1 लोकतंत्र क्या है ?

पिछले अध्याय में हमने दुनिया के कई हिस्सों के अनेक विवरण पढ़े। इन विवरणों में हमने अनेक शासन व्यवस्थाओं और संगठनों पर चर्चा की। इनमें से कुछ शासन व्यवस्थाओं को हम लोकतंत्र कहते हैं। दूसरों को गैर-लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था कहा गया है। क्या हम जिन्हें लोकतांत्रिक कहते हैं उन सभी देशों की सरकारों के बारे में कोई एक बड़ी चीज़ याद कर सकते हैं?

- पिनोशे के शासन से पहले और बाद का चिले।
- कम्युनिस्ट शासन व्यवस्था समाप्त होने के बाद का पोलैंड।
- एनक्रूमा की सरकार के शुरुआती दौर का घाना।

इन सभी सरकारों में कौन-सी एक बात समान है? हम इन्हे लोकतांत्रिक सरकार क्यों कहते हैं? पिनोशे के दौर वाले चिले, कम्युनिस्ट शासन व्यवस्था वाले पोलैंड और घाना में एनक्रूमा के बाद वाले शासन काल से इनमें क्या अंतर है? इन सरकारों और म्यांमार के सैनिक शासन में क्या-क्या समानताएँ हैं? हम इन सरकारों को गैर-लोकतांत्रिक क्यों कहते हैं? इन्हीं बातों के आधार पर सरकारों की कुछ सामान्य विशेषताएँ लिखें:

- लोकतांत्रिक सरकारें
- गैर-लोकतांत्रिक सरकारें

इस तरह की खबरें अखबारों में अकसर छपती हैं। क्या इन सब में लोकतंत्र शब्द का प्रयोग समान अर्थों में होता हैं?

2018-19

परिभाषा की ज़रूरत क्यों?

आगे बढ़ने से पहले, आइए सबसे पहले एक मेधावी छात्रा मेरी की आपत्ति पर गौर किया जाए। वह लोकतंत्र को परिभाषित करने के इस तरीके को पसंद नहीं करती और कुछ बुनियादी सवाल पूछना चाहती है। उसकी अध्यापिका मेटिल्डा लिंगदोह ने उसके सवालों का जवाब देना शुरू किया तो कक्षा की अन्य छात्राएँ भी इस चर्चा में भाग लेने लगीं।

मेरीः मैडम, मुझे यह तरीका ठीक नहीं लगता। एक अध्याय तो किस्सों और लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं की चर्चा में लगा दिया और अब आकर हम लोकतंत्र का मतलब जानने की कोशिश कर रहे हैं। मेरे कहने का मतलब है कि इस काम को ही हमें पहले करना था और पहले अध्याय वाली पढ़ाई अब। क्या ऐसा ठीक नहीं होता?

लिंगदोह मैडमः तुम्हारी बातों में दम है। पर क्या हम अपने सामान्य जीवन में भी ऐसा ही नहीं करते? क्या हम कलम, बरसात या प्रेम जैसे शब्दों का उपयोग करने के पहले इनकी परिभाषा स्पष्ट करना ज़रूरी मानते हैं? ज़रा सोचो, क्या हमारे पास इन शब्दों की बहुत स्पष्ट और सर्वमान्य परिभाषा है? शब्दों का उपयोग करके ही हम उनका अर्थ जानते हैं।

मेरीः फिर परिभाषा की ज़रूरत ही क्यों है?

लिंगदोह मैडमः हमें परिभाषा की ज़रूरत तभी पड़ती है जब हमें किसी शब्द का उपयोग करने में परेशानी होती है। हमें बारिश की परिभाषा की ज़रूरत तभी होती है जब हमें बूँदा-बाँदी और बादल फटने जैसी स्थिति और सामान्य बरसात में फ़र्क करना हो। लोकतंत्र पर भी यही बात लागू होती है। हमें इसके लिए भी स्पष्ट परिभाषा की ज़रूरत है क्योंकि लोग इस शब्द का प्रयोग अलग-अलग अर्थों के लिए करते हैं, बहुत अलग-अलग तरह की सरकारें भी खुद को लोकतांत्रिक ही कहती हैं।

रिबियांगः लेकिन हमें परिभाषा बनाने की ज़रूरत ही क्या है? एक दिन आपने हमें अब्राहम लिंकन का एक वाक्य सुनाया था: "लोगों के लिए, लोगों की और लोगों के द्वारा चलने वाली शासन व्यवस्था ही लोकतंत्र है।" मेघालय में हम स्वयं पर राज करते रहे हैं। इसे सभी लोग मानते भी हैं। हमें इसमें बदलाव करने की क्या ज़रूरत है?

लिंगदोह मैडमः मैं यह नहीं कहती कि इसमें बदलाव करने की ज़रूरत है। मुझे भी यह परिभाषा बहुत सुंदर लगती है। जब तक हम इस मसले पर खुद से विचार न करें तब तक यह तय करना मुश्किल होगा कि लोकतंत्र की यही सर्वोत्तम परिभाषा है। हमें किसी चीज को सिर्फ़ इसी आधार पर स्वीकार नहीं कर लेना चाहिए कि किसी बहुत नामी-गिरामी आदमी ने उसके लिए कुछ बहुत अच्छा कहा है या सभी लोग उसे सही मानते हैं।

योलांदाः मैडम, क्या मैं कुछ कह सकती हूँ? हमें कोई परिभाषा तलाशने की ज़रूरत नहीं है। मैंने कहीं पढ़ा है कि 'डेमोक्रेसी' यूनानी शब्द 'डेमोक्रेशिया' से बना है। यूनानी में 'डेमोस' का अर्थ होता है 'लोग' और 'क्रेशिया' का अर्थ होता है 'शासन'। इस प्रकार डेमोक्रेसी अर्थात लोकतंत्र का अर्थ है लोगों का शासन। यही सही अर्थ है। फिर परिभाषा की क्या ज़रूरत है?

लिंगदोह मैडमः इस सवाल पर विचार करने का यह भी बहुत उपयोगी तरीका है। पर मैं इतना कहूँगी कि सिर्फ शब्द की उत्पत्ति से उसकी परिभाषा निकालने का तरीका हरदम उपयोगी नहीं रहता। शब्द का अर्थ हमेशा अपने मूल से जुड़ा या बंधा नहीं रहता। समय और प्रयोग के साथ-साथ उसका अर्थ बदलता भी रहता है। अब कंप्यूटर शब्द को ही लो। यह कंप्यूटिंग अर्थात गणना शब्द से बना है। मुश्किल गणनाओं को सरलता से करने के लिए बने यंत्र को ही कंप्यूटर कहा जाता था। दरअसल ये बहुत शक्तिशाली कैलकुलेटर थे। पर आज शायद ही कोई इस अर्थ में कंप्यूटर शब्द का प्रयोग करता है। अब तो कंप्यूटर का उपयोग लिखने, पढ़ने, डिजाइन बनाने, संगीत बनाने-सुनने और फिल्म देखने में होता है। शब्द वही रहते हैं पर समय बीतने के साथ उनका अर्थ बदल सकता है। ऐसी स्थिति में सिर्फ शब्दों के मूल अर्थ पर ही भरोसा करना बहुत उपयोगी नहीं होता।

मेरीः मैडम, आपके कहने का मतलब यह है कि इस विषय पर खुद सोचने का कोई शॉर्टकट नहीं है। हमें इसके अर्थ पर गौर करना ही होगा और इसकी परिभाषा गढ़नी होगी।

© NCERT not to be republished

मैंने तो यह भी सुना है कि लोकतंत्र एक ऐसी व्यवस्था है जहाँ लोक पर तंत्र हावी रहता है। इसके बारे में आपकी क्या राय है?

लिंगदोह मैडमः एकदम सही। इसलिए आओ अब यह काम कर ही डालें।

खुद करें, खुद सीखें

आइए लिंगदोह मैडम की बात को गंभीरता से लें और कलम, बारिश और प्रेम जैसे सदा प्रयोग होने वाले साधारण शब्दों की ठीक-ठीक परिभाषा लिखने की कोशिश करें। जैसे, क्या कलम की कोई ऐसी स्पष्ट परिभाषा है जो उसे पेंसिल, ब्रुश, हाइलाइटर या मार्कर से अलग बताती हो?

- **इस प्रयोग से आपने क्या सीखा?**
- **लोकतंत्र का अर्थ समझने में इस अनुभव ने हमें क्या-क्या सिखाया?**

एक सरल परिभाषा

आइए, उस चर्चा पर फिर से गौर करें जो खुद को लोकतांत्रिक बताने का दावा करने वाली सरकारों के बीच की समानताओं और असमानताओं से जुड़ी थी। पिछले अध्याय में हमने सभी लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं की पहचान के लिए एक बहुत ही सरल पैमाने की पहचान की थी। वह पैमाना था लोगों के पास अपनी सरकार को चुनने का अधिकार होना। इसलिए, हम एक सरल परिभाषा से शुरुआत कर सकते हैं। **लोकतंत्र शासन का एक ऐसा रूप है जिसमें शासकों का चुनाव लोग करते हैं।**

यह एक उपयोगी शुरुआत है। यह परिभाषा बहुत स्पष्ट ढंग से लोकतांत्रिक और गैर-लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं में अंतर कर देती है। म्यांमार के सैनिक शासकों का चुनाव लोगों ने नहीं किया है। जिन लोगों का सेना पर नियंत्रण था वे देश के शासक बन गए। शासक के फ़ैसलों में लोगों की कोई भागीदारी नहीं है। पिनोशे जैसे तानाशाहों का चुनाव लोग नहीं करते। यही बात राजशाहियों पर भी लागू होती है। नेपाल के राजा और सऊदी अरब के शाह लोगों द्वारा शासक नहीं चुने गए हैं बल्कि राजपरिवार में जन्म लेने के कारण उन्होंने यह हक पाया है।

लेकिन यह सरल परिभाषा पूर्ण या पर्याप्त नहीं है। इससे हमें यह समझ में आता है कि लोकतंत्र का मतलब लोगों का शासन है। पर इस परिभाषा का प्रयोग यदि हमने बिना सोचे-समझे किया तो फिर उन सभी सरकारों को लोकतांत्रिक कहना पड़ेगा जो चुनाव करवाती हैं और फिर हम सही नतीजे पर नहीं पहुँच पाएँगे। जैसा कि हम अध्याय 4 में देखेंगे कि समकालीन दुनिया की हर सरकार, चाहे वह लोकतांत्रिक हो या न हो, खुद को लोकतांत्रिक कहना, कहलाना चाहती है। इसलिए हमें असली लोकतंत्र और दिखावटी लोकतंत्र वाली सरकारों के बीच सावधानीपूर्वक फ़र्क करना होगा। यह काम हम तभी कर पाएँगे जब हम इस परिभाषा के एक-एक शब्द को सावधानी से समझें और लोकतांत्रिक सरकार की विशेषताओं को जानें।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

रिबियांग स्कूल से घर गई और उसने लोकतंत्र के बारे में कुछ अन्य प्रसिद्ध व्यक्तियों के कथनों को जमा किया। इस बार उसने इन उक्तियों को कहने या लिखने वाले के नाम का उपयोग नहीं किया। वह चाहती है कि आप भी इन्हें पढ़ें और बताएँ कि ये उक्तियाँ कितनी अच्छी या उपयोगी हैं?

- लोकतंत्र हर व्यक्ति को अपना शोषक आप बन जाने का अधिकार देता है।
- लोकतंत्र का मतलब है अपने तानाशाहों का चुनाव करना पर उनके मुँह से अपनी इच्छा की बातें सुनने के बाद।
- व्यक्ति की न्यायप्रियता लोकतंत्र को संभव बनाती है लेकिन अन्याय के प्रति व्यक्ति का रुझान लोकतंत्र को ज़रूरी बनाता है।
- लोकतंत्र शासन का ऐसा तरीका है जो सुनिश्चित करता है कि हम जैसी सरकार के लायक हैं वैसी सरकार ही हम पर शासन करे।
- लोकतंत्र की सारी बुराइयों को और अधिक लोकतंत्र से ही दूर किया जा सकता है।

2018-19

© स्टेफन पेरे, थाइलैंड, केगल कार्टूंस।

कार्टून बूझें

इराक में अमेरिका और अन्य विदेशी शक्तियों की उपस्थिति में हुए चुनाव के समय यह कार्टून बना था। यह कार्टून क्या कहता है? इसमें 'डेमोक्रेसी' को इस तरह क्यों लिखा गया है?

2.2 लोकतंत्र की विशेषताएँ

हमने इस सरल परिभाषा के साथ शुरुआत की है कि **लोकतंत्र शासन का एक रूप है जिसमें जनता शासकों का चुनाव करती है।** इससे अनेक सवाल उठ खड़े होते हैं:

- इस परिभाषा के अनुसार **शासक** कौन हैं? किसी सरकार को लोकतांत्रिक कहे जाने के लिए उसके किन अधिकारियों का चुना हुआ होना आवश्यक है। लोकतंत्र में वे कौन-से फ़ैसले हैं जो बिना चुने हुए अधिकारी भी ले सकते हैं?
- किस तरह के **चुनाव** को लोकतांत्रिक चुनाव कहते हैं? किसी चुनाव को लोकतांत्रिक कहने के लिए किन शर्तों को पूरा किया जाना ज़रूरी है?
- कौन **लोग** शासकों का चुनाव कर सकते हैं या खुद शासक चुने जा सकते हैं? क्या इसमें प्रत्येक नागरिक का बराबरी की हैसियत से भाग लेना ज़रूरी है? क्या कोई लोकतांत्रिक व्यवस्था अपने कुछ नागरिकों को इस अधिकार से वंचित कर सकती है?
- **सरकार के किस स्वरूप** को लोकतांत्रिक कहेंगे? क्या चुने हुए शासक लोकतंत्र में अपनी मर्ज़ी से सब कुछ कर सकते हैं या लोकतांत्रिक सरकार के लिए कुछ लक्ष्मणरेखाओं में बंधकर काम करना ज़रूरी है? क्या लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था को नागरिकों के कुछ अधिकारों का आदर करना चाहिए?

आइए, कुछ उदाहरणों के साथ इन सब पर बारी-बारी से विचार करें।

प्रमुख फ़ैसले निर्वाचित नेताओं के हाथ

पाकिस्तान में ज़नरल परवेज़ मुशर्रफ़ ने अक्तूबर 1999 में सैनिक तख्तापलट की अगुवाई की। उन्होंने लोकतांत्रिक ढंग से चुनी हुई सरकार को

कार्टून बूझें

सीरिया पश्चिम एशिया का एक छोटा-सा देश है। शासक बाथ पार्टी और उसकी कुछ सहयोगी पार्टियों को ही देश में राजनैतिक गतिविधियों की अनुमति है। क्या इस कार्टून को चीन और मैक्सिको पर भी लागू किया जा सकता है? लोकतंत्र के माथे पर पत्तों से बने ताज का क्या महत्त्व है?

© एमद हज़्ज़ज़, जॉर्डन, केगल कार्टून्स।

उखाड़ फेंका और खुद को देश का 'मुख्य कार्यकारी' घोषित किया। बाद में उन्होंने खुद को राष्ट्रपति घोषित किया और 2002 में एक जनमत संग्रह कराके अपना कार्यकाल पाँच साल के लिए बढ़वा लिया। पाकिस्तानी मीडिया, मानवाधिकार संगठनों और लोकतंत्र के लिए काम करने वालों ने आरोप लगाया कि जनमत संग्रह एक धोखाधड़ी है और इसमें बड़े पैमाने पर गड़बड़ियाँ की गई हैं। अगस्त 2002 में उन्होंने 'लीगल फ्रेमवर्क आर्डर' के ज़रिए पाकिस्तान के संविधान को बदल डाला। इस आर्डर के अनुसार राष्ट्रपति, राष्ट्रीय और प्रांतीय असेंबलियों को भंग कर सकता है। मंत्रिपरिषद् के कामकाज पर एक राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् की निगरानी रहती है जिसके ज़्यादातर सदस्य फ़ौजी अधिकारी हैं। इस कानून के पास हो जाने के बाद राष्ट्रीय और प्रांतीय असेंबलियों के लिए चुनाव कराए गए। इस प्रकार पाकिस्तान में चुनाव भी हुए, चुने हुए प्रतिनिधियों को कुछ अधिकार भी मिले लेकिन सर्वोच्च सत्ता सेना के अधिकारियों और ज़नरल मुशर्रफ़ के पास थी।

स्पष्ट है कि ज़नरल मुशर्रफ़ के शासन वाले पाकिस्तान को लोकतंत्र न कहने के अनेक ठोस कारण हैं। लेकिन यहाँ सिर्फ़ एक कारण पर ही चर्चा करते हैं। क्या हम कह सकते हैं कि पाकिस्तान के लोगों ने अपने शासकों का चुनाव किया है? हम ऐसा नहीं कह सकते। लोगों ने राष्ट्रीय और प्रांतीय असेंबलियों के लिए अपने प्रतिनिधियों का चुनाव किया है। लेकिन चुने हुए प्रतिनिधि वास्तविक शासक नहीं थे। वे अंतिम फ़ैसला नहीं कर सकते। अंतिम फ़ैसला सेना के अधिकारियों और ज़नरल मुशर्रफ़ के हाथ में था जो जनता द्वारा नहीं चुने गए थे। ऐसा तानाशाही और राजशाही वाली अनेक शासन व्यवस्थाओं में होता है। वहाँ औपचारिक रूप से चुनी हुई

संसद और सरकार तो होती है पर असली सत्ता उन लोगों के हाथ में होती है जिन्हें जनता नहीं चुनती। पिछले अध्याय में हमने पोलैंड के कम्युनिस्ट शासन के समय में सोवियत संघ और समकालीन इराक में अमेरिका की भूमिका के बारे में पढ़ा। ऐसे मामलों में असली ताकत विदेशी शक्तियों के हाथ में रहती है न कि चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथ में। इसे लोगों का शासन नहीं कहा जा सकता।

इससे हम लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की पहली विशेषता पर पहुँचते हैं। **लोकतंत्र में अंतिम निर्णय लेने की शक्ति लोगों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों के पास ही होनी चाहिए।**

© एरेस, केगल कार्टून्स इंट कॉम, केगल कार्टून्स | 22 जनवरी 2005

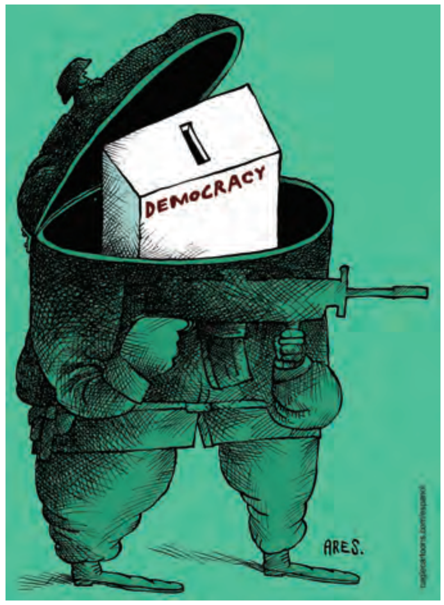

कार्टून बूझें

यह कार्टून लातिनी अमेरिका के संदर्भ में बना था। क्या आपको लगता है कि यह पाकिस्तान पर भी फिट बैठता है? कुछ अन्य देशों के बारे में सोचिए जिन पर यह कार्टून लागू हो सकता है। क्या ऐसा कई बार हमारे देश में भी होता है?

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावी मुकाबला

चीन की संसद को कवांगुओ रेममिन दाइवियाओ दाहुई (राष्ट्रीय जन संसद) कहते हैं। चीन की संसद के लिए प्रति पाँच वर्ष बाद नियमित रूप से चुनाव होते हैं। इस संसद को देश का राष्ट्रपति नियुक्त करने का अधिकार है। इसमें पूरे चीन से करीब 3000 सदस्य आते हैं। कुछ सदस्यों का चुनाव सेना भी करती है। चुनाव लड़ने से पहले सभी उम्मीदवारों को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी से मंजूरी लेनी होती है। 2002-03 में हुए चुनावों में सिर्फ कम्युनिस्ट पार्टी और उससे संबद्ध कुछ छोटी पार्टियों के सदस्यों को ही चुनाव लड़ने की अनुमति मिली। सरकार सदा कम्युनिस्ट पार्टी की ही बनती है।

1930 में आज़ाद होने के बाद से मैक्सिको में हर छः वर्ष बाद राष्ट्रपति चुनने के लिए चुनाव कराए जाते हैं। देश में कभी भी फ़ौजी शासन या तानाशाही नहीं आई। लेकिन सन् 2000 तक हर चुनाव में पीआरआई (इंस्टीट्यूशनल रिवोल्यूशनरी पार्टी) नाम की एक पार्टी को ही जीत मिलती थी। विपक्षी दल चुनाव में हिस्सा लेते थे पर कभी भी उन्हें जीत हासिल नहीं होती थी। चुनाव में तरह-तरह के हथकंडे अपनाकर हर हाल में जीत हासिल करने के लिए पीआरआई कुख्यात थी। सरकारी दफ़्तरों में काम करने वाले सभी लोगों के लिए पार्टी की बैठकों में जाना अनिवार्य था। सरकारी स्कूलों के अध्यापक अपने छात्र-छात्राओं के माँ-बाप से पीआरआई के लिए वोट देने को कहते थे। मीडिया भी जब-तब विपक्षी दलों की आलोचना करने के अलावा उनकी गतिविधियों को नज़रअंदाज ही करती थी। कई बार एकदम अंतिम क्षणों में मतदान केंद्रों को एक जगह से हटाकर दूसरी जगह कर दिया जाता था जिससे अनेक लोग वोट ही नहीं डाल पाते थे। पीआरआई अपने उम्मीदवारों के चुनाव अभियान पर काफ़ी पैसे खर्च करती थी।

क्या हम ऊपर वर्णित चुनावों को लोगों द्वारा अपना शासक चुनने का उदाहरण मान सकते हैं? इन उदाहरणों को पढ़ने के बाद तो यही

जाने कहाँ-कहाँ की बातें हो रही हैं! क्या लोकतंत्र का मतलब सिर्फ सरकारों और शासनों से ही है? क्या हम अपनी कक्षा में लोकतांत्रिक व्यवस्था की बात कर सकते हैं? क्या हम अपने परिवार में लोकतंत्र की बात कर सकते हैं? क्या हम एक लोकतांत्रिक परिवार की बात कर सकते हैं?

© NCERT not to be republished

लगता है कि हम ऐसा नहीं कह सकते। यहाँ काफ़ी सारी समस्याएँ हैं। चीन के चुनावों में लोगों के सामने कोई वास्तविक और गंभीर विकल्प ही नहीं होता। लोगों को शासक दल या उसके द्वारा स्वीकृत उम्मीदवारों को ही वोट देना होता है। क्या हम इसे मनपसंद चुनाव कह सकते हैं? मैक्सिको के मामले में ऐसा लगता है कि कहने को विकल्प होते हुए भी असल में वहाँ की जनता के पास कोई दूसरा विकल्प न था। किसी भी तरह वहाँ शासक दल को पराजित नहीं किया जा सकता था, लोगों के चाहने पर भी नहीं। वहाँ हुए चुनाव निष्पक्ष नहीं थे।

इस प्रकार अब हम लोकतंत्र की अपनी समझ में एक अन्य विशेषता या गुण को जोड़ सकते हैं। लोकतंत्र के लिए सिर्फ़ चुनाव कराना ही पर्याप्त नहीं होता। चुनाव में एक से ज़्यादा असली राजनैतिक विकल्पों के बीच चुनने की स्थिति भी होनी चाहिए। लोगों के पास यह विकल्प रहना चाहिए कि वे चाहें तो शासक दल को गद्दी से उतार दें। इस प्रकार, **लोकतंत्र निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनावों पर आधारित होना चाहिए ताकि सत्ता में बैठे लोगों के लिए जीत-हार के समान अवसर हों।** लोकतांत्रिक चुनावों के बारे में हम अध्याय 4 में और बातें जानेंगे।

कार्टून बूझें

यह कार्टून लातिनी अमेरिका के लोकतंत्र के कामकाज से संबंधित है। इसमें सिक्कों की थैलियों का क्या मतलब है? राजनीति में थैलीशाहों की भूमिका के बारे में कार्टून बनाने वाला क्या कहना चाहता है? क्या इस कार्टून को भारत पर भी लागू किया जा सकता है?

© नाहिकॉन, एल इकोनोमिस्ता, मेक्सिको, केगल कार्टून्स। 17 मई 2005

एक व्यक्ति-एक वोट-एक मोल

पिछले अध्याय में हमने पढ़ा है कि किस तरह लोकतंत्र के लिए होने वाला संघर्ष सार्वभौम वयस्क मताधिकार के साथ जुड़ा था। अब इस सिद्धांत को लगभग पूरी दुनिया में मान लिया गया है। पर किसी व्यक्ति को मतदान के समान अधिकार से वंचित करने के उदाहरण भी कम नहीं हैं।

- 2015 तक सऊदी अरब में औरतों को वोट देने का अधिकार नहीं था।
- एस्टोनिया ने अपने यहाँ नागरिकता के नियम कुछ इस तरह से बनाए हैं कि रूसी अल्पसंख्यक समाज के लोगों को मतदान का अधिकार हासिल करने में मुश्किल होती है।
- फिजी की चुनाव प्रणाली में वहाँ के मूल वासियों के वोट का महत्त्व भारतीय मूल के फिजी नागरिक के वोट से ज़्यादा है।

लोकतंत्र राजनैतिक समानता के बुनियादी सिद्धांत पर आधारित है। इस प्रकार हम लोकतंत्र की तीसरी विशेषता को जान लेते हैं: **लोकतंत्र में हर वयस्क नागरिक का एक वोट होना चाहिए और हर वोट का एक समान मूल्य होना चाहिए।** अध्याय 4 में हम इस बारे में ज़्यादा विस्तार से पढ़ेंगे।

© NCERT not to be republished

© जान ट्रेवर, अल्बूकर्क जर्नल, अमेरिका, केगल कार्टून्स।

कार्टून बूझें

यह कार्टून सद्दाम हुसैन के शासन को उखाड़ फेंकने के बाद हुए चुनावों से संबंधित है। उन्हें जेल में बंद दिखाया गया है। यहाँ कार्टूनिस्ट क्या कहना चाहता है? इस कार्टून के संदेश और अध्याय में आए पहले कार्टून के संदेश की तुलना कीजिए।

कानून का राज और अधिकारों का आदर

जिंबाब्वे को 1980 में अल्पसंख्यक गोरों के शासन से मुक्ति मिली। उसके बाद देश पर जानु-पीएफ दल का राज है जिसने देश के स्वतंत्रता-संघर्ष की अगुवाई की थी। इसके नेता राबर्ट मुगाबे आज़ादी के बाद से ही शासन कर रहे थे। चुनाव नियमित रूप से होते थे और सदा जानु-पीएफ दल ही जीतता था। राष्ट्रपति मुगाबे कम लोकप्रिय नहीं थे पर वे चुनाव में गलत तरीके भी अपनाते थे। आज़ादी के बाद से उनकी सरकार ने कई बार संविधान में बदलाव करके राष्ट्रपति के अधिकारों में वृद्धि की थी और उसकी ज़वाबदेही को कम किया था। विपक्षी दलों के कार्यकर्ताओं को परेशान किया जाता था और उनकी सभाओं में गड़बड़ कराई जाती थी। सरकार विरोधी प्रदर्शनों और आंदोलनों को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया था। एक ऐसा कानून भी था जो राष्ट्रपति की आलोचना के अधिकार को सीमित करता था। टेलीविजन और रेडियो पर सरकारी नियंत्रण था और उन पर सिर्फ़ शासक दल के विचार ही प्रसारित होते थे। अखबार स्वतंत्र थे पर सरकार की आलोचना करने वाले पत्रकारों को परेशान किया जाता था। सरकार ने कुछ ऐसे अदालती फ़ैसलों की परवाह नहीं की जो उसके खिलाफ़ जाते थे और उसने जजों पर दबाव भी डाला। 2017 में मुगाबे को राष्ट्रपति पद से हटा दिया गया।

जिंबाब्वे का उदाहरण बताता है कि शासकों के लिए बार-बार जनादेश पाना लोकतंत्र की एक ज़रूरत है पर इतना ही पर्याप्त नहीं है। लोकप्रिय नेता भी अलोकतांत्रिक हो सकते हैं। लोकप्रिय नेता भी तानाशाह हो सकते हैं। अगर हम लोकतंत्र को परखना चाहते हैं तो चुनावों पर नजर डालना ज़रूरी है। पर उतना ही ज़रूरी है कि चुनाव के पहले और बाद की स्थितियों पर भी नज़र डाली जाए। चुनाव के पहले सत्ता पक्ष के विरोधी समूहों के कामकाज़ समेत सभी तरह की राजनैतिक गतिविधियों के लिए पर्याप्त गुंजाइश रहनी चाहिए। इसके लिए ज़रूरी है कि सरकार नागरिकों के

जिंबाब्वे की बात क्यों करें? मैं तो अपने देश में भी इस तरह की घटनाओं की खबर अखबारों में पढ़ते रहती हूँ। हम इसकी चर्चा क्यों नहीं करते?

कार्टून बूझें

चीनी सरकार ने 'गूगल' और 'याहू' जैसी लोकप्रिय वेबसाइटों पर बंदिशें लगाकर इंटरनेट पर सूचना के मुक्त प्रवाह को रोक दिया। इस कार्टून में इसी पर टिप्पणी की गई है। टैंक और निहत्थे छात्र की तस्वीर पाठक को चीन के हाल के इतिहास की एक अन्य बड़ी घटना की याद दिलाते हैं। वह घटना क्या थी? उसके बारे में अन्य ब्यौरे जुटाओ।

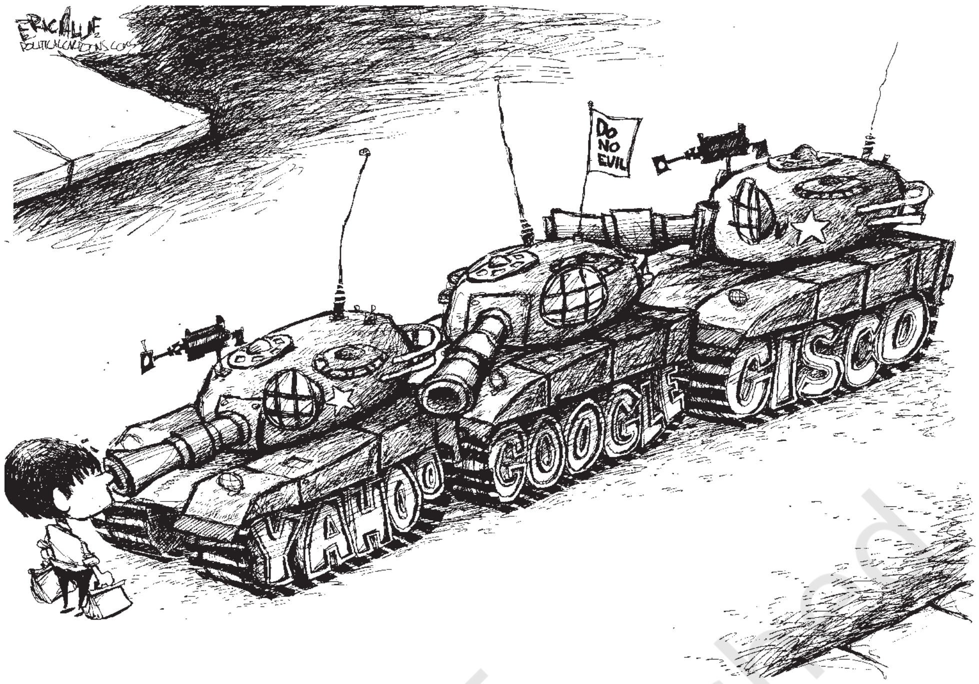

© एरिक एली, पायनियर प्रेस, अमेरिका, केगल कार्टून्स।

कुछ बुनियादी अधिकारों का आदर करे। उनको सोचने की, अपनी राय बनाने की, सार्वजनिक रूप से अपने विचार व्यक्त करने की, संगठन बनाने की, विरोध करने और अन्य राजनैतिक गतिविधियाँ करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। कानून की नज़र में सभी लोगों की समानता होनी चाहिए। इन अधिकारों की रक्षा स्वतंत्र न्यायपालिका को करनी चाहिए जिसके आदेशों का पालन सब लोग करते हों। इन अधिकारों के बारे में हम अधिक विस्तार से अध्याय 6 में पढ़ेंगे।

इसी प्रकार कुछ दूसरी शर्तें हैं जो चुनाव के बाद सरकार चलाने के तौर-तरीकों पर लागू होती हैं। एक लोकतांत्रिक सरकार सिर्फ इस कारण से मनमानी नहीं कर सकती कि उसने चुनाव जीता है। उसे भी कुछ बुनियादी तौर-तरीकों का पालन करना होता है। खास तौर से उसे अल्पमत वाले समूहों को दी गई कुछ गारंटियों का आदर करना होता है। हर प्रमुख फ़ैसला लंबे विचार-विमर्श के बाद लेना होता है। हर पदाधिकारी को उस पद के साथ जुड़े अधिकार और जिम्मेदारियाँ संविधान द्वारा दी जाती हैं। ये सभी न सिर्फ़ जनता के प्रति उत्तरदायी हैं बल्कि अन्य स्वतंत्र अधिकारियों के प्रति भी उनकी जवाबदेही होती है। इसके बारे में हम ज़्यादा विस्तार से अध्याय 5 में पढ़ेंगे।

इस प्रकार हम लोकतंत्र की चौथी और अंतिम विशेषता को रेखांकित कर सकते हैं: **एक लोकतांत्रिक सरकार संवैधानिक कानूनों और नागरिक अधिकारों द्वारा खींची लक्ष्मण रेखाओं के भीतर ही काम करती है।**

परिभाषाओं का सारांश

आइए, अब तक हुई चर्चा को समेटें। हमने लोकतंत्र की इस सरल सी परिभाषा से बात शुरू की थी कि **लोकतंत्र सरकार का एक ऐसा रूप है जिसमें शासकों का चुनाव लोग करते हैं।** हमने पाया कि जब तक हम इसके कुछ प्रमुख शब्दों के बारे में और स्पष्ट न हो जाएँ, यह परिभाषा पर्याप्त नहीं है। अनेक उदाहरणों के जरिए हमने शासन के एक तरीके के रूप में लोकतंत्र की चार विशेषताओं को

© NCERT not to be republished

रेखांकित किया। इनके अनुसार लोकतंत्र शासन का एक ऐसा रूप है जिसमें:

- लोगों द्वारा चुने गए शासक ही सारे प्रमुख फैसले करते हैं;
- चुनाव लोगों के लिए निष्पक्ष अवसर और इतने विकल्प उपलब्ध कराता है कि वे चाहें तो मौजूदा शासकों को बदल सकते हैं;
- यह विकल्प और अवसर सभी लोगों को समान रूप से उपलब्ध हों; और
- इस चुनाव से बनी सरकार संविधान द्वारा तय बुनियादी कानूनों और नागरिक अधिकारों के दायरे को मानते हुए काम करती है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

लोकतंत्र के कामकाज या उसकी अनुपस्थिति के इन पाँच उदाहरणों को पढ़िए। इनका मेल लोकतंत्र की उन प्रासंगिक विशेषताओं से कराएँ जिनकी चर्चा ऊपर की गई है।

उदाहरण	विशेषताएँ
भूटान नरेश ने घोषणा की है कि आगे से वे चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा दी गई सलाह पर काम करेंगे	**कानून का शासन**
भारत से गए अनेक तमिल मजूदरों को श्रीलंका में वोट डालने का अधिकार नहीं दिया गया	**अधिकारों का सम्मान**
नेपाल नरेश ने राजनैतिक जमावड़ों, प्रदर्शनों और रैलियों पर रोक लगा दी	**एक व्यक्ति, एक वोट, एक मोल**
भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने बिहार विधानसभा भंग करने को असंवैधानिक ठहराया	**स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावी मुकाबला**
बांग्लादेश की राजनैतिक पार्टियाँ इस बात पर सहमत हुईं कि चुनाव के समय किसी पार्टी की सरकार न रहे।	**चुने हुए नेताओं द्वारा प्रमुख फ़ैसले करना**

2.3 लोकतंत्र ही क्यों?

मैडम लिंगदोह की कक्षा में एक बहस शुरू हुई थी। उन्होंने इस अध्याय को यहाँ तक पढ़ाने के बाद छात्रों से पूछा कि क्या उन्हें लोकतंत्र ही शासन का सबसे अच्छा स्वरूप लगता है। इस सवाल पर सबने कोई न कोई टिप्पणी की।

लोकतंत्र के गुणों पर चर्चा

योलांदा: हम लोकतांत्रिक देश में रहते हैं। हमने पिछले अध्याय में पढ़ा कि दुनिया भर में सभी जगह लोग लोकतंत्र चाहते हैं। जिन देशों में पहले लोकतांत्रिक शासन प्रणाली नहीं थी वहाँ भी अब इसे अपनाया जा रहा है। सभी महान लोगों ने लोकतंत्र के बारे में अच्छी-अच्छी बातें कही हैं। क्या इतने से ही यह स्पष्ट नहीं हो जाता कि लोकतंत्र सबसे अच्छा है? क्या अब भी इस पर बहस करने की ज़रूरत है?

तांगकिनी: लेकिन लिंगदोह मैडम ने तो कहा था कि हमें किसी चीज़ को सिर्फ़ इसलिए नहीं मान लेना चाहिए कि बाकी सभी ने उसे मान लिया है। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि बाकी सभी लोग गलत रास्ते पर जा रहे हों?

जेनी: हाँ, यह गलत रास्ता ही है। लोकतंत्र ने हमारे देश को क्या दे दिया है? आधी सदी से ज़्यादा समय से लोकतंत्र है और तब भी देश में इतनी अधिक गरीबी है।

रिबियांग: लेकिन लोकतंत्र इसमें क्या कर सकता है? क्या हमारे यहाँ लोकतंत्र के कारण गरीबी है या फिर लोकतंत्र होने के बावजूद भी गरीबी है?

© NCERT not to be republished

जेनी: जो भी है, इससे क्या फर्क पड़ता है? मुद्दा यह है कि हम इसे शासन का सर्वश्रेष्ठ रूप नहीं मान सकते। लोकतंत्र का मतलब है अराजकता, अस्थिरता, भ्रष्टाचार और दिखावा। राजनेता आपस में ही लड़ते रहते हैं। देश की परवाह किसे है?

पाइमोन: तो फिर इसकी जगह कौन-सी प्रणाली होनी चाहिए? क्या अंग्रेज़ी हुकूमत वापस लाई जाए? बाहर से किसी राजा को देश पर शासन के लिए बुलाया जाए?

रोज़: पता नहीं। पर मुझे लगता है कि देश को एक मजबूत नेता की ज़रूरत है–ऐसे नेता की जिसे चुनाव की, संसद की परवाह न हो। एक ही नेता के पास सारे अधिकार हों। देश के हित में जो कुछ ज़रूरी हो वह सब करने में उसे सक्षम होना चाहिए। सिर्फ़ इसी से देश से गरीबी और भ्रष्टाचार खत्म होंगे।

कोई पीछे से चिल्लाया: इसी को तानाशाही कहते हैं।

दोई: अगर वह व्यक्ति सत्ता का उपयोग सिर्फ अपने लिए और अपने परिवार के लिए करने लगे तो क्या होगा? अगर वह खुद भ्रष्ट हो तब?

रोज़: मैं सिर्फ़ ईमानदार, संजीदा और मजबूत नेता की बात कर रही हूँ।

दोई: यह ठीक नहीं है। तुम वास्तविक लोकतंत्र की तुलना आदर्श तानाशाही के साथ कर रही हो। हमें आदर्श की तुलना आदर्श के साथ और वास्तविक की तुलना वास्तविक से करनी चाहिए। जरा तानाशाहों के वास्तविक जीवन के बारे में पढ़ो। वे सबसे ज़्यादा भ्रष्ट, स्वार्थी और क्रूर होते हैं। होता सिर्फ़ यह है कि हमें उनके बारे में जानकारियाँ उपलब्ध नहीं हो पातीं। और, सबसे बड़ी गड़बड़ तो यह है कि आप उन्हें सत्ता से हटा भी नहीं सकते।

मैडम लिंगदोह इस चर्चा को पूरी दिलचस्पी से सुन रही थीं। अब उन्होंने हस्तक्षेप किया: "तुम सब लोग इतने मगन होकर इस बहस में लगे थे यह देखकर मुझे खुशी हुई। मुझे नहीं मालूम कौन सही है, कौन गलत है। यह तो आप लोग सुलझाएँ। पर मुझे लगा कि आप खुले दिमाग से बातें कर रहे थे। अगर किसी ने आपको रोकने की कोशिश की होती या आपको अपनी बात कहने के लिए सजा दी होती तो निश्चित रूप से आपको बहुत बुरा लगता। क्या आप ऐसा उस देश में कर सकते हैं जहाँ लोकतंत्र न हो? क्या यह लोकतंत्र के पक्ष में एक अच्छा तर्क है?"

मैं लिंगदोह मैडम की कक्षा में बैठना चाहती हूँ! यही सही अर्थों में लोकतांत्रिक कक्षा लगती है। ठीक है न?

लोकतंत्र के खिलाफ़ तर्क

इस चर्चा में लोकतंत्र के खिलाफ़ वे अधिकांश तर्क सामने आ गए हैं जिन्हें हम आम तौर पर सुनते हैं। ये तर्क कुछ इस प्रकार के होते हैं:

- लोकतंत्र में नेता बदलते रहते हैं। इससे अस्थिरता पैदा होती है।
- लोकतंत्र का मतलब सिर्फ राजनैतिक लड़ाई और सत्ता का खेल है। यहाँ नैतिकता की कोई जगह नहीं होती।
- लोकतांत्रिक व्यवस्था में इतने सारे लोगों से बहस और चर्चा करनी पड़ती है कि हर फ़ैसले में देरी होती है।
- चुने हुए नेताओं को लोगों के हितों का पता ही नहीं होता। इसके चलते खराब फ़ैसले होते हैं।
- लोकतंत्र में चुनावी लड़ाई महत्त्वपूर्ण और खर्चीली होती है, इसीलिए इसमें भ्रष्टाचार होता है।
- सामान्य लोगों को पता नहीं होता कि उनके लिए क्या चीज़ अच्छी है और क्या चीज़ बुरी; इसलिए उन्हें किसी चीज़ का फ़ैसला नहीं करना चाहिए।

क्या लोकतंत्र के खिलाफ़ कुछ और भी बातें हैं जो आपके मन में रह गई हैं? इनमें से कौन–सा तर्क मुख्य रूप से लोकतंत्र पर ही लागू होता है? इनमें से कौन–सा तर्क किसी भी तरह की सरकार द्वारा सत्ता का दुरुपयोग करने के मामले में लागू नहीं होगा? इनमें से किस तर्क से आप सहमत हैं?

निश्चित रूप से लोकतंत्र सभी समस्याओं को खत्म करने वाली जादू की छड़ी नहीं है। लोकतंत्र ने हमारे देश में या दुनिया के अन्य हिस्सों में भी गरीबी नहीं मिटाई है। सरकार के स्वरूप के तौर पर लोकतंत्र सिर्फ़ इसी बुनियादी चीज़ को देखता है कि लोग अपने बारे में खुद फ़ैसले करें। इससे इस बात की गारंटी नहीं हो जाती कि उनके सभी फ़ैसले अच्छे ही होंगे। लोग गलतियाँ भी कर सकते हैं। इन फ़ैसलों में लोगों को भागीदार बनाने से फ़ैसलों में देरी होती है। यह भी सही है कि लोकतंत्र में जल्दी-जल्दी नेतृत्व परिवर्तन होता है। कई बार बड़े फ़ैसलों और सरकार की कार्यकुशलता पर भी इसका बुरा असर होता है।

इन तर्कों से यह लगता है कि हम लोकतंत्र का जो रूप देखते हैं वह सरकार का आदर्श स्वरूप नहीं हो सकता है। पर वास्तविक जीवन में हमारे सामने यह सवाल नहीं होता। वहाँ सवाल यह होता है कि क्या हमारे पास सरकार के स्वरूपों के जो विकल्प उपलब्ध हैं उनमें लोकतंत्र किसी भी दूसरे से बेहतर है?

लोकतंत्र के पक्ष में तर्क

चीन में 1958-61 के दौरान पड़ा अकाल विश्व इतिहास का अब तक ज्ञात सबसे भयावह अकाल था। इसमें करीब तीन करोड़ लोग भूख से मरे। उन दिनों भारत की आर्थिक स्थिति चीन से कोई बहुत अच्छी नहीं थी। फिर भी भारत में चीन के समान अकाल और भुखमरी की स्थिति नहीं आई। अर्थशास्त्रियों का मानना है कि ऐसा दोनों देशों की सरकारी नीतियों के अंतर के कारण हुआ। भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था होने से भारत सरकार ने खाद्य सुरक्षा के मामले में जिस तरह से काम किया है वैसा करने की ज़रूरत चीनी सरकार ने महसूस नहीं की। अर्थशास्त्रियों का यह भी कहना है कि किसी भी स्वतंत्र और लोकतांत्रिक देश में कभी भी बड़ा अकाल और बड़ी संख्या में भुखमरी नहीं हुई है। अगर चीन में भी बहुदलीय चुनावी व्यवस्था होती, विपक्षी दल होता और सरकार की आलोचना कर सकने वाली स्वतंत्र मीडिया होती तो इतने सारे लोग भूख से नहीं मर सकते थे।

यह उदाहरण लोकतंत्र को सर्वश्रेष्ठ शासन पद्धति बताने वाली विशेषताओं में से एक को बहुत स्पष्ट ढंग से सामने लाता है। लोगों की ज़रूरत के अनुरूप आचरण करने के मामले में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली किसी भी अन्य प्रणाली से बेहतर है। गैर-लोकतांत्रिक सरकार लोगों की ज़रूरतों पर ध्यान दे भी सकती है और नहीं भी, और यह सब सरकार चलाने

© उस्मानी सिमांका, ब्राजील, केगल कार्टून्स, 6 दिसंबर 2004

कार्टून बूझें

यह कार्टून ब्राजील का है जिसे तानाशाही के लंबे दौर का अनुभव है। इसका शीर्षक है 'तानाशाही का छुपा पक्ष'। इस कार्टून में किस छुपे पहलू को उजागर किया गया है? क्या हर तानाशाही का एक पक्ष छुपा रहे यह . जरूरी है? पहले अध्याय में जिन तानाशाहों का ज़िक्र हुआ है उनके बारे में ऐसी जानकारियाँ जुटाएँ। अगर संभव हो तो इनके साथ नाइजीरिया के सनी अबाचा और फिलीपींस के फ़ेर्डिनांड मार्कोस के बारे में भी ऐसी जानकारियाँ इकट्ठी करें।

© NCERT not to be republished

वालों की मर्जी पर निर्भर करेगा। अगर शासकों को कुछ करने की ज़रूरत नहीं लगती तो उनको लोगों की इच्छा के अनुरूप काम करने की ज़रूरत नहीं है। पर लोकतंत्र में यह ज़रूरी है कि शासन करने वाले, आम लोगों की ज़रूरतों पर तत्काल ध्यान दें। **लोकतांत्रिक शासन पद्धति दूसरों से बेहतर है क्योंकि यह शासन का अधिक ज़वाबदेही वाला स्वरूप है।**

गैर-लोकतांत्रिक सरकारों की तुलना में लोकतांत्रिक सरकारों के बेहतर फ़ैसले करने का एक अन्य कारण भी है। लोकतंत्र का आधार व्यापक चर्चा और बहसें हैं। लोकतांत्रिक फ़ैसले में हरदम ज़्यादा लोग शामिल होते हैं, चर्चा करके फ़ैसले होते हैं, बैठकें होती हैं। अगर किसी एक मसले पर अनेक लोगों की सोच लगी हो तो उसमें गलतियों की गुंजाइश कम से कम हो जाती है। इसमें कुछ ज़्यादा समय ज़रूर लगता है लेकिन महत्त्वपूर्ण मसलों पर थोड़ा समय लेकर फ़ैसले करने के अपने लाभ भी हैं। इससे ज्यादा उग्र या गैर-जिम्मेवार फ़ैसले लेने की संभावना घटती है। **इस प्रकार लोकतंत्र बेहतर निर्णय लेने की संभावना बढ़ाता है।**

अगर भारत लोकतंत्र नहीं अपनाता तो क्या हुआ होता? क्या ऐसी स्थिति में हम एक राष्ट्र बने रह सकते थे?

इसी से जुड़ा तीसरा तर्क भी है। **लोकतंत्र मतभेदों और टकरावों को संभालने का तरीका उपलब्ध कराता है।** किसी भी समाज में लोगों के हितों और विचारों में अंतर होगा ही। भारत की तरह भारी सामाजिक विविधता वाले देश में इस तरह का अंतर और भी ज़्यादा होता है। अलग-अलग इलाकों में अलग-अलग समूहों के लोग रहते हैं, विभिन्न भाषाएँ बोलते हैं, उनकी धार्मिक मान्यताएँ अलग-अलग हैं और जातियाँ भी जुदा-जुदा। दुनिया को ये सभी अलग-अलग दृष्टिकोण से देखते हैं और उनकी पसंद में भी अंतर है। एक समूह की पसंद और दूसरे समूह की पसंद में टकराव भी होता है। ऐसे टकराव को कैसे सुलझाएँगे? इसे ताकत के बल पर सुलझाया जा सकता है। जिस समूह के पास ज़्यादा ताकत होगी वह दूसरे को दबा देगा और कमज़ोर समूह को इसे मानना होगा। लेकिन इससे नाराज़गी और असंतोष पैदा होगा। ऐसी स्थिति में विभिन्न समूह ज़्यादा समय तक साथ नहीं रह सकते। लोकतंत्र इस समस्या का एकमात्र शांतिपूर्ण समाधान उपलब्ध कराता है। लोकतंत्र में कोई भी स्थायी विजेता नहीं होता और कोई स्थायी रूप से पराजित नहीं होता। सो विभिन्न समूह एक-दूसरे के साथ शांतिपूर्ण ढंग से रह सकते हैं। भारत की तरह विविधता वाले देश को लोकतंत्र ही एकजुट बनाए हुए है।

बेहतर सरकार और सामाजिक जीवन पर प्रभाव के हिसाब से ये तीन तर्क लोकतंत्र को काफी मज़बूत साबित करते हैं। लेकिन लोकतंत्र के पक्ष में सबसे मज़बूत तर्क उससे बनने वाली सरकार के कामकाज से जुड़ा नहीं है। यह तर्क लोकतंत्र और नागरिकों के रिश्ते का है–लोकतंत्र में नागरिकों की जो हैसियत होती है वह किसी और व्यवस्था में नहीं होती। अगर इस व्यवस्था में बेहतर फ़ैसले लेने और उत्तरदायी सरकार चलाने का काम न भी हो तब भी यह दूसरों से बेहतर है। **लोकतंत्र नागरिकों का सम्मान बढ़ाता है।** लोकतंत्र राजनीतिक समानता के सिद्धांत पर आधारित है, यहाँ सबसे गरीब और अनपढ़ को भी वही दर्जा प्राप्त है जो अमीर और पढ़े-लिखे लोगों को है। लोग किसी शासक

© NCERT not to be republished

की प्रजा न होकर खुद अपने शासक हैं। अगर वे गलतियाँ करते हैं तब भी वे खुद इसके लिए जवाबदेह होते हैं।

लोकतंत्र के पक्ष में आखिरी तर्क यह है कि **लोकतांत्रिक व्यवस्था दूसरों से बेहतर है क्योंकि इसमें हमें अपनी गलती ठीक करने का अवसर भी मिलता है।** जैसा कि हमने ऊपर देखा है, इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि लोकतंत्र में कोई गलती नहीं हो सकती। किसी भी किस्म की सरकार इस बात की गारंटी नहीं दे सकती। इस मामले में लोकतंत्र का लाभ यह है कि इसमें गलतियों को ज़्यादा देर तक छुपाए नहीं रखा जा सकता। इन गलतियों पर सार्वजनिक चर्चा की गुंजाइश लोकतंत्र में है। और फिर, इनमें सुधार करने की गुंजाइश भी है। इसका मतलब यह कि या तो शासक समूह अपना फ़ैसला बदले या शासक समूह को ही बदला जा सकता है। गैर-लोकतांत्रिक सरकारों में ऐसा नहीं किया जा सकता।

चलें, अब इस चर्चा को समेटें। लोकतंत्र हमें सब चीज़ नहीं दे सकता और ना ही यह सभी समस्याओं का समाधान है। लेकिन यह साफ़ तौर पर उन सभी दूसरी व्यवस्थाओं से बेहतर है जिन्हें हम जानते हैं और दुनिया के लोगों को जिनका अनुभव है। यह अच्छे फ़ैसलों के लिए बेहतर अवसर उपलब्ध कराता है, इसमें लोगों की इच्छाओं का सम्मान किए जाने की ज़्यादा संभावना है और इसमें अलग-अलग तरह के लोग ज़्यादा बेहतर ढंग से साथ-साथ रह सकते हैं। अगर यह इनमें से कुछ काम करने में असफल रहता है तब भी इसमें गलती सुधारने की संभावना है और इसमें सभी नागरिकों को ज़्यादा सम्मान मिलता है। इसी वजह से लोकतंत्र को सबसे अच्छी शासन व्यवस्था माना जाता है।

© कैम कार्डी, द ओटावा सिटिज़न, कनाडा, केगल कार्टून्स, 30 मई 2004

कार्टून बूझें

यह कार्टून कनाडा के 2004 संसदीय चुनावों के ठीक पहले प्रकाशित हुआ था। इस कार्टूनिस्ट समेत सभी लोगों का मानना था कि लिबरल पार्टी ही एक बार फिर चुनाव जीत जाएगी। पर जब नतीजे आए तो लिबरल पार्टी चुनाव हार गई। यह कार्टून लोकतंत्र के खिलाफ तर्क देता है या लोकतंत्र के पक्ष में?

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

राजेश और मुज़फ़्फ़र ने एक लेख पढ़ा। इसमें बताया गया था कि किसी भी लोकतांत्रिक देश ने दूसरे लोकतांत्रिक देश के साथ कभी लड़ाई नहीं छेड़ी है। लड़ाई तभी होती है जब कम से कम एक देश में गैर-लोकतांत्रिक सरकार होती है। पर लेख पढ़ने के बाद राजेश ने कहा कि यह लोकतंत्र के पक्ष में कोई अच्छा तर्क नहीं है। ऐसा सिर्फ़ संयोग से हुआ होगा। यह संभव है कि भविष्य में लोकतांत्रिक देशों के बीच भी युद्ध हो। मुज़फ़्फ़र का कहना था कि ऐसा सिर्फ़ संयोग नहीं हो सकता। लोकतंत्र में जिस तरह से फ़ैसले लिए जाते हैं उसमें युद्ध होने का अंदेशा काफ़ी कम हो जाता है।
इन दोनों विचारों में से आपकी सहमति किसकी तरफ़ है और क्यों?

2018-19

2.4 लोकतंत्र का वृहतर अर्थ

इस अध्याय में हमने लोकतंत्र की एक सीमित और विवरणात्मक शैली में चर्चा की। हमने शासन के एक स्वरूप के तौर पर लोकतंत्र को समझा। लोकतंत्र की इस प्रकार की व्याख्या हमें उन न्यूनतम विशेषताओं या गुणों की पहचान कराती है जो लोकतंत्र की ज़रूरत है। हमारे समय में लोकतंत्र का सबसे आम रूप है प्रतिनिधित्व वाला लोकतंत्र। हम जिन देशों में लोकतंत्र होने की बात करते हैं वहाँ सभी लोग शासन नहीं चलाते। सभी लोगों की तरफ से बहुमत को फ़ैसले लेने का अधिकार होता है और यह बहुमत भी स्वयं शासन नहीं चलाता। बहुमत का शासन भी चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से होता है। यह ज़रूरी हो जाता है क्योंकि:

- आधुनिक लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में इतने अधिक लोग होते हैं कि हर बात के लिए सबको साथ बैठाकर सामूहिक फ़ैसला कर पाना संभव ही नहीं हो सकता।
- अगर यह संभव हो तब भी हर एक नागरिक के पास हर फ़ैसले में भाग लेने का समय, इच्छा या योग्यता और कौशल नहीं होता।

इसमें हमें लोकतंत्र की स्पष्ट लेकिन न्यूनतम ज़रूरी समझ मिलती है। इस स्पष्टता से हमें लोकतांत्रिक और अलोकतांत्रिक सरकारों में अंतर करने में मदद मिलती है। लेकिन इससे हमें एक सामान्य लोकतंत्र और एक अच्छे लोकतंत्र के बीच अंतर करने की क्षमता नहीं मिल जाती। इससे हम लोकतंत्र को सरकार से परे जाकर नहीं समझ पाते। इसके लिए हमें लोकतंत्र के वृहत्तर अर्थ को समझना होगा।

कार्टून बूझें

प्रसिद्ध कार्टूनिस्ट आर.के. लक्ष्मण का यह चर्चित कार्टून देश की आजादी की स्वर्ण जयंती पर टिप्पणी करता है। दीवार पर बने चित्रों में से आप किन-किन को पहचानते हैं? क्या देश के बहुत-से आम आदमी इस कार्टून के आम आदमी की तरह सोचते हैं?

© NCERT not to be republished

कई बार हम लोकतंत्र का प्रयोग सरकार से अलग संगठनों के लिए करते हैं। ज़रा इन कथनों पर गौर कीजिए :

- *''हम लोगों का परिवार काफी लोकतांत्रिक है। जब भी फ़ैसला करना होता है तो हम सभी साथ बैठकर आपसी सहमति से फ़ैसले लेते हैं। फ़ैसले में मेरे विचारों का भी उतना ही महत्त्व होता है जितना मेरे पिताजी का।''*
- *''मुझे वे शिक्षक नापसंद हैं जो कक्षा में छात्रों को बोलने और सवाल पूछने की इज़ाजत नहीं देते। मैं तो ऐसा शिक्षक पसंद करूँगी जो लोकतांत्रिक मानसिकता का हो।''*
- *''एक नेता और उसके परिवार के लोग इस पार्टी के सारे फ़ैसले करते हैं। वे क्या लोकतंत्र की बात करेंगे?''*

लोकतंत्र शब्द का इस तरह का प्रयोग फ़ैसले लेने के उसके बुनियादी तरीके को उजागर करता है। लोकतांत्रिक फ़ैसले का मतलब होता है, उस फ़ैसले से प्रभावित होने वाले सभी लोगों के साथ विचार-विमर्श के बाद और उनकी स्वीकृति से फ़ैसले लेना यानि जो बहुत शक्तिशाली न हो उसका भी किसी फ़ैसले में उतना ही महत्त्व होना जितना किसी बहुत शक्तिशाली का। यह बात सरकार या परिवार पर भी लागू होती है और किसी अन्य संगठन पर भी। इस प्रकार लोकतंत्र एक ऐसा सिद्धांत है जिसका प्रयोग जीवन के किसी भी क्षेत्र में हो सकता है।

कई बार हम लोकतंत्र शब्द का प्रयोग किसी मौजूदा सरकार के लिए नहीं करके कुछ आदर्शों के लिए करते हैं। इन्हें पाने का प्रयास सभी लोकतांत्रिक शासनों को ज़रूर करना चाहिए:

- *''इस देश में वास्तविक लोकतंत्र तभी आएगा जब किसी को भी भूखे पेट सोने की ज़रूरत नहीं रहेगी।''*
- *''लोकतंत्र में प्रत्येक नागरिक को फ़ैसला लेने में समान भूमिका निभानी चाहिए। इसके लिए वोट के समान अधिकार भर की ज़रूरत नहीं है। हर नागरिक को इसके लिए सूचना की समान उपलब्धता, बुनियादी शिक्षा, बुनियादी संसाधन और पक्की निष्ठा होनी चाहिए।''*

अगर हम इन आदर्श पैमानों के आधार पर आज की शासन व्यवस्थाओं को परखें तो लगेगा कि दुनिया में कहीं भी लोकतंत्र नहीं है। फिर भी आदर्श के रूप में लोकतंत्र की हमारी समझदारी हमें बार-बार यह याद दिलाती है कि हम लोकतंत्र को इतना महत्त्व क्यों देते हैं। इससे हमें मौजूदा लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं को परखने और उनकी कमजोरियों की पहचान करने में मदद मिलती है। इससे हमें न्यूनतम या कामचलाऊ लोकतंत्र और अच्छे लोकतंत्र के बीच का अंतर समझने में मदद मिलती है।

इस किताब में हमने लोकतंत्र की व्यापक अवधारणा पर ज़्यादा बातें नहीं की हैं। हमने सिर्फ़ शासन के एक तरीके के रूप में लोकतंत्र के कुछ बुनियादी संस्थागत स्वरूपों की चर्चा की है। अगले साल आप लोकतांत्रिक समाज और अपने लोकतंत्र के मूल्यांकन के तरीकों के बारे में और ज़्यादा बातें जानेंगे। इस समय हमें सिर्फ़ इतना याद कर लेना ज़रूरी है कि लोकतंत्र जीवन के अनेक पहलुओं में प्रासंगिक है और लोकतंत्र कई रूप ग्रहण कर सकता है। समानता के आधार पर चर्चा और विचार-विमर्श के बुनियादी सिद्धांत को माना जाए तो लोकतांत्रिक ढंग का फ़ैसला भी कई तरह का हो सकता है। आज की दुनिया में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का सबसे आम रूप है लोगों द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन चलाना। इसके बारे में हम अध्याय 4 में ज़्यादा विस्तार से पढ़ेंगे। लेकिन जब समुदाय छोटा हो तब लोकतांत्रिक फ़ैसले लेने के दूसरे तरीके भी अपनाए जा सकते हैं। फिर तो सभी लोग साथ बैठकर सीधे वहीं फ़ैसले कर सकते हैं। किसी गाँव की ग्रामसभा को इसी तरह काम करना चाहिए। क्या आप लोकतांत्रिक फ़ैसले लेने के कुछ और तरीकों की कल्पना कर सकते हैं?

मेरे गाँव में ग्राम सभा की बैठक कभी नहीं होती। यह कैसा लोकतंत्र है?

© NCERT not to be republished

इसका यह भी मतलब हुआ कि किसी भी देश में आदर्श लोकतंत्र नहीं है। लोकतंत्र की जिन विशेषताओं की चर्चा हमने इस अध्याय में की वे लोकतंत्र की न्यूनतम शर्तें हैं। पर इनसे यह आदर्श लोकतंत्र नहीं बनता। एक आदर्श लोकतंत्र में निर्णय लेने की प्रक्रिया लोकतांत्रिक होनी चाहिए। हर लोकतंत्र को इस आदर्श को पाने का प्रयास करना चाहिए। यह स्थिति एक बार में और एक साथ सभी के लिए हासिल नहीं की जा सकती। इसके लिए लोकतांत्रिक फ़ैसले लेने की प्रक्रिया को बचाए रखने और मजबूत करते जाने की ज़रूरत होती है। नागरिक के तौर पर हम जो भी काम करते हैं वह भी हमारे देश के लोकतंत्र को अच्छा या खराब बनाने में मदद करता है। यही लोकतंत्र की ताकत है और यही कमज़ोरी भी। देश का भविष्य शासकों के कामकाज से भी ज़्यादा नागरिकों के कामकाज पर निर्भर करता है।

यही चीज लोकतंत्र को अन्य शासन व्यवस्थाओं से अलग करती है। राजशाही, तानाशाही या एक दल के शासन जैसी अन्य व्यवस्थाओं में सभी नागरिकों को राजनीति में हिस्सेदारी करने की ज़रूरत नहीं रहती। दरअसल, अधिकांश गैर-लोकतांत्रिक सरकारें चाहती ही नहीं कि लोग राजनीति में हिस्सा लें। लेकिन लोकतांत्रिक व्यवस्था सभी नागरिकों की सक्रिय भागीदारी पर ही निर्भर करती है। इसीलिए लोकतंत्र के बारे में पढ़ाई हो तो लोकतांत्रिक राजनीति पर ही ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

खुद करें, खुद सीखें

अपने विधानसभा और संसदीय क्षेत्र के सभी मतदाताओं की संख्या का पता लगाएँ। फिर यह पता करें कि आपके आसपास के सबसे बड़े स्टेडियम या हॉल में कितने लोग बैठ सकते हैं। फिर सोचें कि क्या एक विधानसभा या संसदीय क्षेत्र के मतदाताओं का एक साथ बैठना, सार्थक चर्चा करना और लोकतांत्रिक फ़ैसले करना संभव है?

प्रश्नावली

1. यहाँ चार देशों के बारे में कुछ सूचनाएँ हैं। इन सूचनाओं के आधार पर आप इन देशों का वर्गीकरण किस तरह करेंगे? इनके सामने 'लोकतांत्रिक', 'अलोकतांत्रिक' और 'पक्का नहीं' लिखें।

   क. देश क : जो लोग देश के आधिकारिक धर्म को नहीं मानते उन्हें वोट डालने का अधिकार नहीं है।
   ख. देश ख : एक ही पार्टी बीते बीस वर्षों से चुनाव जीतती आ रही है।
   ग. देश ग : पिछले तीन चुनावों में शासक दल को पराजय का मुँह देखना पड़ा।
   घ. देश घ : यहाँ स्वतंत्र चुनाव आयोग नहीं है।

2. यहाँ चार अन्य देशों के बारे में कुछ सूचनाएँ दी गई हैं, इन सूचनाओं के आधार पर इन देशों का वर्गीकरण आप किस तरह करेंगे। इनके आगे 'लोकतांत्रिक', 'अलोकतांत्रिक' और 'पक्का नहीं' लिखें।

   क. देश च : संसद सेना प्रमुख की मंजूरी के बिना सेना के बारे में कोई कानून नहीं बना सकती।
   ख. देश छ : संसद न्यायपालिका के अधिकारों में कटौती का कानून नहीं बना सकती।
   ग. देश ज : देश के नेता बिना पड़ोसी देश की अनुमति के किसी और देश से संधि नहीं कर सकते।
   घ. देश झ : देश के सारे आर्थिक फैसले केंद्रीय बैंक के अधिकारी करते हैं जिसे मंत्री भी नहीं बदल सकते।

3. इनमें से कौन-सा तर्क लोकतंत्र के पक्ष में अच्छा नहीं है और क्यों?

   क. लोकतंत्र में लोग खुद को स्वतंत्र और समान मानते हैं।
   ख. लोकतांत्रिक व्यवस्थाएँ दूसरों की तुलना में टकरावों को ज़्यादा अच्छी तरह सुलझाती हैं।
   ग. लोकतांत्रिक सरकारें लोगों के प्रति ज़्यादा उत्तरदायी होती हैं।
   घ. लोकतांत्रिक देश दूसरों की तुलना में ज़्यादा समृद्ध होते हैं।

© NCERT not to be republished
2018-19

4. इन सभी कथनों में कुछ चीज़ें लोकतांत्रिक हैं तो कुछ अलोकतांत्रिक। हर कथन में इन चीज़ों को अलग-अलग करके लिखें।

क. एक मंत्री ने कहा कि संसद को कुछ कानून पास करने होंगे जिससे विश्व व्यापार संगठन (WTO)द्वारा तय नियमों की पुष्टि हो सके।
ख. चुनाव आयोग ने एक चुनाव क्षेत्र के सभी मतदान केंद्रों पर दोबारा मतदान का आदेश दिया जहाँ बड़े पैमाने पर मतदान में गड़बड़ की गई थी।
ग. संसद में औरतों का प्रतिनिधित्व 10 प्रतिशत तक ही पहुँचा है। इसी के कारण महिला संगठनों ने संसद में एक-तिहाई आरक्षण की माँग की है।

5. लोकतंत्र में अकाल और भुखमरी की संभावना कम होती है। यह तर्क देने का इनमें से कौन-सा कारण सही **नहीं** है?

क. विपक्षी दल भूख और भुखमरी की ओर सरकार का ध्यान दिला सकते हैं।
ख. स्वतंत्र अखबार देश के विभिन्न हिस्सों में अकाल की स्थिति के बारे में खबरें दे सकते हैं।
ग. सरकार को अगले चुनाव में अपनी पराजय का डर होता है।
घ. लोगों को कोई भी तर्क मानने और उस पर आचरण करने की स्वतंत्रता है।

6. किसी जिले में 40 ऐसे गाँव हैं जहाँ सरकार ने पेयजल उपलब्ध कराने का कोई इंतजाम नहीं किया है। इन गाँवों के लोगों ने एक बैठक की और अपनी ज़रूरतों की ओर सरकार का ध्यान दिलाने के लिए कई तरीकों पर विचार किया। इनमें से कौन-सा तरीका लोकतांत्रिक **नहीं** है?

क. अदालत में पानी को अपने जीवन के अधिकार का हिस्सा बताते हुए मुकदमा दायर करना।
ख. अगले चुनाव का बहिष्कार करके सभी पार्टियों को संदेश देना।
ग. सरकारी नीतियों के खिलाफ़ जन सभाएँ करना।
घ. सरकारी अधिकारियों को पानी के लिए रिश्वत देना।

प्रश्नावली

7. लोकतंत्र के खिलाफ़ दिए जाने वाले इन तर्कों का जवाब दीजिए:

क. सेना देश का सबसे अनुशासित और भ्रष्टाचार मुक्त संगठन है। इसलिए सेना को देश का शासन करना चाहिए।
ख. बहुमत के शासन का मतलब है मूर्खों और अशिक्षितों का राज। हमें तो होशियारों के शासन की ज़रूरत है, भले ही उनकी संख्या कम क्यों न हो।
ग. अगर आध्यात्मिक मामलों में मार्गदर्शन के लिए हमें धर्म-गुरुओं की ज़रूरत होती है तो उन्हीं को राजनैतिक मामलों में मार्गदर्शन का काम क्यों नहीं सौंपा जाए। देश पर धर्म-गुरुओं का शासन होना चाहिए।

8. इनमें से किन कथनों को आप लोकतांत्रिक समझते हैं? क्यों?

क. बेटी से बाप : मैं शादी के बारे में तुम्हारी राय सुनना नहीं चाहता। हमारे परिवार में बच्चे वहीं शादी करते हैं जहाँ माँ-बाप तय कर देते हैं।
ख. छात्र से शिक्षक : कक्षा में सवाल पूछकर मेरा ध्यान मत बँटाओ।
ग. अधिकारियों से कर्मचारी : हमारे काम करने के घंटे कानून के अनुसार कम किए जाने चाहिए।

© NCERT not to be republished

2018-19

9. एक देश के बारे में निम्नलिखित तथ्यों पर गौर करें और फ़ैसला करें कि आप इसे लोकतंत्र कहेंगे या नहीं। अपने फ़ैसले के पीछे के तर्क भी बताएँ।

क. देश के सभी नागरिकों को वोट देने का अधिकार है और चुनाव नियमित रूप से होते हैं।

ख. देश ने अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों से ऋण लिया। ऋण के साथ यह एक शर्त जुड़ी थी कि सरकार शिक्षा और स्वास्थ्य पर अपने खर्चों में कमी करेगी।

ग. लोग सात से ज़्यादा भाषाएँ बोलते हैं पर शिक्षा का माध्यम सिर्फ़ एक भाषा है, जिसे देश के 52 फीसदी लोग बोलते हैं।

घ. सरकारी नीतियों का विरोध करने के लिए अनेक संगठनों ने संयुक्त रूप से प्रदर्शन करने और देश भर में हड़ताल करने का आह्वान किया है। सरकार ने उनके नेताओं को गिरफ़्तार कर लिया है।

ङ देश के रेडियो और टेलीविजन चैनल सरकारी हैं। सरकारी नीतियों और विरोध के बारे में खबर छापने के लिए अखबारों को सरकार से अनुमति लेनी होती है।

10. अमेरिका के बारे में 2004 में आई एक रिपोर्ट के अनुसार वहाँ के समाज में असमानता बढ़ती जा रही है। आमदनी की असमानता लोकतांत्रिक प्रक्रिया में विभिन्न वर्गों की भागीदारी घटने-बढ़ने के रूप में भी सामने आई। इन समूहों की सरकार के फ़ैसलों पर असर डालने की क्षमता भी इससे प्रभावित हुई हैं। इस रिपोर्ट की मुख्य बातें थीं:

- सन् 2004 में एक औसत अश्वेत परिवार की आमदनी 100 डालर थी जबकि गोरे परिवार की आमदनी 162 डालर। औसत गोरे परिवार के पास अश्वेत परिवार से 12 गुना ज़्यादा संपत्ति थी।
- राष्ट्रपति चुनाव में 75,000 डालर से ज़्यादा आमदनी वाले परिवारों के प्रत्येक 10 में से 9 लोगों ने वोट डाले थे। यही लोग आमदनी के हिसाब से समाज के ऊपरी 20 फीसदी में आते हैं। दूसरी ओर 15,000 डालर से कम आमदनी वाले परिवारों के प्रत्येक 10 में से सिर्फ़ 5 लोगों ने ही वोट डाले। आमदनी के हिसाब से ये लोग सबसे निचले 20 फीसदी हिस्से में आते हैं।
- राजनैतिक दलों का करीब 95 फीसदी चंदा अमीर परिवारों से ही आता है। इससे उन्हें अपनी राय और चिंताओं से नेताओं को अवगत कराने का अवसर मिलता है। यह सुविधा देश के अधिकांश नागरिकों को उपलब्ध नहीं है।
- जब गरीब लोग राजनीति में कम भागीदारी करते हैं तो सरकार भी उनकी चिंताओं पर कम ध्यान देती है–गरीबी दूर करना, रोजगार देना, उनके लिए शिक्षा, स्वास्थ्य और आवास की व्यवस्था करने पर उतना ध्यान नहीं दिया जाता जितना दिया जाना चाहिए। राजनेता अकसर अमीरों और व्यापारियों की चिंताओं पर ही नियमित रूप से गौर करते हैं।

इस रिपोर्ट की सूचनाओं को आधार बनाकर और भारत के उदाहरण देते हुए 'लोकतंत्र और गरीबी' पर एक लेख लिखें।

अधिकांश अखबारों में एक संपादकीय पृष्ठ होता है। इस पन्ने पर अखबार समकालीन घटनाओं पर अपनी राय प्रकाशित करता है। अखबार दूसरे बुद्धिजीवियों और लेखकों के लेख और विचारों को छापता है। इसी पन्ने पर पाठकों की राय और टिप्पणियाँ भी पत्रों के रूप में छपती हैं। किसी अखबार को एक महीने तक पढ़ें और उसके उन संपादकीय टिप्पणियों, लेखों और पाठकों के पत्रों को काटकर जमा करें जिनका रिश्ता लोकतंत्र से है। इनको निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटकर रखो।

- लोकतंत्र का संवैधानिक और कानूनी पहलू
- नागरिक अधिकार
- चुनावी और पार्टियों की राजनीति
- लोकतंत्र की आलोचना

© NCERT not to be republished

अध्याय 3

संविधान निर्माण

परिचय

पिछले अध्याय में हमने देखा कि लोकतंत्र में शासक लोग मनमानी करने के लिए आज़ाद नहीं हैं। कुछ बुनियादी नियम है जिनका पालन नागरिकों और सरकार, दोनों को करना होता है। ऐसे सभी नियमों का सम्मिलित रूप संविधान कहलाता है। देश का सर्वोच्च कानून होने की हैसियत से संविधान नागरिकों के अधिकार, सरकार की शक्ति और उसके कामकाज के तौर-तरीकों का निर्धारण करता है।

इस अध्याय में हम लोकतंत्र के संवैधानिक स्वरूप पर कुछ बुनियादी सवाल उठाएँगे। हमें संविधान की ज़रूरत क्यों होती है? संविधान बनते कैसे हैं? उन्हें कौन बनाता है और किस तरीके से बनाता है? किसी लोकतांत्रिक देश के संविधान को आकार देने वाले मूल्य कौन-कौन से हैं? एक बार संविधान बन जाने के बाद क्या हम बाद में बदलती स्थितियों के अनुरूप उसमें बदलाव कर सकते हैं?

हाल के दिनों में संविधान बनाने का एक उदाहरण दक्षिण अफ्रीका का है। वहाँ क्या हुआ और दक्षिण अफ्रीकी लोगों ने किस तरह अपने संविधान निर्माण के काम को अंजाम दिया? हम इस अध्याय की शुरुआत में इसी अनुभव पर गौर करेंगे। इसके बाद हम भारतीय संविधान के निर्माण और इसके पीछे के मौलिक विचारों-मूल्यों की चर्चा करेंगे और देखेंगे कि यह किस तरह नागरिकों के जीवन और सरकार के अच्छे कामकाज के लिए बढ़िया ढाँचा उपलब्ध कराता है।

© NCERT not to be republished

3.1 दक्षिण अफ्रीका में लोकतांत्रिक संविधान

नेल्सन मंडेला

''मैंने गोरों के प्रभुत्व के खिलाफ़ संघर्ष किया है और मैंने ही अश्वेतों के प्रभुत्व का विरोध किया है। मैंने एक ऐसे लोकतांत्रिक और स्वतंत्र समाज की कामना की है जिसमें सभी लोग पूरे मेल-जोल के साथ रहें और सबको समान अवसर उपलब्ध हों। मैं इसी आदर्श के लिए जीवित रहना और इसे पाना चाहता हूँ और अगर ज़रूरत पड़ी तो इस आदर्श के लिए मैं जान देने को भी तैयार हूँ।''

यह नेल्सन मंडेला का कथन है जिन पर दक्षिण अफ्रीका की गोरों की सरकार ने देशद्रोह का मुकदमा चलाया था। उन्हें और सात अन्य नेताओं को 1964 में देश में रंगभेद से चलने वाली शासन व्यवस्था का विरोध करने के लिए आजीवन कारावास की सजा दी गई थी। अगले 28 वर्षों तक उन्हें दक्षिण अफ्रीका की सबसे भयावह जेल, रोब्बेन द्वीप में कैद रखा गया था।

साउथ अफ्रीका हिस्ट्री ऑनलाइन

रंगभेद वाले दौर (1953) का एक साइन बोर्ड जिससे तब के तनावपूर्ण संबंधों का पता चलता है।

इस साइन बोर्ड पर लिखा हैः *''खतरा! देशी अश्वेत, हिंदुस्तानी और रंगीन चमड़ी वालो। अगर तुम रात में इस परिसर में घुसे तो तुम्हें लापता घोषित कर दिया जाएगा। हथियारबंद सुरक्षा गार्ड्स देखते ही गोली मार देंगेऔर जंगली कुत्ते लाश को नोंच-नोंच कर खा जाएँगे। तुमको चेतावनी दे दी गई है।''*

रंगभेद के खिलाफ़ संघर्ष

रंगभेद नस्ली भेदभाव पर आधारित उस व्यवस्था का नाम है जो दक्षिण अफ्रीका में विशिष्ट तौर पर चलाई गई। दक्षिण अफ्रीका पर यह व्यवस्था यूरोप के गोरे लोगों ने लादी थी। 17वीं और 18वीं सदी में व्यापार करने आई यूरोप की कंपनियों ने दक्षिण अफ्रीका को भी उसी तरह हथियारों और ज़ोर-ज़बर्दस्ती से गुलाम बनाया जैसे भारत को। पर भारत से उलट काफ़ी बड़ी संख्या में गोरे लोग दक्षिण अफ्रीका में बस गए और उन्होंने स्थानीय शासन को अपने हाथों में ले लिया। रंगभेद की राजनीति ने लोगों को उनकी चमड़ी के रंग के आधार पर बाँट दिया। दक्षिण अफ्रीका के स्थानीय लोगों की चमड़ी का रंग काला होता है। आबादी में उनका हिस्सा तीन-चौथाई है और उन्हें 'अश्वेत' कहा जाता था। श्वेत और अश्वेतों के अलावा वहाँ मिश्रित नस्लों जिन्हें 'रंगीन' चमड़ी वाला कहा जाता था और भारत से गए लोग भी थे। गोरे शासक, गोरों के अलावा शेष सब को छोटा और नीचा मानते थे। इन्हें वोट डालने का अधिकार भी नहीं था।

रंगभेद की शासकीय नीति अश्वेतों के लिए खास तौर से दमनकारी थी। उन्हें गोरों की बस्तियों में रहने-बसने की इजाज़त नहीं थी। परमिट होने पर ही वे वहाँ जाकर काम कर सकते थे। रेल गाड़ी, बस, टैक्सी, होटल, अस्पताल, स्कूल और कॉलेज, पुस्तकालय, सिनेमाघर, नाट्यगृह, समुद्र तट, तरणताल और सार्वजनिक शौचालयों तक में गोरों और कालों के लिए एकदम अलग-अलग इंतज़ाम थे। इसे पृथक्करण या अलग-अलग करने का इंतज़ाम कहा जाता था। काले लोग गोरों के लिए आरक्षित जगह तो क्या उनके गिरज़ाघर तक में नहीं जा सकते थे। अश्वेतों को संगठन बनाने और इस भेदभावपूर्ण व्यवहार का विरोध करने का भी अधिकार नहीं था।

1950 से ही अश्वेत, रंगीन चमड़ी वाले और भारतीय मूल के लोगों ने रंगभेद प्रणाली के खिलाफ़ संघर्ष किया। उन्होंने विरोध प्रदर्शन किए और हड़तालें आयोजित कीं। भेदभाव वाली इस शासन प्रणाली का विरोध करने वाले संगठन अफ्रीकी नेशनल कांग्रेस के ंडे तले एकजुट

not to be republished

2018-19

हुए। इनमें कई मज़दूर संगठन और कम्युनिस्ट पार्टी भी शामिल थी। अनेक सम ादार और संवेदनशील गोरे लोग भी रंगभेद समाप्त करने के आंदोलन में अफ्रीकी नेशनल कांग्रेस के साथ आए और उन्होंने इस संघर्ष में प्रमुख भूमिका निभाई। अनेक देशों ने रंगभेद की निंदा की और इस व्यवस्था के खिलाफ़ आवाज़ उठाई। लेकिन गोरी सरकार ने हजारों अश्वेत और रंगीन चमड़ी वाले लोगों की हत्या और दमन करते हुए अपना शासन जारी रखा।

© जान मूलेन, विकीपीडिया, जीएनयू फ्री डाक्यूमेंटेशन लाइसेंस

डरबन समुद्र तट पर अंग्रेज़ी, अफ्रीकांस और ज़ुलू भाषा में लिखा नोटिस बोर्ड। इस पर लिखा है– डरबन नगर, *डरबन समुद्र तट: कानून की धारा 37 के तहत इस तट पर नहाने का अधिकार सिर्फ श्वेत नस्ल के लोगों को ही है।*

खुद करें, खुद सीखें

- **नेल्सन मंडेला के जीवन और संघर्षों पर एक पोस्टर बनाएँ।**
- **अगर उनकी आत्मकथा, 'द लॉंग वाक टू फ्रीडम' उपलब्ध हो तो कक्षा में उसके कुछ हिस्से पढ़कर आपस में चर्चा करें।**

एक नए संविधान की ओर

रंगभेद के खिलाफ़ जब संघर्ष और विरोध बढ़ता गया तो सरकार को यह एहसास हो गया कि अब वह ज़ोर-ज़बर्दस्ती से अश्वेतों पर अपना राज कायम नहीं रख सकती। इसलिए, गोरी सरकार ने अपनी नीतियों में बदलाव शुरू किया। भेदभाव वाले कानूनों को वापस ले लिया गया। राजनैतिक दलों पर लगा प्रतिबंध और मीडिया पर लगी पाबंदियाँ उठा ली गईं। 28 वर्ष तक जेल में कैद रखने के बाद नेल्सन मंडेला को आज़ाद कर दिया गया। आखिरकार 26 अप्रैल 1994 की मध्य रात्रि को दक्षिण अफ्रीका गणराज्य का नया ंडा लहराया और यह दुनिया का एक नया लोकतांत्रिक देश बन गया। रंगभेद वाली शासन व्यवस्था समाप्त हुई और सभी नस्ल के लोगों की मिलीजुली सरकार के गठन का रास्ता खुला।

यह सब कैसे हुआ? आइए इस असाधारण बदलाव के बाद नए दक्षिण अफ्रीका के पहले राष्ट्रपति नेल्सन मंडेला के मुँह से यह जानें:

''ऐतिहासिक रूप से एक-दूसरे के दुश्मन रहे दो समूह रंगभेद वाली शासन व्यवस्था की जगह शांतिपूर्ण ढंग से लोकतांत्रिक व्यवस्था अपनाने पर सहमत हो गए क्योंकि दोनों को एक-दूसरे की भलमनसाहत पर भरोसा था और वे इसे मानने को तैयार थे। मेरी कामना है कि दक्षिण अफ्रीकी लोग कभी भी अच्छाई पर विश्वास करना न छोड़ें और इस बात में आस्था रखें कि मनुष्य जाति पर विश्वास करना ही हमारे लोकतंत्र का आधार है।''

नए लोकतांत्रिक दक्षिण अफ्रीका के उदय के साथ ही अश्वेत नेताओं ने अश्वेत समाज से आग्रह किया कि सत्ता में रहते हुए गोरे लोगों ने जो जुल्म किए थे उन्हें वे भूल जाएँ और गोरों को माफ़ कर दें। उन्होंने कहा कि आइए, अब सभी नस्लों तथा स्त्री-पुरुष की समानता, लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और मानवाधिकारों पर आधारित नए दक्षिण अफ्रीका का निर्माण करें। एक पार्टी ने दमन और नृशंस हत्याओं के ज़ोर पर शासन किया था और दूसरी पार्टी ने आज़ादी की लड़ाई की अगुवाई की थी। नए संविधान के निर्माण के लिए दोनों ही साथ-साथ बैठीं।

अगर दक्षिण के बहुसंख्यक काले लोगों ने गोरों से अपने दमन और शोषण का बदला लेने का निश्चय किया होता तो क्या होता?

© NCERT not to be republished

आज का दक्षिण अफ्रीका: यह तस्वीर आज के दक्षिण अफ्रीका की सोच को उजागर करती है। आज का दक्षिण अफ्रीका खुद को 'इंद्रधनुषी देश' कहता है। क्या आप बता सकते हैं क्यों?

© विकीपीडिया, जीएनयू फ्री डाक्यूमेंटेशन लाइसेंस

दो वर्षों की चर्चा और बहस के बाद उन्होंने जो संविधान बनाया वैसा अच्छा संविधान दुनिया में कभी नहीं बना था। इस संविधान में नागरिकों को जितने व्यापक अधिकार दिए गए हैं उतने दुनिया के किसी संविधान ने नहीं दिए हैं। साथ ही उन्होंने यह फ़ैसला भी किया कि मुश्किल मामलों के समाधान की कोशिशों में किसी को भी अलग नहीं किया जाएगा और न ही किसी को बुरा या दुष्ट मानकर बर्ताव किया जाएगा। इस बात पर भी सहमति बनी कि पहले जिसने चाहे जो कुछ किया हो लेकिन अब से हर समस्या के समाधान में सबकी भागीदारी होगी। दक्षिण अफ्रीकी संविधान की प्रस्तावना ही इस भावना को बहुत खूबसूरत ढंग से व्यक्त करती है (पृष्ठ 54 देखें)।

दक्षिण अफ्रीकी संविधान से दुनिया भर के लोकतांत्रिक लोग प्रेरणा लेते हैं। अभी हाल तक जिस देश की दुनिया भर में अलोकतांत्रिक तौर-तरीकों के लिए निंदा की जाती थी, आज उसे लोकतंत्र के मॉडल के रूप में देखा जाता है। यह काम दक्षिण अफ्रीकी लोगों द्वारा साथ रहने, साथ काम करने के दृढ़ निश्चय और पुराने कड़वे अनुभवों को आगे के इंद्रधनुषी समाज बनाने में एक सबक के रूप में प्रयोग करने की सम ादारी दिखाने के कारण संभव हुआ। एक बार फिर मंडेला के शब्दों में ही ये बातें सम ें:

"दक्षिण अफ्रीका का संविधान इतिहास और भविष्य, दोनों की बातें करता है। एक तरफ़ तो यह एक पवित्र सम ौता है कि दक्षिण अफ्रीकी के रूप में हम, एक-दूसरे से यह वायदा करते हैं कि हम अपने रंगभेदी, क्रूर और दमनकारी इतिहास को फिर से दोहराने की अनुमति नहीं देंगे। पर बात इतनी ही नहीं है। यह अपने देश को इसके सभी लोगों द्वारा वास्तविक अर्थों में सा ा करने का घोषणापत्र भी है-श्वेत और अश्वेत, स्त्री और पुरुष, यह देश पूर्ण रूप से हम सभी का है।"

कहाँ पहुँचे? क्या सम े?

क्या दक्षिण अफ्रीका के स्वतंत्रता संग्राम से आपको भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की याद आई? इन बिंदुओं के आधार पर दोनों संघर्षों में समानताएँ और असमानताएँ बताएँ:

- विभिन्न समुदायों के बीच संबंध
- नेतृत्वः गांधी/मंडेला
- संघर्ष का नेतृत्व करने वाली पार्टीः अफ्रीकी नेशनल कांग्रेस/भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस
- संघर्ष का तरीका
- उपनिवेशवाद का चरित्र

© NCERT not to be republished

3.2 हमें संविधान की ज़रूरत क्यों है ?

हमें एक संविधान की ज़रूरत क्यों है और संविधान क्या करता है, इस बात को हम दक्षिण अफ़्रीका के उदाहरण से सम ा सकते हैं। इस नए लोकतंत्र में दमन करने वाले और दमन सहने वाले, दोनों ही साथ-साथ समान हैसियत से रहने की योजना बना रहे थे। दोनों के लिए ही एक-दूसरे पर भरोसा कर पाना आसान नहीं था। उनके अंदर अपने-अपने किस्म के डर थे। वे अपने हितों की रखवाली भी चाहते थे। बहुसंख्यक अश्वेत इस बात पर चौकस थे कि लोकतंत्र में बहुमत के शासन वाले मूल सिद्धांत से कोई सम ौता न हो। उन्हें बहुत सारे सामाजिक और आर्थिक अधिकार चाहिए थे। अल्पसंख्यक गोरों को अपनी संपत्ति और अपने विशेषाधिकारों की चिंता थी।

लंबे समय तक चली बातचीत के बाद दोनों पक्ष सम ौते का रास्ता अपनाने को तैयार हुए। गोरे लोग बहुमत के शासन का सिद्धांत और एक व्यक्ति एक वोट को मान गए। वे गरीब लोगों और मज़दूरों के कुछ बुनियादी अधिकारों पर भी सहमत हुए। अश्वेत लोग भी इस बात पर सहमत हुए कि सिर्फ़ बहुमत के आधार पर सारे फ़ैसले नहीं होंगे। वे इस बात पर सहमत हुए कि बहुमत के ज़रिए अश्वेत लोग अल्पसंख्यक गोरों की ज़मीन-जायदाद पर कब्ज़ा नहीं करेंगे। यह सम ौता आसान नहीं था। इस सम ौते को लागू करना और भी कठिन था। इसे लागू करने के लिए पहली ज़रूरत थी कि वे एक-दूसरे पर भरोसा करें और अगर वे एक-दूसरे पर भरोसा कर भी लें तो क्या गारंटी है कि भविष्य में इसे तोड़ा नहीं जाएगा?

ऐसी स्थिति में भरोसा बनाने और बरकरार रखने का एक ही तरीका है कि जो बातें तय हुई हैं उन्हें लिखत-पढ़त में ले लिया जाए जिससे सभी लोगों पर उन्हें मानने की बाध्यता रहे। भविष्य में शासकों का चुनाव कैसे होगा, इसके बारे में नियम तय होकर लिखित रूप में आ जाते हैं। चुनी हुई सरकार क्या-क्या कर सकती है और क्या-क्या नहीं कर सकती यह भी लिखित रूप में मौजूद होता है। इन्हीं लिखित नियमों में नागरिकों के अधिकार भी होते हैं। पर ये नियम तभी काम करेंगे जब जीतकर आने वाले लोग इन्हें आसानी से और मनमाने ढंग से नहीं बदलें। दक्षिण अफ़्रीकी लोगों ने इन्हीं चीज़ों का इंतज़ाम किया। वे कुछ बुनियादी नियमों पर सहमत हुए। वे इस बात पर भी सहमत हुए कि ये नियम सबसे ऊपर होंगे और कोई भी सरकार इनकी उपेक्षा नहीं कर सकती। इन्हीं बुनियादी नियमों के लिखित रूप को संविधान कहते हैं।

संविधान रचना सिर्फ़ दक्षिण अफ़्रीका की ही खासियत नहीं है। हर देश में अलग-अलग समूहों के लोग रहते हैं। संभव है कि उनके रिश्ते दक्षिण अफ़्रीका के गोरे और कालों जितने कटुतापूर्ण नहीं हों। पर दुनिया भर में लोगों के बीच विचारों और हितों में फ़र्क रहता है। लोकतांत्रिक शासन प्रणाली हो या न हो पर दुनिया के सभी देशों को ऐसे बुनियादी नियमों की ज़रूरत होती है। यह बात सिर्फ़ सरकारों पर ही लागू नहीं होती। हर संगठन के कायदे-कानून होते हैं, संविधान होता है। इस तरह आपके इलाके का कोई क्लब हो या सहकारी संगठन या फिर राजनैतिक दल, सभी को एक संविधान की ज़रूरत होती है।

खुद करें, खुद सीखें

- अपने इलाके के किसी क्लब, सहकारी संगठन अथवा मज़दूर संघ या राजनैतिक दल के दफ़्तर में जाएँ और उनसे उनके संविधान या संगठन के नियमों की पुस्तिका माँगें तथा उसका अध्ययन करें।
- क्या उसके नियम लोकतांत्रिक नियमों के अनुकूल हैं? क्या वे बिना भेदभाव के सभी को सदस्यता देते हैं?

यह तो गड़बड़ हो गई। अगर सभी बुनियादी बातों पर पहले ही फ़ैसला हो गया था तो संविधान सभा बनाने का क्या औचित्य था?

© NCERT not to be republished

संविधान लिखित नियमों की ऐसी किताब है जिसे किसी देश में रहने वाले सभी लोग सामूहिक रूप से मानते हैं। संविधान सर्वोच्च कानून है जिससे किसी क्षेत्र में रहने वाले लोगों (जिन्हें नागरिक कहा जाता है) के बीच के आपसी संबंध तय होने के साथ-साथ लोगों और सरकार के बीच के संबंध भी तय होते हैं। संविधान अनेक काम करता है जिनमें ये प्रमुख हैं:

- 'पहला' यह साथ रह रहे विभिन्न तरह के लोगों के बीच ज़रूरी भरोसा और सहयोग विकसित करता है।
- 'दूसरा' यह स्पष्ट करता है कि सरकार का गठन कैसे होगा और किसे फ़ैसले लेने का अधिकार होगा।
- 'तीसरा' यह सरकार के अधिकारों की सीमा तय करता है और हमें बताता है कि नागरिकों के क्या अधिकार हैं, और
- चौथा, यह अच्छे समाज के गठन के लिए लोगों की आकांक्षाओं को व्यक्त करता है।

जिन देशों में संविधान है, वे सभी लोकतांत्रिक शासन वाले हों यह ज़रूरी नहीं है। लेकिन जिन देशों में लोकतांत्रिक शासन है वहाँ संविधान का होना ज़रूरी है। ब्रिटेन के खिलाफ़ आज़ादी की लड़ाई के बाद अमेरिकी लोगों ने अपने लिए संविधान का निर्माण किया। फ्रांसीसी क्रांति के बाद फ्रांसीसी लोगों ने एक लोकतांत्रिक संविधान को मान्यता दी। इसके बाद से यह चलन हो गया कि हर लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में एक लिखित संविधान हो।

वल्लभभाई झावरभाई पटेल (1875-1950), जन्मः गुजरात। अंतरिम सरकार में गृह, सूचना एवं प्रसारण मंत्री। वकील और बारदोली किसान सत्याग्रह के नेता। भारतीय रियासतों के विलय में निर्णायक भूमिका। बाद मेंः उप प्रधानमंत्री।

सरोजिनी नायडू (1879-1949) जन्मः आंध्र प्रदेश। कवयित्री, लेखिका और राजनैतिक कार्यकर्ता। कांग्रेस की अग्रणी महिला नेता। बाद मेंः उत्तर प्रदेश की राज्यपाल

3.3 भारतीय संविधान का निर्माण

दक्षिण अफ्रीका की ही तरह भारत का संविधान भी बहुत कठिन परिस्थितियों के बीच बना। भारत जैसे विशाल और विविधता भरे देश के लिए संविधान बनाना आसान काम नहीं था। भारत के लोग तब गुलाम की हैसियत से निकलकर नागरिक की हैसियत पाने जा रहे थे। देश ने धर्म के आधार पर हुए बँटवारे की विभीषिका झेली थी। भारत और पाकिस्तान के लोगों के लिए बँटवारा भारी बर्बादी और दहलाने वाला अनुभव था।

विभाजन से जुड़ी हिंसा में सीमा के दोनों तरफ कम-से-कम दस लाख लोग मारे जा चुके थे। एक बड़ी समस्या और भी थी। अंग्रेज़ों ने देसी रियासतों के शासकों को यह आज़ादी दे दी थी कि वे भारत या पाकिस्तान जिसमें इच्छा हो अपनी रियासत का विलय कर दें या स्वतंत्र रहें। इन रियासतों का विलय मुश्किल और अनिश्चय भरा काम था। जब संविधान लिखा जा रहा था तब देश का भविष्य इतना सुरक्षित और चैन भरा नहीं लगता था जितना आज है। संविधान निर्माताओं को देश के वर्तमान और भविष्य की चिंता थी।

खुद करें, खुद सीखें

अपने दादा-दादी, नाना-नानी या इलाके के किसी बुज़ुर्ग से बात कीजिए। उनसे पूछिए कि क्या उनको आज़ादी या बँटवारे या संविधान निर्माण के बारे में कुछ बातें याद हैं। उस समय लोगों को किन बातों की उम्मीद थी और क्या-क्या अंदेशे थे? अपनी कक्षा में इन बातों की चर्चा कीजिए।

संविधान निर्माण का रास्ता

सारी मुश्किलों के बावजूद भारतीय संविधान निर्माताओं को एक बड़ा लाभ था। दक्षिण अफ्रीका में जिस तरह संविधान निर्माण के दौर में ही सारी बातों पर सहमति बनानी पड़ी वैसी स्थिति उस समय के भारत में नहीं थी। भारत में

© NCERT not to be republished

आज़ादी की लड़ाई के दौरान ही लोकतंत्र समेत अधिकांश बुनियादी बातों पर राष्ट्रीय सहमति बनाने का काम हो चुका था। हमारा राष्ट्रीय आंदोलन सिर्फ़ एक विदेशी सत्ता के खिलाफ़ संघर्ष भर नहीं था। यह न केवल अपने समाज को फिर से जगाने का वरन् अपने समाज और राजनीति को बदलने और नए सिरे से गढ़ने का आंदोलन भी था। आज़ादी के बाद भारत को किस रास्ते पर चलना चाहिए इसे लेकर आज़ादी के संघर्ष के दौरान भी तीखे मतभेद थे। ऐसे कुछ मतभेद अब तक भी बने हुए हैं। पर कुछ बुनियादी विचारों पर लगभग सभी लोगों की सहमति कायम हो चुकी थी।

1928 में ही मोतीलाल नेहरू और कांग्रेस के आठ अन्य नेताओं ने भारत का एक संविधान लिखा था। 1931 में कराची में हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में एक प्रस्ताव में यह रूपरेखा रखी गई थी कि आज़ाद भारत का संविधान कैसा होगा। इन दोनों ही दस्तावेज़ों में स्वतंत्र भारत के संविधान में सार्वभौम वयस्क मताधिकार, स्वतंत्रता और समानता का अधिकार और अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा की बात कही गई थी। इस प्रकार संविधान की रचना करने के लिए बैठने से पहले ही कुछ बुनियादी मूल्यों पर सभी नेताओं की सहमति बन चुकी थी।

औपनिवेशिक शासन की राजनैतिक संस्थाओं और व्यवस्थाओं को जानने-सम ाने से भी नई राजनैतिक संस्थाओं का स्वरूप तय करने में मदद मिली। अंग्रेज़ी हुकूमत ने बहुत कम लोगों को वोट का अधिकार दिया था। इसके आधार पर अंग्रेज़ों ने जिस विधायिका का गठन किया था वह बहुत कमज़ोर थी। 1937 के बाद पूरे ब्रिटिश शासन वाले भारत में प्रादेशिक असेंबलियों के लिए चुनाव कराए गए थे। इनमें बनी सरकारें पूरी तरह लोकतांत्रिक नहीं थीं। पर विधानसभाओं में जाने और काम करने का अनुभव तब बहुत लाभदायक हुआ क्योंकि इन्हीं भारतीय लोगों को अपनी संस्थाएँ और व्यवस्थाएँ बनानी थीं और चलाना था। इसी कारण भारतीय संविधान में कई संस्थाओं और व्यवस्थाओं को पुरानी व्यवस्था से लगभग जस का तस अपना लिया गया जैसे कि 1935 का भारत सरकार कानून।

आज़ादी के बाद भारत के स्वरूप को लेकर वर्षों पहले से चले चिंतन और बहसों ने भी काफी लाभ पहुँचाया। हमारे नेताओं में इतना आत्मविश्वास आ गया था कि उन्हें बाहर के विचार और अनुभवों को अपनी ज़रूरत के अनुसार अपनाने में कोई हिचक नहीं हुई। हमारे अनेक नेता फ्रांसीसी क्रांति के आदर्शों, ब्रिटेन के संसदीय लोकतंत्र के कामकाज और अमेरिका के अधिकारों की सूची से काफ़ी प्रभावित थे। रूस में हुई समाजवादी क्रांति ने भी अनेक भारतीयों को प्रभावित किया और वे सामाजिक और आर्थिक समता पर आधारित व्यवस्था बनाने की कल्पना करने लगे थे। लेकिन वे दूसरों की सिर्फ नकल नहीं कर रहे थे। हर कदम पर वे यह सवाल ज़रूर पूछते थे कि क्या ये चीज़ें भारत के लिए उपयुक्त होंगी। इन सभी चीज़ों ने हमारे संविधान के निर्माण में मदद की।

संविधान सभा

फिर, भारत के संविधान के निर्माता कौन थे? यहाँ आपको संविधान बनाने में प्रमुख भूमिका निभाने वाले कुछ नेताओं के बारे में बहुत संक्षेप में कुछ-कुछ जानकारियाँ मिलेंगी।

चुने गए जनप्रतिनिधियों की जो सभा संविधान नामक विशाल दस्तावेज़ को लिखने का काम करती है उसे संविधान सभा कहते हैं। भारतीय संविधान सभा के लिए जुलाई 1946 में चुनाव हुए थे। संविधान सभा की पहली बैठक दिसंबर 1946 को हुई थी। इसके तत्काल बाद देश दो हिस्सों–भारत और पाकिस्तान–में बँट गया। संविधान सभा भी दो हिस्सों में बँट गई–भारत की संविधान सभा और पाकिस्तान की

अबुल कलाम आज़ाद
(1888-1958), जन्मः सऊदी अरब। शिक्षाविद्, लेखक और धर्मशास्त्रों के ज्ञाता; अरबी के विद्वान। कांग्रेसी नेता, राष्ट्रीय आंदोलन में अग्रणी भूमिका। मुस्लिम अलगाववादी राजनीति के विरोधी। बाद में: पहले केंद्रीय मंत्रिमंडल में शिक्षा मंत्री।

टी.टी. कृष्णामचारी
(1899-1974)
जन्मः तमिलनाडु। प्रारूप कमेटी के सदस्य। उद्यमी और कांग्रेसी नेता। बाद में: केंद्रीय मंत्रिमंडल में वित्त मंत्री।

राजेंद्र प्रसाद
(1884-1963), जन्मः बिहार। संविधान सभा के अध्यक्ष। वकील और चंपारण सत्याग्रह के प्रमुख भागीदार। तीन बार कांग्रेस अध्यक्ष। बाद में: भारत के प्रथम राष्ट्रपति।

© NCERT not to be republished

जयपाल सिंह
(1903-1970), जन्मः ारखंड। खिलाड़ी और शिक्षाविद्। भारतीय हॉकी टीम के पहले कप्तान। आदिवासी महासभा के संस्थापक अध्यक्ष। बाद में: ारखंड पार्टी के संस्थापक।

एच.सी. मुखर्जी
(1887-1956), जन्मः बंगाल। संविधान सभा के उपाध्यक्ष। प्रसिद्ध लेखक और शिक्षाविद्। कांग्रेसी नेता। ऑल इंडिया क्रिश्चियन कौंसिल और बंगाल विधानसभा के सदस्य। बाद में: बंगाल के राज्यपाल।

जी. दुर्गाबाई देशमुख
(1909-1981), जन्मः आंध्र प्रदेश। वकील और महिला मुक्ति कार्यकर्ता। आंध्र महिला सभा की संस्थापक। कांग्रेस की सक्रिय नेता। बाद में: केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड की संस्थापक अध्यक्ष।

खुद करें, खुद सीखें

अपने राज्य या इलाके से संविधान सभा में गए ऐसे सदस्य का नाम पता करें जिनका ज़िक्र यहाँ नहीं किया गया है। उस नेता की तस्वीर जुटाएँ या उनका स्केच बनाएँ। हमने जिस तरह संक्षेप में कुछ नेताओं के बारे में सूचना दी है उसी तरह उनके बारे में भी ब्यौरा दें। यानि नाम (जन्म वर्ष-मृत्यु वर्ष), जन्म स्थान (वर्तमान राजनैतिक सीमाओं के आधार पर), राजनैतिक गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण, संविधान सभा के बाद की भूमिका।

संविधान सभा। भारतीय संविधान लिखने वाली सभा में 299 सदस्य थे। इसने 26 नवंबर 1949 को अपना काम पूरा कर लिया। संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। इसी दिन की याद में हम हर साल 26 जनवरी को गणतंत्र दिवस मनाते हैं।

इस सभा द्वारा पचास साल से भी पहले बनाए संविधान को हम क्यों मानते हैं? हमने पहले ही एक कारण का ज़िक्र किया है। संविधान सिर्फ़ संविधान सभा के सदस्यों के विचारों को ही व्यक्त नहीं करता है। यह अपने समय की व्यापक सहमतियों को व्यक्त करता है। दुनिया के कई देशों में संविधान को फिर से लिखना पड़ा क्योंकि संविधान में दर्ज़ बुनियादी बातों पर ही वहाँ के सभी सामाजिक समूहों या राजनैतिक दलों की सहमति नहीं थी। कई देशों में संविधान है पर वह कागज़ का टुकड़ा या किसी भी अन्य किताब की तरह का दस्तावेज़ भर है। कोई भी उस पर आचरण नहीं करता। पर हमारे संविधान का अनुभव एकदम अलग है। पिछली आधी सदी से ज़्यादा की अवधि में अनेक सामाजिक समूहों ने संविधान के कुछ प्रावधानों पर सवाल उठाए। पर किसी भी बड़े सामाजिक समूह या राजनैतिक दल ने खुद संविधान की वैधता पर सवाल नहीं उठाया। यह हमारे संविधान की एक असाधारण उपलब्धि है।

संविधान को मानने का दूसरा कारण यह है कि संविधान सभा भी भारत के लोगों का ही प्रतिनिधित्व कर रही थी। उस समय सार्वभौम वयस्क मताधिकार नहीं था। इसलिए संविधान सभा का चुनाव देश के लोग प्रत्यक्ष ढंग से नहीं कर सकते थे। इसका चुनाव मुख्य रूप से उन प्रांतीय असेंबलियों के सदस्यों ने ही किया था जिनका ज़िक्र हम पहले कर चुके हैं। इसके कारण देश के सभी भौगोलिक क्षेत्रों का इसमें उचित प्रतिनिधित्व हो गया था। इस सभा में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्यों का प्रभुत्व था जिसने राष्ट्रीय आंदोलन की अगुवाई की थी। पर स्वयं कांग्रेस के अंदर कई राजनैतिक समूह और विचारों के लोग थे। सभा में कई सदस्य ऐसे थे जो कांग्रेस के विचारों से सहमत नहीं थे। सामाजिक रूप से इस सभा में सभी समूह, जाति, वर्ग, धर्म और पेशों के लोग थे। अगर संविधान सभा का गठन सार्वभौम वयस्क मताधिकार के ज़रिए हुआ होता तब भी इसका स्वरूप काफी कुछ इसी तरह का होता।

और अंततः जिस तरह संविधान सभा ने काम किया, वह संविधान को एक तरह की पवित्रता और वैधता देता है। संविधान सभा का काम काफी व्यवस्थित, खुला और सर्वसम्मति बनाने के प्रयास पर आधारित था। सबसे पहले कुछ बुनियादी सिद्धांत तय किए गए और उन पर सबकी सहमति बनाई गई। फिर प्रारूप कमेटी के प्रमुख डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने चर्चा के लिए एक प्रारूप संविधान बनाया। संविधान के प्रारूप की प्रत्येक धारा पर कई-कई दौर में चर्चा हुई। दो हज़ार से ज़्यादा संशोधनों पर विचार हुआ।

तीन वर्षों में कुल 114 दिनों की गंभीर चर्चा हुई। सभा में पेश हर प्रस्ताव, हर शब्द और वहाँ कही गई हर बात को रिकॉर्ड किया गया और संभाला गया। इन्हें *कांस्टीट्यूएंट असेम्बली डिबेट्स* नाम से 12 मोटे-मोटे खंडों में प्रकाशित किया गया। इन्हीं बहसों से हर प्रावधान के पीछे की सोच और तर्क को सम ा जा सकता है। संविधान की व्याख्या के लिए भी इस बहस के दस्तावेज़ों का उपयोग होता है।

© NCERT not to be republished

कहाँ पहुँचे? क्या सम ो?

भारतीय संविधान निर्माताओं के बारे में यहाँ दी गई सभी जानकारियों को पढ़ें। आपको यह जानकारी कंठस्थ करने की ज़रूरत नहीं है। इस आधार पर निम्नलिखित कथनों के पक्ष में उदाहरण प्रस्तुत करें:

1. संविधान सभा में ऐसे अनेक सदस्य थे जो कांग्रेसी नहीं थे।
2. सभा में समाज के अलग-अलग समूहों का प्रतिनिधित्व था।
3. सभा के सदस्यों की विचारधारा भी अलग-अलग थी।

बलदेव सिंह
(1901-1961), जन्मः हरियाणा। सफल उद्यमी और पंजाब विधानसभा में पंथक अकाली पार्टी के नेता। संविधान सभा में कांग्रेस द्वारा मनोनीत। बाद में: केंद्रीय मंत्रिमंडल में रक्षा मंत्री।

3.4 भारतीय संविधान के बुनियादी मूल्य

इस किताब में हम विभिन्न विषयों पर संविधान के प्रावधानों का अध्ययन करेंगे। अभी हम यही जानने की कोशिश करें कि हमारे संविधान के पीछे का दर्शन क्या है। यह काम हम दो तरीकों से कर सकते हैं। अपने नेताओं के संविधान संबंधी विचार पढ़कर हम इस बात को सम ा सकते हैं। परंतु, हमारा संविधान स्वयं अपने दर्शन के बारे में जो कहता है उसे पढ़ना भी उतना ही ज़रूरी है। संविधान की प्रस्तावना यही काम करती है। आइए इस पर बारी-बारी से गौर करें।

सपने और वायदे

आपमें से कुछ को भारतीय संविधान निर्माताओं की सूची में एक बड़ा नाम न होने पर हैरानी हुई होगी यानि महात्मा गांधी का नाम। वे संविधान सभा के सदस्य नहीं थे। पर संविधान सभा के अनेक सदस्य उनके विचारों के अनुयायी थे। 1931 में अपनी पत्रिका 'यंग इंडिया' में उन्होंने संविधान से अपनी अपेक्षा के बारे में लिखा था:

कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी
(1887-1971), जन्मः गुजरात। वकील, इतिहासकार और भाषाविद्। कांग्रेसी नेता और गांधीवादी। बाद में: केंद्रीय मंत्रिमंडल में मंत्री। स्वतंत्र पार्टी के संस्थापक।

मैं भारत के लिए ऐसा संविधान चाहता हूँ जो उसे गुलामी और अधीनता से मुक्त करे... मैं ऐसे भारत के लिए प्रयास करूँगा जिसे सबसे गरीब व्यक्ति भी अपना माने और उसे लगे कि देश को बनाने में उसकी भी भागीदारी है, ऐसा भारत जिसमें लोगों का उच्च वर्ग और निम्न वर्ग न रहे, ऐसा भारत जिसमें सभी समुदाय के लोग पूरे मेल-जोल से रहें। ऐसे भारत में छुआछूत या शराब और नशीली चीज़ों के लिए कोई जगह न हो। औरतों को भी मर्दों जैसे अधिकार हों...मैं इससे कम पर संतुष्ट नहीं होऊँगा।

श्यामा प्रसाद मुखर्जी
(1901-1953), जन्मः पश्चिम बंगाल। अंतरिम सरकार में उद्योग एवं आपूर्ति मंत्री। शिक्षाविद् और वकील। हिंदू महासभा में सक्रिय। बाद में: भारतीय जनसंघ के संस्थापक।

भेदभाव और गैर-बराबरी मुक्त भारत का सपना डॉ. अंबेडकर के मन में भी था जिन्होंने संविधान निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। असमानता कैसे दूर की जा सकती है इस बारे में उनके विचार दूसरों से अलग थे। उन्होंने अक्सर गांधी और उनके नज़रिए की कटु आलोचना की। संविधान सभा में दिए गए अपने अंतिम भाषण में उन्होंने अपनी चिंताओं को बहुत स्पष्ट ढंग से रखा था:

© NCERT not to be republished

2018-19

भीमराव रामजी अंबेडकर
(1891-1956), जन्म: मध्य प्रदेश। प्रारूप कमेटी के अध्यक्ष। सामाजिक क्रांतिकारी चिंतक, जातिगत बँटवारे और भेदभाव के ख़िलाफ़ अग्रणी आंदोलनकारी। बाद में: स्वतंत्र भारत की पहली सरकार में कानून मंत्री। रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इंडिया के संस्थापक।

"26 जनवरी 1950 को हम विरोधाभासों से भरे जीवन में प्रवेश करने जा रहे हैं। राजनीति के मामले में हमारे यहाँ समानता होगी पर आर्थिक और सामाजिक जीवन असमानताओं से भरा होगा। राजनीति में हम एक व्यक्ति–एक वोट और 'हर वोट का समान महत्व' के सिद्धांत को मानेंगे। अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में हम अपने सामाजिक और आर्थिक ढाँचे के कारण ही, 'एक व्यक्ति–एक वोट' के सिद्धांत को नकारना जारी रखेंगे। हम इस विरोधाभासपूर्ण जीवन को कितने लंबे समय तक जीते रहेंगे? हम अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में कब तक समानता को नकारते रहेंगे? अगर यह नकारना ज़्यादा लंबे समय तक चला तो हम अपने राजनैतिक लोकतंत्र को ही संकट में डालेंगे।"

आखिर में आइए हम 15 अगस्त 1947 की मध्य रात्रि के समय संविधान सभा में दिए जवाहर लाल नेहरू के प्रसिद्ध भाषण को याद करें:

जवाहर लाल नेहरू
(1889-1964), जन्म: उत्तर प्रदेश। अंतरिम सरकार के प्रधानमंत्री। वकील और कांग्रेस नेता। समाजवाद, लोकतंत्र और साम्राज्यवाद-विरोध के पक्षधर। बाद में: भारत के प्रथम प्रधानमंत्री।

"वर्षों पहले हमने अपनी नियति के साथ साक्षात्कार किया था, और अब वक्त आ गया है कि हम अपने वायदों पर अमल करें–पूरी तरह या हर तरह से नहीं तो काफ़ी हद तक। घड़ियाँ जब ठीक मध्य रात्रि का घंटा बजाएँगी, जब सारी दुनिया सोती होगी, तब भारत नए जीवन की शुरुआत करेगा, आज़ाद होगा। इतिहास में कभी-कभार ही सही पर एक ऐसा क्षण ज़रूर आता है, जब हम पुराने को छोड़कर नए में प्रवेश करते हैं, जब एक युग का अंत होता है और जब लंबे समय से किसी राष्ट्र की दबी हुई आत्मा प्रस्फुटित होती है, आवाज़ पाती है। ऐसे पवित्र क्षण में हम अपने आपको, भारत और उसके लोगों तथा उससे भी अधिक मानवता की सेवा में समर्पित करें, यही हमारे लिए उचित है। आज़ादी और सत्ता ज़िम्मेवारियाँ लाती है। भारत के संप्रभु लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाली इस संप्रभुता संपन्न सभा के ऊपर अब ज़िम्मेवारी है। आज़ादी के जन्म से पूर्व हमने पूरी प्रसव पीड़ा ली है और इस क्रम में हुए दुखों से हमारा दिल भारी है। इसमें कुछ दर्द अभी भी बने हुए हैं। फिर भी, इतिहास अब बीत चुका है और अब भविष्य हमें सुनहरे संकेत दे रहा है।

यह भविष्य बहुत आराम करने या सुस्ताने का नहीं बल्कि उन वायदों को पूरा करने के लिए निरंतर प्रयास करने का है जिन्हें हमने अकसर किया है और एक शपथ हम आज भी लेंगे। भारत की सेवा करने का अर्थ है, दुख और परेशानियों में पड़े लाखों-करोड़ों लोगों की सेवा करना। इसका अर्थ है दरिद्रता का, अज्ञान और बीमारियों का, अवसर की असमानता का अंत। हमारे युग के महानतम आदमी की कामना हर आँख से आँसू पोंछने की है। संभव है यह काम हमारे भर से पूरा न हो पर जब तक लोगों की आँखों में आँसू हैं, कष्ट है तब तक हमारा काम खत्म नहीं होगा।"

सोमनाथ लाहिड़ी
(1901-1984), जन्म: पश्चिम बंगाल। लेखक और संपादक। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेता। बाद में: पश्चिम बंगाल विधानसभा में सदस्य।

कहाँ पहुँचे? क्या सम ो?

पहले दिए तीनों उद्धरणों को गौर से पढ़ें।

- पहचानिए कि कौन-सा एक विचार इन तीनों उद्धरणों में उपस्थित है।
- इन तीनों उद्धरणों में इस सा ो विचार को व्यक्त करने का तरीका किस तरह एक-दूसरे से भिन्न है?

© NCERT not to be republished

संविधान का दर्शन

जिन मूल्यों ने स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरणा दी और उसे दिशा-निर्देश दिए तथा जो इस क्रम में जाँच-परख लिए गए वे ही भारतीय लोकतंत्र का आधार बने। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में इन्हें शामिल किया गया। भारतीय संविधान की सारी धाराएँ इन्हीं के अनुरूप बनी हैं। संविधान की शुरुआत बुनियादी मूल्यों की एक छोटी-सी उद्देश्यिका के साथ होती है। इसे संविधान की प्रस्तावना या उद्देशिका कहते हैं। अमेरिकी संविधान की प्रस्तावना से प्रेरणा लेकर समकालीन दुनिया के अधिकांश देश अपने

संयुक्त राज्य के हम सभी लोग

अधिक अच्छा संघ बनाने, न्याय की स्थापना करने, घरेलू शांति बनाने, सा ा सुरक्षा व्यवस्था बनाने, जन कल्याण को बढ़ावा देने तथा अपने और अपनी समृद्धि में स्वतंत्रता का लाभ लेने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका के इस संविधान को स्थापित करते हैं और इसका अभिषेक करते हैं।"

हम दक्षिण अफ्रीका के लोग

अपने इतिहास में हुए अन्याय को स्वीकार करते हैं; अपनी भूमि पर आज़ादी और न्याय के लिए संघर्ष करने में कष्ट उठाने वालों को सलाम करते हैं; अपने देश को बनाने और विकसित करने में मदद करने वालों का आदर करते हैं; और मानते हैं कि दक्षिण अफ्रीका उन सभी का है जो यहाँ रहते हैं, यहाँ की विविधता से जुड़े हैं; इसलिए स्वतंत्र रूप से चुने अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से अपने गणतंत्र के सर्वोच्च कानून के तौर पर इस संविधान को स्वीकार करते हैं जिससे पहले के विभाजन मिटें और लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और मौलिक मानवाधिकारों पर आधारित एक समाज बन सके; एक ऐसे लोकतांत्रिक और मुक्त समाज की स्थापना हो जिसमें सरकार लोगों की इच्छा के अनुसार बने और चले तथा हर नागरिक को कानून से समान संरक्षण मिले; सभी नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो और हर एक व्यक्ति की संभावनाओं को फलने-फूलने की स्वतंत्रता हो और एक संयुक्त और लोकतांत्रिक दक्षिण अफ्रीका का निर्माण हो जो राष्ट्रों के समूह में एक संप्रभु देश के तौर पर अपना उचित स्थान प्राप्त कर सके। ईश्वर, हमारे लोगों की रक्षा करे।

संविधान की शुरुआत एक प्रस्तावना के साथ करते हैं।

आइए हम अपने संविधान की प्रस्तावना को बहुत सावधानी से पढ़ें और उसमें आए प्रत्येक महत्वपूर्ण शब्द के मतलब को सम ें:

संविधान की प्रस्तावना लोकतंत्र पर एक खूबसूरत कविता-सी लगती है। इसमें वह दर्शन शामिल है जिस पर पूरे संविधान का निर्माण हुआ है। यह दर्शन सरकार के किसी भी कानून और फ़ैसले के मूल्यांकन और परीक्षण का मानक तय करता है—इसके सहारे परखा जा सकता है कि कौन कानून, कौन फ़ैसला अच्छा या बुरा है। इसमें भारतीय संविधान की आत्मा बसती है।

not to be republished

हम भारत के लोग, भारत को...
भारत के संविधान का निर्माण और अधिनियमन भारत के लोगों ने अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से किया है न कि इसे किसी राजा या बाहरी आदमी ने उन्हें दिया है।

समाजवादी
समाज में संपदा सामूहिक रूप से पैदा होती है और समाज में उसका बँटवारा समानता के साथ होना चाहिए। सरकार ज़मीन और उद्योग-धंधों की हकदारी से जुड़े कायदे-कानून इस तरह बनाए कि सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ कम हों।

प्रभुत्व-संपन्न
लोगों को अपने से जुड़े हर मामले में फ़ैसला करने का सर्वोच्च अधिकार है। कोई भी बाहरी शक्ति भारत की सरकार को आदेश नहीं दे सकती।

पंथ-निरपेक्ष
नागरिकों को किसी भी धर्म को मानने की पूरी स्वतंत्रता है। लेकिन कोई धर्म आधिकारिक नहीं है। सरकार सभी धार्मिक मान्यताओं और आचरणों को समान सम्मान देती है।

गणराज्य
शासन का प्रमुख लोगों द्वारा चुना हुआ व्यक्ति होगा न कि किसी वंश या राज-खानदान का।

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण
प्रभुत्व-संपन्न, समाजवादी,
पंथ-निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक
गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को:
सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**
विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म
और उपासना की
स्वतंत्रता,
प्रतिष्ठा और अवसर की **समता,**
प्राप्त कराने के लिए,
तथा उन **सब में** व्यक्ति की गरिमा और
राष्ट्र की एकता और अखंडता
सुनिश्चित करने वाली
बंधुता बढ़ाने के लिए
दृढ़ संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में**
आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई.
(मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत् दो हजार छह
विक्रमी) को एतद्द्वारा इस **संविधान को अंगीकृत,**
अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

लोकतंत्रात्मक
सरकार का एक ऐसा स्वरूप जिसमें लोगों को समान राजनैतिक अधिकार प्राप्त रहते हैं, लोग अपने शासन का चुनाव करते हैं और उसे जवाबदेह बनाते हैं। यह सरकार कुछ बुनियादी नियमों के अनुरूप चलती है।

न्याय
नागरिकों के साथ उनकी जाति, धर्म और लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता।

स्वतंत्रता
नागरिक कैसे सोचें, किस तरह अपने विचारों को अभिव्यक्त करें और अपने विचारों पर किस तरह अमल करें, इस पर कोई अनुचित पाबंदी नहीं है।

समता
कानून के समक्ष सभी लोग समान हैं। पहले से चली आ रही सामाजिक असमानताओं को समाप्त होना होगा। सरकार हर नागरिक को समान अवसर उपलब्ध कराने की व्यवस्था करे।

बंधुता
हम सभी ऐसा आचरण करें जैसे कि हम एक परिवार के सदस्य हों। कोई भी नागरिक किसी दूसरे नागरिक को अपने से कमतर न माने

© NCERT not to be republished

संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत और दक्षिण अफ्रीका के संविधानों की प्रस्तावना की तुलना कीजिए।

- इन सभी में जो विचार सा ा हैं, उनकी सूची बनाएँ।
- इन सभी में कम-से-कम एक बड़े अंतर को रेखांकित करें।
- तीनो में से कौन-सी प्रस्तावना अतीत की ओर संकेत करती है?
- इन प्रस्तावनाओं में से से कौन-सी ईश्वर का आह्वान नहीं करती?

कहाँ पहुँचे? क्या सम ो?

संस्थाओं का स्वरूप

संविधान सिर्फ मूल्यों और दर्शन का बयान भर नहीं है। जैसा कि हमने पहले ज़िक्र किया है, संविधान इन मूल्यों को संस्थागत रूप देने की कोशिश है। जिसे हम भारत का संविधान कहते हैं उसका अधिकांश हिस्सा इन्हीं व्यवस्थाओं को तय करने वाला है। यह एक बहुत ही लंबा और विस्तृत दस्तावेज़ है इसलिए समय-समय पर इसे नया रूप देने के लिए इसमें बदलाव की ज़रूरत पड़ती है। भारतीय संविधान के निर्माताओं को लगा कि इसे लोगों की भावनाओं के अनुरूप चलना चाहिए और समाज में हो रहे बदलावों से दूर नहीं रहना चाहिए। उन्होंने इसे पवित्र, स्थायी और न बदले जा सकने वाले कानून के रूप में नहीं देखा था। इसलिए उन्होंने बदलावों को समय-समय पर शामिल करने का प्रावधान भी रखा। इन बदलावों को संविधान संशोधन कहते हैं।

संविधान ने संस्थागत व्यवस्थाओं को बड़ी कानूनी भाषा में दर्ज़ किया है। अगर आप संविधान को पहली बार पढ़ें तो इसे सम ना मुश्किल लगेगा। फिर भी संस्थाओं के बुनियादी स्वरूप को सम ना बहुत मुश्किल नहीं है। किसी भी संविधान की तरह भारतीय संविधान भी वे नियम बताता है जिनके अनुसार शासकों का चुनाव किया जाएगा। इसमें स्पष्ट लिखा है कि किसके पास कितनी शक्ति होगी और कौन किस बारे में फ़ैसले लेगा। साथ ही संविधान नागरिकों को कुछ स्पष्ट अधिकार देकर सरकार के लिए लक्ष्मण रेखा तय कर देता है कि सरकार इससे आगे नहीं बढ़ सकती। पुस्तक के शेष तीन अध्याय भारतीय संविधान के इन्हीं तीन पक्षों के बारे में हैं। प्रत्येक अध्याय में हम कुछ प्रमुख संवैधानिक प्रावधानों पर नज़र डालेंगे और यह सम ने की कोशिश करेंगे कि लोकतांत्रिक राजनीति में ये किस तरह काम करते हैं। लेकिन यह किताब भारतीय संविधान के द्वारा स्थापित सारी प्रमुख संस्थाओं और व्यवस्थाओं को नहीं समेटती। इसके कुछ पहलुओं पर आपके अगले वर्ष की किताब में चर्चा होगी।

© NCERT not to be republished

शब्दावली

रंगभेद: दक्षिण अफ्रीका की सरकार की 1948 से 1989 के बीच काले लोगों के साथ नस्ली-अलगाव और खराब व्यवहार करने वाली शासन व्यवस्था।

धारा: किसी दस्तावेज़ का खास हिस्सा, अनुच्छेद।

संविधान: देश का सर्वोच्च कानून। इसमें किसी देश की राजनीति और समाज को चलाने वाले मौलिक कानून होते हैं।

संविधान संशोधन: देश की सर्वोच्च विधायी संस्था द्वारा उस देश के संविधान में किया जाने वाला बदलाव।

संविधान सभा: जनप्रतिनिधियों की वह सभा जो संविधान लिखने का काम करती है।

प्रारूप: किसी कानूनी दस्तावेज़ का प्रारंभिक रूप।

दर्शन: किसी सोच और काम को दिशा देने वाले सबसे बुनियादी विचार।

प्रस्तावना: संविधान का वह पहला कथन जिसमें कोई देश अपने संविधान के बुनियादी मूल्यों और अवधारणाओं को स्पष्ट ढंग से कहता है।

देशद्रोह: देश की सरकार को उखाड़ फेंकने की कोशिश करने का अपराध।

प्रश्नावली

1. नीचे कुछ गलत वाक्य दिए गए हैं। हर एक में की गई गलती पहचानें और इस अध्याय के आधार पर उसको ठीक करके लिखें।

   क. स्वतंत्रता के बाद देश लोकतांत्रिक हो या नहीं, इस विषय पर स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं ने अपना दिमाग खुला रखा था।
   ख. भारतीय संविधान सभा के सभी सदस्य संविधान में कही गई हरेक बात पर सहमत थे।
   ग. जिन देशों में संविधान है वहाँ लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था ही होगी।
   घ. संविधान देश का सर्वोच्च कानून होता है इसलिए इसमें बदलाव नहीं किया जा सकता।

2. दक्षिण अफ्रीका का लोकतांत्रिक संविधान बनाने में, इनमें से कौन-सा टकराव सबसे महत्वपूर्ण था:
   क. दक्षिण अफ्रीका और उसके पड़ोसी देशों का
   ख. स्त्रियों और पुरुषों का
   ग. गोरे अल्पसंख्यक और अश्वेत बहुसंख्यकों का
   घ. रंगीन चमड़ी वाले बहुसंख्यकों और अश्वेत अल्पसंख्यकों का

3. लोकतांत्रिक संविधान में इनमें से कौन-सा प्रावधान नहीं रहता?
   क. शासन प्रमुख के अधिकार
   ख. शासन प्रमुख का नाम
   ग. विधायिका के अधिकार
   घ. देश का नाम

4. संविधान निर्माण में इन नेताओं और उनकी भूमिका में मेल बैठाएँ:

क. मोतीलाल नेहरू	1. संविधान सभा के अध्यक्ष
ख. बी.आर. अंबेडकर	2. संविधान सभा की सदस्य
ग. राजेंद्र प्रसाद	3. प्रारूप कमेटी के अध्यक्ष
घ. सरोजिनी नायडू	4. 1928 में भारत का संविधान बनाया

5. जवाहर लाल नेहरू के नियति के साथ साक्षात्कार वाले भाषण के आधार पर निम्नलिखित प्रश्नों का जवाब दें :

   क. नेहरू ने क्यों कहा कि भारत का भविष्य सुस्ताने और आराम करने का नहीं है?
   ख. नए भारत के सपने किस तरह विश्व से जुड़े हैं?
   ग. वे संविधान निर्माताओं से क्या शपथ चाहते थे?
   घ. "हमारी पीढ़ी के सबसे महान व्यक्ति की कामना हर आँख से आँसू पोंछने की है।" वे इस कथन में किसका ज़िक्र कर रहे थे?

6. हमारे संविधान को दिशा देने वाले ये कुछ मूल्य और उनके अर्थ हैं। इन्हें आपस में मिलाकर दोबारा लिखिए।

क. संप्रभु	1. सरकार किसी धर्म के निर्देशों के अनुसार काम नहीं करेगी।
ख. गणतंत्र	2. फ़ैसले लेने का सर्वोच्च अधिकार लोगों के पास है।
ग. बंधुत्व	3. शासन प्रमुख एक चुना हुआ व्यक्ति है।
घ. धर्मनिरपेक्ष	4. लोगों को आपस में परिवार की तरह रहना चाहिए।

© NCERT not to be republished

प्रश्नावली

7. कुछ दिन पहले नेपाल से आपके एक मित्र ने वहाँ की राजनैतिक स्थिति के बारे में आपको पत्र लिखा था। वहाँ अनेक राजनैतिक पार्टियाँ राजा के शासन का विरोध कर रही थीं। उनमें से कुछ का कहना था कि राजा द्वारा दिए गए मौजूदा संविधान में ही संशोधन करके चुने हुए प्रतिनिधियों को ज़्यादा अधिकार दिए जा सकते हैं। अन्य पार्टियाँ नया गणतांत्रिक संविधान बनाने के लिए नई संविधान सभा गठित करने की मांग कर रही थीं। इस विषय में अपनी राय बताते हुए अपने मित्र को पत्र लिखें।

8. भारत के लोकतंत्र के स्वरूप में विकास के प्रमुख कारणों के बारे में कुछ अलग-अलग विचार इस प्रकार हैं। आप इनमें से हर कथन को भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए कितना महत्त्वपूर्ण कारण मानते हैं?
   क. अंग्रेज़ शासकों ने भारत को उपहार के रूप में लोकतांत्रिक व्यवस्था दी। हमने ब्रिटिश हुकूमत के समय बनी प्रांतीय असेंबलियों के ज़रिए लोकतांत्रिक व्यवस्था में काम करने का प्रशिक्षण पाया।
   ख. हमारे स्वतंत्रता संग्राम ने औपनिवेशिक शोषण और भारतीय लोगों को तरह-तरह की आज़ादी न दिए जाने का विरोध किया। ऐसे में स्वतंत्र भारत को लोकतांत्रिक होना ही था।
   ग. हमारे राष्ट्रवादी नेताओं की आस्था लोकतंत्र में थी। अनेक नव स्वतंत्र राष्ट्रों में लोकतंत्र का न आना हमारे नेताओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करता है।

9. 1912 में प्रकाशित 'विवाहित महिलाओं के लिए आचरण' पुस्तक के निम्नलिखित अंश को पढ़ें:

   ''ईश्वर ने औरत जाति को शारीरिक और भावनात्मक, दोनों ही तरह से ज्यादा नाजुक बनाया है। उन्हें आत्म रक्षा के भी योग्य नहीं बनाया है। इसलिए ईश्वर ने ही उन्हें जीवन भर पुरुषों के संरक्षण में रहने का भाग्य दिया है–कभी पिता के, कभी पति के और कभी पुत्र के। इसलिए महिलाओं को निराश होने की जगह इस बात से अनुगृहीत होना चाहिए कि वे अपने आपको पुरुषों की सेवा में समर्पित कर सकती हैं।'' क्या इस अनुच्छेद में व्यक्त मूल्य संविधान के दर्शन से मेल खाते हैं या वे संवैधानिक मूल्यों के खिलाफ़ हैं?

1`. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए। क्या आप उनसे सहमत हैं? अपने कारण भी बताइए।
   क. संविधान के नियमों की हैसियत किसी भी अन्य कानून के बराबर है।
   ख. संविधान बताता है कि शासन व्यवस्था के विविध अंगों का गठन किस तरह होगा।
   ग. नागरिकों के अधिकार और सरकार की सत्ता की सीमाओं का उल्लेख भी संविधान में स्पष्ट रूप में है।
   घ. संविधान संस्थाओं की चर्चा करता है, उसका मूल्यों से कुछ लेना-देना नहीं है।

संविधान संशोधन के किसी प्रस्ताव या किसी संशोधन की माँग से संबंधित अखबारी खबरों को ध्यान से पढ़िए। आप किसी एक विषय पर, जैसे संसद/विधानसभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण विषय पर छपी खबरों पर गौर कर सकते हैं। क्या इस सवाल पर कोई सार्वजनिक चर्चा हुई थी?

संशोधन के पक्ष में क्या-क्या तर्क दिए गए हैं? संविधान संशोधन पर विभिन्न दलों की क्या प्रतिक्रिया थी? क्या यह संशोधन हो गया है?

© NCERT not to be republished

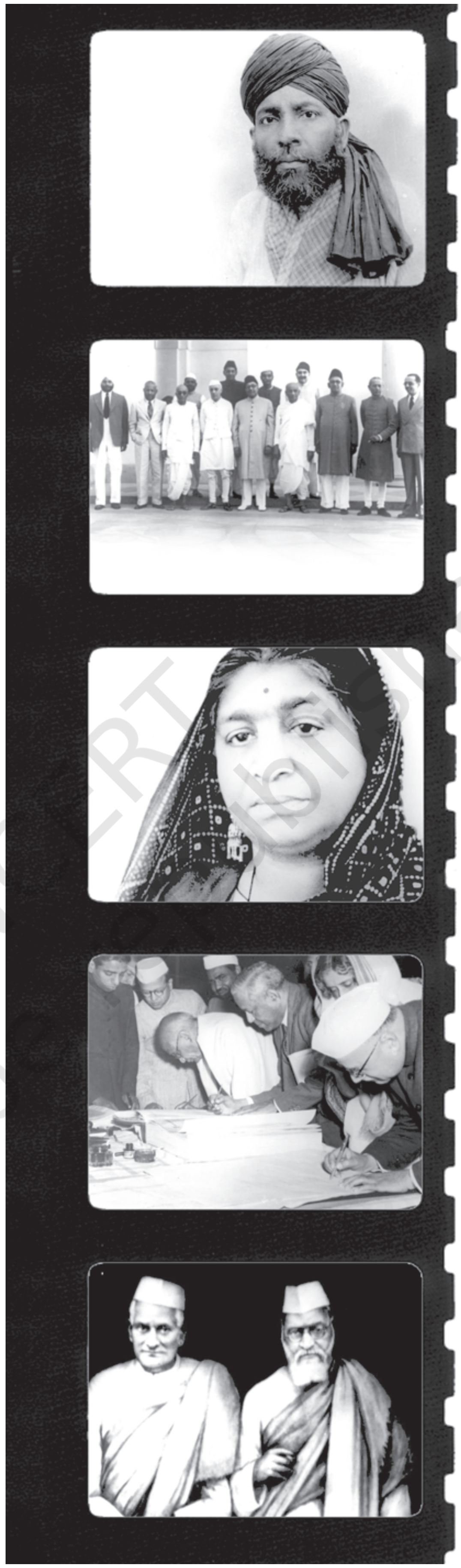

नेहरू मेमोरियल म्यूज़ियम एवं लाइब्रेरी, नई दिल्ली

अध्याय 4

चुनावी राजनीति

परिचय

अध्याय 2 में हमने देखा कि लोकतंत्र के लिए यह न तो संभव है ना ही ज़रूरी कि लोग सीधे शासन करें। हमारे समय में लोकतंत्र का सबसे आम स्वरूप लोगों द्वारा अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन चलाने का है। इस अध्याय में हम देखेंगे कि किसी लोकतंत्र में प्रतिनिधियों का चुनाव कैसे होता है। हम शुरुआत यह समझने से करेंगे कि लोकतंत्र में चुनाव क्यों ज़रूरी और उपयोगी हैं। हम यह भी समझने की कोशिश करेंगे कि विभिन्न दलों की चुनावी प्रतिद्वंद्विता किस तरह लोगों को लाभ पहुँचाती है। फिर हम यह सवाल उठाएँगे कि किन-किन चीज़ों के कारण कोई चुनाव लोकतांत्रिक होता है। इसी के सहारे हम लोकतांत्रिक और गैर-लोकतांत्रिक चुनाव का अंतर समझ पाएँगे।

अध्याय के बाकी हिस्से में हम इन्हीं पैमानों के आधार पर भारत में हुए चुनावों का मूल्यांकन करेंगे। इस क्रम में हम चुनाव के प्रत्येक चरण यानी विभिन्न चुनाव क्षेत्रों के सीमा-निर्धारण से लेकर चुनाव परिणामों की घोषणा तक पर नज़र डालेंगे। हर चरण में हम यह सवाल पूछेंगे कि क्या होना चाहिए और प्रत्यक्ष चुनाव में क्या होता है। अध्याय के आखिर में हम इस सवाल पर विचार करेंगे कि भारत में हुए चुनाव निष्पक्ष और स्वतंत्र ढंग से हुए हैं या नहीं। यहाँ हम निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनाव कराने में चुनाव आयोग की भूमिका पर भी विचार करेंगे।

© NCERT not to be republished

५.1 चुनाव क्यों?

हरियाणा के विधानसभा चुनाव

आधी रात के बाद का समय। उत्सुक भीड़ शहर के चौराहे के पास पिछले पाँच घंटों से अपने नेता के आने का इंतज़ार कर रही है। आयोजक भीड़ को बार-बार भरोसा दिला रहे हैं कि नेता बस अब आने ही वाले हैं। जब भी कोई गाड़ी पास से गुजरती तो लोग अपने नेता को देखने की उम्मीद में उठ खड़े होते। उन्हें लगता है कि हमारे नेता आ गए हैं।

यह नेता हैं श्री देवीलाल, हरियाणा संघर्ष समिति के प्रमुख, जो गुरुवार की उस रात करनाल में भाषण देने आने वाले हैं। 76 वर्ष के इस नेता को आजकल ज़रा भी फुरसत नहीं है। उनका राजनैतिक कार्यक्रम सुबह आठ बजे से शुरू होकर रात 11 बजे तक चलता है...आज सुबह से उन्होंने नौ चुनावी सभाओं में भाषण दिया है...पिछले 23 महीनों से वे लगातार जनसभाएँ कर रहे हैं और चुनाव की तैयारियाँ कर रहे हैं।

यह हरियाणा में 1987 में हुए राज्य विधानसभा चुनावों से जुड़ी एक अखबार की खबर है। राज्य में 1982 से कांग्रेस पार्टी की अगुवाई वाली सरकार थी। तब विपक्ष के एक नेता चौधरी देवीलाल ने 'न्याय युद्ध' नामक आंदोलन का नेतृत्व किया और लोकदल नामक अपनी नई पार्टी का गठन किया। उनकी पार्टी ने चुनाव में कांग्रेस के खिलाफ़ अन्य विपक्षी दलों को मिलाकर एक मोर्चा बनाया। अपने चुनाव प्रचार में देवीलाल ने कहा कि अगर उनकी पार्टी चुनाव जीती तो वे किसानों और छोटे व्यापारियों के कर्ज़ माफ़ कर देंगे। उन्होंने वायदा किया कि यही उनकी सरकार का पहला काम होगा।

क्या अधिकांश नेता अपने चुनावी वायदे पूरा करते हैं?

लोग तब की सरकार से नाखुश थे। वे देवीलाल के वायदे की तरफ आकर्षित हुए। इसलिए, जब चुनाव हुए तो उन्होंने लोकदल और उसके सहयोगी दलों के पक्ष में जमकर वोट दिए। लोकदल और उसकी सहयोगी पार्टियों को राज्य विधानसभा की 90 सीटों में से 76 पर जीत मिली। लोकदल को अकेले ही 60 सीटें मिलीं और उसे स्पष्ट बहुमत मिला। कांग्रेस के हाथ तब सिर्फ़ 5 सीटें लगीं।

चुनावी नतीजों की घोषणा के बाद तत्कालीन सरकार के मुख्यमंत्री ने पद छोड़ दिया। लोकदल के नवनिर्वाचित विधायकों ने देवीलाल को अपना नेता चुना। राज्यपाल ने देवीलाल को नए मुख्यमंत्री के रूप में काम संभालने का निमंत्रण दिया। चुनावी नतीजों की घोषणा के तीन दिन के अंदर वे मुख्यमंत्री बन गए। मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने के तत्काल बाद उनकी सरकार ने एक आदेश जारी करके छोटे किसान, खेतिहर मज़दूर और छोटे व्यापारियों के बकाया ऋण को माफ़ कर दिया। उनकी पार्टी ने राज्य में चार वर्षों तक शासन किया। अगले चुनाव 1991 में हुए। इस बार उनकी पार्टी को लोगों का समर्थन नहीं मिला। कांग्रेस पार्टी ने चुनाव जीता और सरकार बनाई।

खुद करें, खुद सीखें

क्या आपको मालूम है आपके राज्य में विधानसभा के पिछले चुनाव कब हुए? आपके इलाके में पिछले पाँच वर्षों में और कौन-से चुनाव हुए हैं? इन चुनावों के स्तर (राष्ट्रीय, विधानसभा, पंचायत वगैरह), उनके होने का समय और उसमें आपके क्षेत्र से चुने गए व्यक्ति के पद (सांसद, विधायक, पार्षद वगैरह) को भी दर्ज़ करें।

© NCERT not to be republished

2018-19

जगदीप और नवप्रीत ने इस कथा को पढ़ा और निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले। क्या आप बता सकते हैं कि इनमें कौन-से निष्कर्ष सही हैं और कौन-से गलत। (या फिर इस कथा में दी गई सूचनाओं के आधार पर सही-गलत का फ़ैसला नहीं हो सकता):

- चुनाव से सरकारी नीतियों में बदलाव हो सकता है।
- राज्यपाल ने देवीलाल के भाषणों से प्रभावित होकर उन्हें मुख्यमंत्री बनने का न्यौता दिया।
- लोग हर शासक दल से नाराज़ रहते हैं और हर अगले चुनाव में उसके खिलाफ वोट देते हैं।
- चुनाव जीतने वाली पार्टी सरकार बनाती है।
- इस चुनाव से हरियाणा के आर्थिक विकास में काफी मदद मिली।
- अपनी पार्टी के चुनाव हारने के बाद कांग्रेसी मुख्यमंत्री को इस्तीफा देने की ज़रूरत नहीं थी।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

चुनावों की ज़रूरत क्यों है?

किसी भी लोकतंत्र में नियमित अंतराल पर चुनाव होते हैं। हमने अध्याय 1 में उल्लेख किया था कि दुनिया के सौ से अधिक देश ऐसे हैं जहाँ जनप्रतिनिधियों को चुनने के लिए चुनाव होते हैं। हम यह भी जानते हैं कि अनेक ऐसे देश जो लोकतांत्रिक नहीं हैं, वहाँ भी चुनाव होते हैं।

पर हमें चुनावों की ज़रूरत क्यों होती है? आइए बिना चुनाव वाले लोकतंत्र की कल्पना करें। अगर सारे लोग रोज़ साथ बैठें और सारे फ़ैसले मिल-जुलकर लें तब बिना चुनावों के लोगों का शासन संभव है। लेकिन जैसा हमने अध्याय 2 में देखा कि किसी भी बड़े समुदाय के लिए ऐसा करना संभव नहीं है। ना ही यह संभव है कि हर किसी के पास हर मामले पर फ़ैसला करने का समय और ज्ञान हो। इसलिए अधिकांश लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं में लोग अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन करते हैं।

क्या चुनाव के बिना भी लोकतांत्रिक ढंग से प्रतिनिधियों का चुनाव किया जा सकता है? आइए एक ऐसी जगह के बारे में कल्पना करें जहाँ प्रतिनिधियों का चुनाव उम्र और अनुभव के आधार पर किया जाता है। या, ऐसी जगह की कल्पना करें जहाँ प्रतिनिधियों का चुनाव शिक्षा या ज्ञान के आधार पर होता हो। किसे ज़्यादा अनुभव या ज़्यादा ज्ञान है यह तय करने में थोड़ी परेशानी आ सकती है। पर यह मान लें कि लोग मिल-जुलकर इन परेशानियों को दूर कर लेंगे। स्पष्ट है कि फिर ऐसी जगह पर चुनाव की ज़रूरत नहीं रह जाएगी।

लेकिन क्या फिर हम इस व्यवस्था को लोकतंत्र कह सकते हैं? हम यह कैसे पता करेंगे कि लोगों को उनका प्रतिनिधि पसंद है या नहीं? हम यह व्यवस्था कैसे करेंगे कि प्रतिनिधि, लोगों की इच्छा के अनुरूप ही शासन करे? हम इस चीज़ की व्यवस्था कैसे करेंगे कि जो प्रतिनिधि लोगों को पसंद न हों वे अपने पद पर न बने रहें। इसके लिए ऐसी व्यवस्था करने की ज़रूरत है जिससे लोग नियमित अंतराल पर अपने प्रतिनिधियों को चुन सकें और अगर इच्छा हो तो उन्हें बदल भी दें। इस व्यवस्था का नाम चुनाव है। इसलिए हमारे समय में प्रतिनिधित्व वाले लोकतंत्र में चुनाव को ज़रूरी माना जाता है।

चुनाव में मतदाता कई तरह से चुनाव करते हैं:

- वे अपने लिए कानून बनाने वाले का चुनाव कर सकते हैं।
- वे सरकार बनाने और बड़े फ़ैसले करने वाले का चुनाव कर सकते हैं।
- वे सरकार और उसके द्वारा बनने वाले कानूनों का दिशा-निर्देश करने वाली पार्टी का चुनाव कर सकते हैं।

हमने देखा कि लोकतंत्र के लिए चुनाव क्यों ज़रूरी है, पर गैर-लोकतांत्रिक देशों के शासकों को भी चुनाव कराने की ज़रूरत क्यों पड़ती है?

© NCERT not to be republished

चुनाव को लोकतांत्रिक मानने के आधार क्या हैं ?

चुनाव कई तरह से हो सकते हैं। लोकतांत्रिक देशों में तो चुनाव होते ही हैं। यहाँ तक कि अधिकांश गैर-लोकतांत्रिक देशों में भी किसी-न-किसी तरह के चुनाव होते हैं। सो चुनाव लोकतांत्रिक हुए हैं इसे जाँचने के हमारे लिए क्या पैमाने हैं ? हमने अध्याय 2 में इस सवाल पर हल्की-सी चर्चा की थी। हमने वहाँ अनेक देशों के चुनाव के उदाहरण दिए थे जिन्हें हम लोकतांत्रिक चुनाव नहीं मान सकते। आइए वहाँ सीखे सबक को याद करें और लोकतांत्रिक चुनावों के लिए ज़रूरी न्यूनतम शर्तों के साथ अपनी बात की शुरुआत करें:

- पहला, हर किसी को चुनाव करने की सुविधा हो। यानि हर किसी को मताधिकार हो और हर किसी के मत का समान मोल हो।
- दूसरा, चुनाव में विकल्प उपलब्ध हों। पार्टियों और उम्मीदवारों को चुनाव में उतरने की आज़ादी हो और वे मतदाताओं के लिए विकल्प पेश करें।
- तीसरा, चुनाव का अवसर नियमित अंतराल पर मिलता रहे। नए चुनाव कुछ वर्षों में ज़रूर कराए जाने चाहिए।
- चौथा, लोग जिसे चाहें वास्तव में चुनाव उसी का होना चाहिए।
- पाँचवा, चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष ढंग से कराए जाने चाहिए जिससे लोग सचमुच अपनी इच्छा से व्यक्ति का चुनाव कर सकें।

ये शर्तें बहुत आसान और सरल लग सकती हैं। लेकिन अनेक देश ऐसे हैं जहाँ के चुनावों में इन शर्तों को भी पूरा नहीं किया जाता। इस अध्याय में हम अपने देश में हुए चुनावों पर भी ये शर्तें लागू करके यह जानने का प्रयास करेंगे कि हमारे यहाँ के चुनावों को लोकतांत्रिक कहा जा सकता है या नहीं।

क्या राजनैतिक प्रतिद्वंद्विता अच्छी चीज़ है ?

इस प्रकार हम पाते हैं कि चुनाव का मतलब राजनैतिक प्रतियोगिता या प्रतिद्वंद्विता है। यह प्रतियोगिता कई तरह का रूप ले सकती है। सबसे स्पष्ट रूप है राजनैतिक पार्टियों के बीच प्रतिद्वंद्विता। निर्वाचन क्षेत्रों में इसका स्वरूप उम्मीदवारों के बीच प्रतिद्वंद्विता का हो जाता है। अगर प्रतिद्वंद्विता नहीं रहे तो चुनाव बेमानी हो जाएँगे।

लेकिन क्या राजनैतिक प्रतिद्वंद्विता का होना अच्छी चीज़ है ? चुनावी प्रतिद्वंद्विता में कुछ स्पष्ट नुकसान दिखते हैं। इससे हर बस्ती, हर घर में बँटवारे जैसी स्थिति हो जाती है। आपने भी अपने इलाके में सुना होगा कि लोग 'पार्टी-पॉलिटिक्स' के फैलने की शिकायत कर रहे हैं। विभिन्न दलों के लोग और नेता अक्सर एक-दूसरे के खिलाफ़ आरोप लगाते हैं। पार्टियाँ और उम्मीदवार चुनाव जीतने के लिए तरह-तरह के हथकंडे अपनाते हैं। कुछ लोगों का कहना है कि चुनावी दौड़ जीतने का यह दबाव सही किस्म की दीर्घकालिक राजनीति को पनपने नहीं देता। समाज और देश की सेवा करने की चाह रखने वाले कई अच्छे लोग भी इन्हीं कारणों से चुनावी मुकाबले में नहीं उतरते। उन्हें इस मुश्किल और बेढंगी लड़ाई में उतरना अच्छा नहीं लगता।

हमारे संविधान निर्माता इन समस्याओं के प्रति सचेत थे। फिर भी उन्होंने भविष्य के नेताओं के चुनाव के लिए मुक्त चुनावी मुकाबले का ही चयन किया। उन्होंने ऐसा इसलिए किया क्योंकि दीर्घकालिक रूप से यही व्यवस्था बेहतर काम करती है। एक आदर्श दुनिया में ही सभी राजनैतिक नेताओं

© NCERT not to be republished

को मालूम होता है कि लोगों का हित किन चीज़ों में है तथा ये सभी नेता लोगों की सेवा की प्रेरणा से ही राजनीति में आते हैं। पर असल जीवन में ऐसा नहीं होता। दुनिया भर के सभी नेताओं को अन्य पेशों के लोगों के समान आगे बढ़ने की, अपना कॅरियर बनाने की चिंता होती है। वे सत्ता में बने रहना चाहते हैं या अपने लिए बड़ी-से-बड़ी कुर्सी और ज़्यादा-से-ज़्यादा अधिकार पाना चाहते हैं। संभव है कि उनके अंदर लोगों की सेवा करने की भावना भी हो पर सिर्फ़ इस भावना के भरोसे चीज़ों को छोड़ना जोखिम का काम है। यह भी संभव है कि उनके अंदर लोगों की मदद करने की भावना हो पर उन्हें यह मालूम न हो कि यह काम कैसे किया जा सकता है। या फिर यह भी हो सकता है कि उनके मन में जो विचार हों उनका लोगों की ज़रूरत या स्थानीय स्थितियों से मेल ही न बैठे।

ऐसे में हम इन वास्तविकताओं का सामना कैसे कर सकते हैं? एक तरीका तो राजनेताओं के ज्ञान और चरित्र में बदलाव और सुधार लाने का है। दूसरा और ज़्यादा व्यावहारिक तरीका यह है कि हम ऐसी व्यवस्था बनाएँ जिसमें लोगों की सेवा करने वाले राजनेताओं को पुरस्कार मिले और ऐसा न करने वालों को दंड मिले। इस पुरस्कार या दंड का फ़ैसला कौन करता है? इसका सीधा-सा ज़वाब है कि लोग करते हैं। चुनावी प्रतिद्वंद्विता का यही अर्थ है। नियमित चुनावी मुकाबले का लाभ राजनैतिक दलों और नेताओं को मिलता है। वे जानते हैं कि अगर उन्होंने लोगों की इच्छा के अनुसार मुद्दों को उठाया तो उनकी लोकप्रियता बढ़ेगी और अगले चुनाव में उनकी जीत की संभावना भी बढ़ेगी। लेकिन यदि वे अपने कामकाज से मतदाताओं को संतुष्ट करने में असफल रहते हैं तो वे अगला चुनाव नहीं जीत सकते।

इस तरह यदि कोई राजनीतिक पार्टी सिर्फ़ सत्ता में आने की इच्छा से ही आगे आई है तो भी उसे मज़बूरन जनता की सेवा करनी होगी। कुछ-कुछ इसी ढंग से बाज़ार काम करता है भले ही कोई दुकानदार सिर्फ़ अपने फ़ायदे की सोचता हो उसे मज़बूरन ग्राहक को अच्छा सौदा देना ही पड़ता है। अगर वह ऐसा नहीं करता तो ग्राहक दूसरी दुकान देखेगा। ठीक इसी तरह राजनीतिक मुकाबले से संभव है कुछ भेदभाव पनपें और लोगों में आपसी मन-मुटाव पैदा हों लेकिन आखिरकार इससे राजनैतिक दल और इसके नेता, लोगों की सेवा के लिए बाध्य होते हैं।

इरफान खान

कार्टून बूझें

यहाँ दिए दोनों कार्टूनों को ध्यान से देखें। प्रत्येक कार्टून क्या संदेश देता है, इसे अपने शब्दों में लिखें। अपनी कक्षा में चर्चा करें कि इनमें से कौन-सा कार्टून आपके अपने इलाके की असलियत के करीब है। मतदाता और उम्मीदवार के संबंधों पर चुनाव का असर बताने वाला एक कार्टून खुद बनाएँ।

© NCERT not to be republished

५.2 चुनाव की हमारी प्रणाली क्या है ?

क्या हमारे देश में होने वाले चुनाव लोकतांत्रिक हैं? इस सवाल का जवाब देने के लिए आइए देखें कि भारत में चुनाव किस तरह होते हैं। हमारे यहाँ लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव हर पाँच साल बाद होते हैं। पाँच साल के बाद सभी चुने हुए प्रतिनिधियों का कार्यकाल समाप्त हो जाता है। लोकसभा और विधानसभाएँ 'भंग' हो जाती हैं। फिर सभी चुनाव क्षेत्रों में एक ही दिन या एक छोटे अंतराल में अलग-अलग दिन चुनाव होते हैं। इसे आम चुनाव कहते हैं। कई बार सिर्फ़ एक क्षेत्र में चुनाव होता है जो किसी सदस्य की मृत्यु या इस्तीफे से खाली हुआ होता है। इसे उपचुनाव कहते हैं। इस अध्याय में हम आम चुनाव पर ही ध्यान केंद्रित करेंगे।

चुनाव क्षेत्र

आपने पढ़ा है कि हरियाणा के लोगों ने 90 विधायकों का चुनाव किया। संभव है आपने सोचा हो कि उन्होंने ऐसा कैसे किया होगा। क्या हरियाणा का हर व्यक्ति सभी 90 विधायकों के लिए वोट देता है? शायद आपको भी मालूम

गुलबर्गा संसदीय क्षेत्र

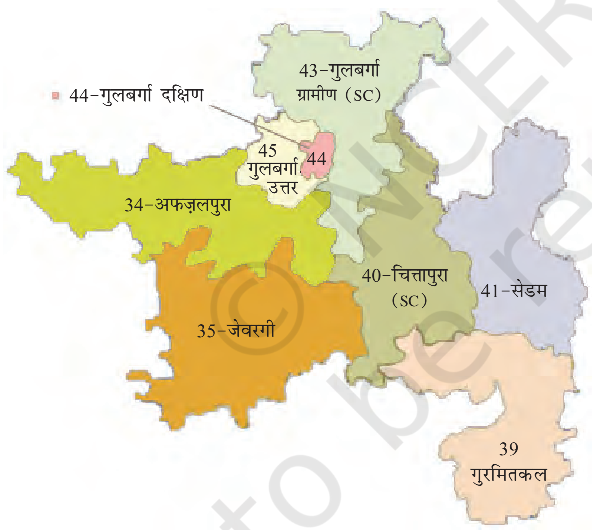

कर्नाटक का गुलबर्गा (कलाबुरगी) ज़िला

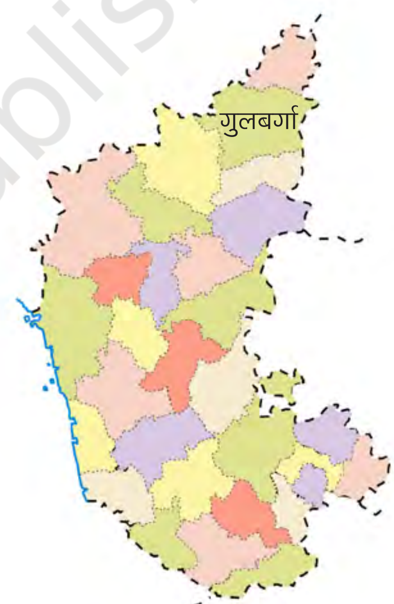

- गुलबर्गा लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र की सीमा और गुलबर्गा (कलाबुरगी) ज़िले की सीमा में अंतर क्यों है? अपने लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र का ऐसा ही नक्शा बनाइए।
- गुलबर्गा लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र में विधानसभा के कितने क्षेत्र हैं? क्या आपके लोकसभा क्षेत्र में भी विधानसभा की इतनी ही सीटें हैं?

© NCERT not to be republished

2018-19

होगा कि ऐसा नहीं होता। अपने देश में हम क्षेत्र विशेष पर आधारित प्रतिनिधित्व की प्रणाली से काम करते हैं। चुनाव के उद्देश्य से देश को अनेक क्षेत्रों में बाँट लिया गया है। इन्हें निर्वाचन क्षेत्र कहते हैं। एक क्षेत्र में रहने वाले मतदाता अपने एक प्रतिनिधि का चुनाव करते हैं। लोकसभा चुनाव के लिए देश को 543 निर्वाचन क्षेत्रों में बाँटा गया है। हर क्षेत्र से चुने गए प्रतिनिधियों को संसद सदस्य कहते हैं। लोकतांत्रिक चुनाव की एक विशेषता है हर वोट का बराबर मूल्य। इसीलिए हमारे संविधान में यह व्यवस्था है कि हर चुनाव क्षेत्र में मतदाताओं की संख्या काफ़ी हद तक एक समान हो।

इसी प्रकार, प्रत्येक राज्य को उसकी विधानसभा की सीटों के हिसाब से बाँटा गया है। इन सीटों से निर्वाचित प्रतिनिधियों को विधायक कहते हैं। प्रत्येक संसदीय निर्वाचन क्षेत्र में विधानसभा के कई-कई निर्वाचन क्षेत्र आते हैं। पंचायतों और नगरपालिका के चुनावों में भी यही तरीका अपनाया जाता है। प्रत्येक पंचायत को कई 'वार्डों' में बाँटा जाता है जो छोटे-छोटे निर्वाचन क्षेत्र हैं। प्रत्येक वार्ड से पंचायत या नगरपालिका के लिए एक सदस्य का चुनाव होता है। कई बार निर्वाचन क्षेत्रों को 'सीट' भी कहा जाता है क्योंकि हर क्षेत्र संसद या विधानसभा की एक सीट का प्रतिनिधित्व करता है। इसलिए, हम जब कहते हैं कि लोकदल ने हरियाणा की 60 सीटें जीतीं तो इसका मतलब है कि विधानसभा के 60 निर्वाचन क्षेत्रों से लोकदल के 60 लोग जीतकर राज्य विधानसभा में पहुँचे।

आरक्षित निर्वाचन क्षेत्र

हमारा संविधान प्रत्येक नागरिक को अपना प्रतिनिधि चुनने और जनप्रतिनिधि के तौर पर चुने जाने का अधिकार देता है। लेकिन हमारे संविधान निर्माताओं को चिंता थी कि संभव है खुले चुनावी मुकाबले में कुछ कमज़ोर समूहों के लोग लोकसभा और विधानसभाओं में पहुँच नहीं पाएँ। संभव है कि चुनाव लड़ने और जीतने लायक ज़रूरी संसाधन, शिक्षा और संपर्क उनके पास हों ही नहीं। संसाधनों वाले प्रभावशाली लोग उनको चुनाव जीतने से रोक भी सकते हैं। अगर ऐसा होता है तो संसद और विधानसभाओं में हमारी आबादी के एक बड़े हिस्से की आवाज़ ही नहीं पहुँच पाएगी। इससे हमारे लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व का चरित्र कमज़ोर होगा और यह व्यवस्था कम लोकतांत्रिक होगी।

इसलिए हमारे संविधान निर्माताओं ने कमज़ोर वर्गों के लिए आरक्षित निर्वाचन क्षेत्र की विशेष व्यवस्था सोची। इसी कारण कुछ चुनाव क्षेत्र अनुसूचित जातियों के लोगों के लिए आरक्षित हैं तो कुछ क्षेत्र अनुसूचित जनजाति के लोगों के लिए। अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित सीट पर केवल अनुसूचित जाति का ही व्यक्ति चुनाव लड़ सकता है। इसी तरह सिर्फ़ अनुसूचित जनजाति के ही व्यक्ति अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित चुनाव क्षेत्र से चुनाव लड़ सकते हैं। अभी लोकसभा की 84 सीटें अनुसूचित जातियों के लिए और 47 सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित हैं (1 सितंबर 2012 की स्थिति)। ये सीटें पूरी आबादी में इन समूहों के हिस्से के अनुपात में हैं। इस प्रकार अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षित सीटें किसी अन्य समूह के उचित हिस्से में से कुछ नहीं लेतीं।

कमज़ोर समूहों के लिए आरक्षण की यह व्यवस्था बाद में जिला और स्थानीय स्तर पर भी लागू की गई। अनेक राज्यों में अब ग्रामीण (पंचायतों) और शहरी (नगरपालिका और नगर निगमों) स्थानीय निकायों में अन्य पिछड़े वर्गों के लिए भी आरक्षण लागू हो गया है। पर हर राज्य में आरक्षित सीटों का अनुपात अलग-अलग है। इसी प्रकार ग्रामीण और शहरी स्थानीय

पंचायतों की तरह क्या हम संसद और विधानसभाओं की एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित नहीं कर सकते?

© NCERT not to be republished

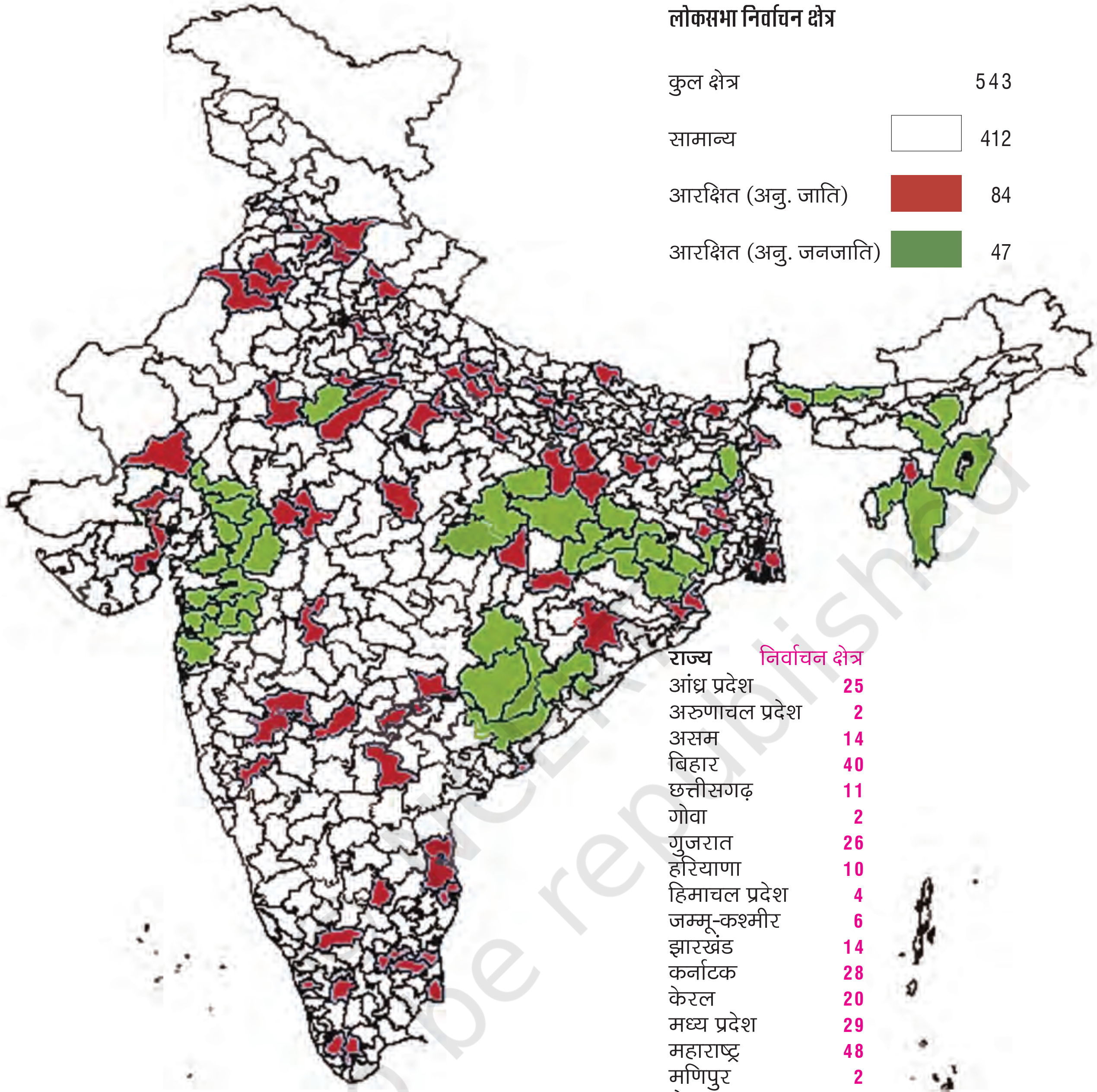

राज्य	निर्वाचन क्षेत्र
आंध्र प्रदेश	25
अरुणाचल प्रदेश	2
असम	14
बिहार	40
छत्तीसगढ़	11
गोवा	2
गुजरात	26
हरियाणा	10
हिमाचल प्रदेश	4
जम्मू-कश्मीर	6
झारखंड	14
कर्नाटक	28
केरल	20
मध्य प्रदेश	29
महाराष्ट्र	48
मणिपुर	2
मेघालय	2
मिजोरम	1
नगालैंड	1
ओडिशा	21
पंजाब	13
राजस्थान	25
सिक्किम	1
तमिलनाडु	39
तेलंगाणा	17
त्रिपुरा	2
उत्तर प्रदेश	80
उत्तराखंड	5
पश्चिम बंगाल	42

केंद्रशासित प्रदेश	
अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह	1
चंडीगढ़	1
दादरा एवं नगर हवेली	1
दमन और दीव	1
दिल्ली	7
लक्षद्वीप	1
पुदुच्चेरी	1

भारत का चुनाव आयोग

ऊपर दिए नक्शे को देखिए और निम्नलिखित सवालों का जवाब दीजिए।

- आपके राज्य और इसके दो पड़ोसी राज्यों में लोकसभा निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या कितनी है?
- किन-किन राज्यों में लोकसभा के 30 से ज्यादा निर्वाचन क्षेत्र हैं?
- कुछ राज्यों में निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या ज्यादा क्यों है?
- कुछ निर्वाचन क्षेत्र इलाके के हिसाब से छोटे और कुछ बहुत बड़े क्यों हैं?
- अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित निर्वाचन क्षेत्र पूरे देश में बिखरे हैं या कुछ इलाकों में इनकी संख्या ज्यादा है?

not to be republished

निकायों में एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित की गई हैं।

मतदाता सूची

एक बार जब निर्वाचन क्षेत्र का फ़ैसला हो जाता है तब यह तय किया जाता है कि कौन वोट दे सकता है, कौन नहीं। इस फ़ैसले को अंतिम दिन तक के लिए किसी के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता। लोकतांत्रिक चुनाव में मतदान की योग्यता रखने वालों की सूची चुनाव से काफ़ी पहले तैयार कर ली जाती है और हर किसी को दे दी जाती है। इस सूची को आधिकारिक रूप से मतदाता सूची कहते हैं। आम बोलचाल में इसे वोटर लिस्ट भी कहते हैं।

यह एक महत्त्वपूर्ण कदम है क्योंकि इसका सीधा संबंध लोकतांत्रिक चुनाव की पहली शर्त—अपना प्रतिनिधि चुनने के लिए हर किसी को समान अवसर मिलने से है। पहले अध्याय में हमने सार्वभौम वयस्क मताधिकार के बारे में पढ़ा था। व्यवहार में इसका मतलब है कि हर किसी को मत देने का अधिकार होना चाहिए और हर एक का मत समान मोल का होना चाहिए। जब तक ठोस कारण न हों किसी को मताधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। अलग-अलग नागरिक अनेक मामलों में एक-दूसरे से भिन्न होते हैं: कोई अमीर है, कोई गरीब; कोई बहुत पढ़ा-लिखा है तो कोई कम या एकदम अशिक्षित; कोई बहुत दयालु है तो कोई नहीं। पर हर कोई इंसान तो है! और, अपनी ज़रूरतों और विचारों के अनुरूप समाज में योगदान करता है। इसलिए सभी को प्रभावित करने वाले निर्णयों में सबकी भागीदारी होनी चाहिए।

हमारे देश में 18 वर्ष और उससे ऊपर की उम्र के सभी नागरिक चुनाव में वोट डाल सकते हैं। नागरिक की जाति, धर्म, लिंग चाहे जो हो उसे मत देने का अधिकार है। अपराधियों और दिमागी असंतुलन वाले कुछ लोगों को वोट देने के अधिकार से वंचित किया जा सकता है लेकिन ऐसा सिर्फ़ बेहद खास स्थितियों में ही होता है। सभी सक्षम मतदाताओं का नाम मतदाता सूची में हो यह व्यवस्था करना सरकार की ज़िम्मेदारी है। चूंकि हर अगले चुनाव में नए लोग मतदाता बनने की उम्र तक आ जाते हैं इसलिए हर चुनाव से पूर्व मतदाता सूची को सुधारा जाता है। जो लोग उस इलाके से बाहर चले जाते हैं या जिनकी मौत हो जाती है उनके नाम इस सूची से काट दिए जाते हैं। हर पाँच वर्ष में मतदाता सूची का पूर्ण नवीनीकरण किया जाता है। ऐसा मतदाता सूची को एकदम ताज़ा रखने के लिए किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों से चुनावों में फोटो पहचान-पत्र की नई व्यवस्था लागू की गई है। सरकार ने मतदाता सूची में दर्ज़ सभी लोगों को यह कार्ड देने की कोशिश की है। वोट देने जाते समय मतदाता को यह पहचान-पत्र साथ रखना होता है जिससे किसी एक का वोट कोई दूसरा न डाल दे। पर मतदान के लिए यह कार्ड अभी तक अनिवार्य नहीं हुआ है। वोट देने के लिए मतदाता राशन कार्ड या ड्राइविंग लाइसेंस जैसे पहचान पत्र भी दिखा सकते हैं।

उम्मीदवारों का नामांकन

हमने ऊपर देखा कि लोकतांत्रिक चुनावों में लोगों के पास वास्तविक विकल्प होना चाहिए। यह तभी होगा जब किसी के भी चुनाव लड़ने पर लगभग किसी किस्म की बंदिश न हो। हमारी चुनाव प्रणाली ऐसा ही करती है। जो कोई व्यक्ति मतदाता है वह उम्मीदवार भी हो सकता है। सिर्फ़ एक फ़र्क यह है कि कोई भी व्यक्ति 18 वर्ष की उम्र में ही वोट डालने का अधिकारी हो जाता है जबकि उम्मीदवार बनने की न्यूनतम आयु 25 वर्ष है। उम्मीदवार बनने में भी

© NCERT not to be republished

निर्वाचक नामावली, 2018 (S04) बिहार

विधान सभा क्षेत्र की संख्या , नाम व आरक्षण स्थिति :	19 -मोतिहारी - सामान्य	भाग संख्या : 1
लोक सभा क्षेत्र की संख्या, नाम व आरक्षण स्थिति :	3 -पूर्वी चम्पारण-सामान्य	

1.पुनरीक्षण का विवरण :

पुनरीक्षण का वर्ष	: 2018	**निर्वाचक नामावली की पहचान :** विशेष संक्षिप्त पुनरीक्षण, 2018 के अन्तर्गत दिनांक 04.10.2017 को प्रारूप के रूप में प्रकाशित समेकित एवं एकीकृत निर्वाचक सूची एवं उसके उपरान्त निर्मित अनुपूरक सूची
अर्हता की तिथि	: 01.01.2018	
पुनरीक्षण का स्वरुप	: विशेष संक्षिप्त पुनरीक्षण, 2018	
प्रकाशन की तिथि	: 10.01.2018	

2.भाग व मतदान क्षेत्र का विवरण :

भाग में आनेवाले प्रभागों की संख्या व नाम :

(1) झिटकहियां

(2) झीटकहिया

(3) झिटकहीया

मुख्य ग्राम	:	झिटकहिया
डाकघर	:	झिटकाही
थाना	:	लखौरा
राजस्व हलका	:	002
पंचायत	:	बरवा
अंचल	:	मोतिहारी
प्रखंड	:	मोतिहारी
अनुमंडल	:	मोतिहारी सदर
जिला	:	पूर्वी चम्पारण
पिन कोड	:	845427

3.मतदान केन्द्र का विवरण :

मतदान केन्द्र की संख्या व नाम :	1. उत्क्रमित मध्य विद्यालय सेमरा झिटकहिया उतरी भाग	मतदान केन्द्र की विशेष हैसियत :	सामान्य
मतदान केन्द्र का भवन व पता :	उत्क्रमित मध्य विद्यालय सेमरा झिटकहिया	इस मतदान क्षेत्र के सहायक (ऑक्जिलियरी) मतदान केन्द्रो की संख्या :	0

4.मतदाताओं की संख्या :

आरम्भिक क्रम संख्या	अंतिम क्रम संख्या	मतदाताओं की संख्या			
		पुरूष	महिला	तृतीय लिंग	कुल
1	1606	853	753	0	1606

19 मोतिहारी सामान्य विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र, बिहार की निर्वाचक नामावली - 2018 भाग संख्या 1

प्रभाग 1 झिटकहियां प्रखण्ड - मोतिहारी थाना - लखौरा डाकघर - झिटकाही पिन : 845427 प्रारम्भ पृष्ठ

1 BCS1518166 निर्वाचक का नाम : वैद्यनाथ राय पिता का नाम : रामप्रीत राय गृह संख्या : 1 उम्र : 71 लिंग : पुरूष	2 UZP0055384 निर्वाचक का नाम : जानकी देवी पति का नाम : वैद्य नाथ राय गृह संख्या : 1 उम्र : 66 लिंग : महिला	3 BCS1518174 निर्वाचक का नाम : रामजीत प्रसाद यादव पिता का नाम : वैद्यनाथ प्रसाद यादव गृह संख्या : 1 उम्र : 30 लिंग : पुरूष
4 UZP0055392 निर्वाचक का नाम : शोभा देवी पति का नाम : रामजीत प्रसाद यादव गृह संख्या : 1 उम्र : 31 लिंग : महिला	5 BCS3367901 निर्वाचक का नाम : राम लगन प्रसाद यादव पिता का नाम : बैधनाथ प्रसाद यादव गृह संख्या : 1 उम्र : 41 लिंग : पुरूष	6 BCS3368792 निर्वाचक का नाम : कुमारी देवी पति का नाम : राम लगन प्रसाद यादव गृह संख्या : 1 उम्र : 29 लिंग : महिला
7 UZP0283341 निर्वाचक का नाम : खुशीलाल प्रसाद यादव पिता का नाम : बैधनाथ प्रसाद यादव गृह संख्या : 1 उम्र : 30 लिंग : पुरूष	8 UZP0283440 निर्वाचक का नाम : विजय प्रसाद यादव पिता का नाम : रामराज प्रसाद यादव गृह संख्या : 1 उम्र : 33 लिंग : पुरूष	9 UZP0283143 निर्वाचक का नाम : मोहम्मद मुस्ताक पिता का नाम : मोहम्मद इलियास अहमद गृह संख्या : 1 उम्र : 42 लिंग : पुरूष

© NCERT not to be republished

अपराधियों वगैरह पर रोक है लेकिन यह पाबंदी भी बहुत ही कम मामलों में लागू होती है। राजनैतिक दल अपने उम्मीदवार मनोनीत करते हैं जिन्हें पार्टी का चुनाव चिह्न और समर्थन मिलता है। पार्टी के मनोनयन को बोलचाल की भाषा में 'टिकट' कहते हैं।

चुनाव लड़ने के इच्छुक हर एक उम्मीदवार को एक 'नामांकन पत्र' भरना पड़ता है और कुछ रकम जमानत के रूप में जमा करानी पड़ती है। हाल में सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश पर उम्मीदवारों से एक घोषणा-पत्र भरवाने की नई प्रणाली भी शुरू हुई है। अब हर उम्मीदवार को अपने बारे में कुछ ब्यौरे देते हुए वैधानिक घोषणा करनी होती है। प्रत्येक उम्मीदवार को इन मामलों के सारे विवरण देने होते हैं:

- उम्मीदवार के खिलाफ़ चल रहे गंभीर आपराधिक मामले।
- उम्मीदवार और उसके परिवार के सदस्यों की संपत्ति और देनदारियों का ब्यौरा।
- उम्मीदवार की शैक्षिक योग्यता।

इन सूचनाओं को सार्वजनिक किया जाना चाहिए। इससे मतदाताओं को उम्मीदवारों द्वारा खुद के बारे में सूचना के आधार पर अपने फ़ैसले करने का मौका मिलता है।

उम्मीदवारों की शैक्षिक योग्यता

जब देश की सभी नौकरियों के लिए किसी-न-किसी किस्म की शैक्षिक योग्यता ज़रूरी है तो विधायक या सांसद महत्त्वपूर्ण पदों के चुनाव के लिए किसी किस्म की शैक्षिक योग्यता की ज़रूरत क्यों नहीं है:

- सभी तरह के काम सिर्फ शैक्षिक योग्यता के आधार पर नहीं होते। जैसे भारतीय क्रिकेट टीम में चुनाव के लिए डिग्री की नहीं अच्छा क्रिकेट खेलने की योग्यता ज़रूरी है। इसी प्रकार विधायक या सांसद की सबसे बड़ी योग्यता यह है कि वह अपने क्षेत्र के लोगों की समस्याओं को समझे, उनकी चिंताओं को समझे और उनके हितों का प्रतिनिधित्व करे। वे यह काम कर रहे हैं या नहीं इसकी परीक्षा उनके लाखों वोटर पाँच साल तक रोज़ लेते हैं।
- अगर शिक्षा या डिग्री की प्रासंगिकता हो भी तो यह जिम्मा लोगों पर छोड़ देना चाहिए कि वे शैक्षिक योग्यता को कितना महत्त्व देते हैं।
- हमारे देश में शैक्षिक योग्यता की शर्त लगाना एक अन्य कारण से भी लोकतंत्र की मूल भावना के खिलाफ़ होगा। इसका मतलब होगा देश के अधिकांश लोगों को चुनाव लड़ने के मौलिक अधिकार से वंचित करना। जैसे यदि उम्मीदवारों के लिए बी.ए., बी.कॉम. या बी.एससी. की स्नातक डिग्री को भी अनिवार्य किया गया तो 90 फीसदी से ज़्यादा नागरिक चुनाव लड़ने के अयोग्य हो जाएँगे।

उम्मीदवारों को अपनी संपत्ति का ब्यौरा देने की ज़रूरत क्यों होती है?

भारत की चुनाव प्रणाली की कुछ विशेषताएँ और कुछ सिद्धांत दिए गए हैं। इनके सही जोड़े बनाएँ।

सिद्धांत	चुनाव प्रणाली की विशेषता
सार्वभौम वयस्क मताधिकार	हर चुनाव क्षेत्र में लगभग बराबर मतदाता
कमजोर वर्गों को प्रतिनिधित्व	18 वर्ष और उससे ऊपर के सभी को मताधिकार
खुली राजनैतिक प्रतिद्वंद्विता	सभी को पार्टी बनाने या चुनाव लड़ने की आज़ादी
एक मत, एक मोल	अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

© NCERT not to be republished

2018-19

चुनाव अभियान

चुनावों का मुख्य उद्देश्य लोगों को अपनी पसंद के प्रतिनिधियों, सरकार और नीतियों का चुनाव करने का अवसर देना है। इसलिए, कौन प्रतिनिधि बेहतर है, कौन पार्टी अच्छी सरकार देगी या अच्छी नीति कौन-सी है, इस बारे में स्वतंत्र और खुली चर्चा भी बहुत ज़रूरी है। चुनाव अभियान के दौरान यही होता है।

हमारे देश में उम्मीदवारों की अंतिम सूची की घोषणा होने और मतदान की तारीख के बीच आम तौर पर दो सप्ताह का समय चुनाव प्रचार के लिए दिया जाता है। इस अवधि में उम्मीदवार मतदाताओं से संपर्क करते हैं, राजनेता चुनावी सभाओं में भाषण देते हैं और राजनैतिक पार्टियाँ अपने समर्थकों को सक्रिय करती हैं। इसी अवधि में अखबार और टीवी चैनलों पर चुनाव से जुड़ी खबरें और बहसें भी होती हैं। पर असल में चुनाव अभियान सिर्फ़ दो हफ़्ते नहीं चलता। राजनैतिक दल चुनाव होने के महीनों पहले से इसकी तैयारियाँ शुरू कर देते हैं।

चुनाव अभियान के दौरान राजनैतिक पार्टियाँ लोगों का ध्यान कुछ बड़े मुद्दों पर केंद्रित कराना चाहती हैं। वे लोगों को इन मुद्दों पर आकर्षित करती हैं और अपनी पार्टी के पक्ष में वोट देने को कहती हैं। आइए, विभिन्न चुनावों में विभिन्न दलों द्वारा उठाए गए कुछ सफल नारों पर गौर करें।

- इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस पार्टी ने 1971 के लोकसभा चुनावों में **गरीबी हटाओ** का नारा दिया था। पार्टी ने वायदा किया कि वह सरकार की सारी नीतियों में बदलाव करके सबसे पहले देश से गरीबी हटाएगी।
- 1977 में हुए लोकसभा चुनावों में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में जनता पार्टी ने नारा दिया **लोकतंत्र बचाओ**। पार्टी ने आपात्काल के दौरान हुई ज़्यादतियों को समाप्त करने और नागरिक आज़ादी को बहाल करने का वायदा किया।
- वामपंथी दलों ने 1977 में हुए पश्चिम बंगाल विधानसभा चुनाव में **ज़मीन-जोतने वाले को** का नारा दिया था।
- 1983 के आंध्र प्रदेश के विधानसभा चुनावों में तेलुगु देशम पार्टी के नेता एन.टी. रामाराव ने **तेलुगु स्वाभिमान** का नारा दिया था।

चुनावों में राजनैतिक दलों और उम्मीदवारों के निर्देश के लिए आदर्श आचार संहिता पर यहाँ एक कार्टून बनाएँ।

लोकतंत्र में राजनैतिक दलों और उम्मीदवारों को अपनी मर्ज़ी के मुताबिक चुनाव प्रचार करने के लिए आज़ाद छोड़ देना ही सबसे अच्छा होता है। पर सभी दलों को उचित और समान अवसर मिले इसके लिए कई बार कुछ दखल देना ज़रूरी होता है। चुनाव के कानूनों के अनुसार कोई भी

© NCERT not to be republished

खुद करें, खुद सीखें

पिछले लोकसभा चुनाव में आपके चुनाव क्षेत्र में चुनाव अभियान कैसा चला था? उम्मीदवारों और पार्टियों ने क्या-क्या कहा और क्या-क्या किया, इसकी सूची तैयार कीजिए।

उम्मीदवार या पार्टी ये सब काम नहीं कर सकतीं:

- मतदाता को प्रलोभन देना, घूस देना या धमकी देना।
- उनसे जाति या धर्म के नाम पर वोट माँगना।
- चुनाव अभियान में सरकारी संसाधनों का इस्तेमाल करना।
- लोकसभा चुनाव में एक निर्वाचन क्षेत्र में 25 लाख या विधानसभा चुनाव में 1 लाख रुपए से ज़्यादा खर्च करना।

अगर वे इनमें से किसी भी मामले में दोषी पाए गए तो चुने जाने के बावजूद उनका चुनाव रद्द घोषित हो सकता है। इन कानूनों के अलावा हमारे देश की सभी राजनैतिक पार्टियों ने चुनाव प्रचार की आदर्श आचार संहिता को भी स्वीकार किया है। इसमें उम्मीदवारों और पार्टियों को यह सब करने की मनाही है:

- चुनाव प्रचार के लिए किसी धर्मस्थल का उपयोग।
- सरकारी वाहन, विमान या अधिकारियों का चुनाव में उपयोग।
- चुनाव की अधिघोषणा हो जाने के बाद मंत्री किसी बड़ी योजना का शिलान्यास, बड़े नीतिगत फ़ैसले या लोगों को सुविधाएँ देने वाले वायदे नहीं कर सकते।

मतदान और मतगणना

चुनाव का आखिरी चरण है मतदाताओं द्वारा वोट देना। इस दिन को आम तौर पर चुनाव का दिन कहते हैं। मतदाता सूची में नाम वाला हर व्यक्ति अपने इलाके में स्थित मतदान केंद्र पर जाता है। यह अस्थायी तौर पर स्थानीय स्कूल या किसी सरकारी इमारत में बना होता है। जब मतदाता मतदान केंद्र में जाता है तो चुनाव अधिकारी उसे पहचानकर उसकी अँगुली पर एक काला निशान लगा देते हैं और उसे वोट डालने की अनुमति देते हैं। सभी उम्मीदवारों के एजेंटों को मतदान केंद्र के अंदर बैठने की इजाज़त होती है जिससे कि वे देख सकें कि चुनाव ठीक ढंग से हो रहा है।

पहले मतदाता एक मतपत्र पर अलग-अलग छपे उम्मीदवारों के नाम और चुनाव चिह्न में से अपनी पसंद के उम्मीदवार के चुनाव चिह्न पर मोहर लगाकर अपनी पसंद जाहिर करते थे। अब मतदान के लिए इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों का इस्तेमाल होने लगा है। मशीन के ऊपर उम्मीदवारों

क्या हमारे देश में चुनाव बहुत महँगे हैं?

भारत में चुनाव करवाने पर बहुत ज़्यादा रकम खर्च होती है। जैसे 2014 में लोकसभा चुनावों पर ही सरकार ने करीब ₹ 3,500 करोड़ खर्च किए। हिसाब लगाएँ तो मतदाता सूची में दर्ज़ हर नाम पर ₹ 40 के करीब खर्च हुआ। पार्टियों और उम्मीदवारों ने चुनाव में सरकार से भी ज़्यादा खर्च किया। मोटे अनुमान के अनुसार सरकार, पार्टियों और उम्मीदवारों का कुल खर्च करीब ₹ 30,000 करोड़ हुआ होगा अर्थात् प्रति मतदाता करीब ₹ 500।

कुछ लोग कहते हैं कि चुनाव हमारी जनता पर, खासकर गरीब लोगों पर एक बोझ है और मुल्क हर पाँच साल पर चुनाव कराने का बोझ नहीं उठा सकता। आइए, इस खर्च की तुलना कुछ अन्य खर्चों से करें:

- सन् 2005 में सरकार ने फ्रांस से छह परमाणु पनडुब्बियाँ खरीदने का फ़ैसला किया। प्रत्येक पनडुब्बी की कीमत करीब ₹ 3000 करोड़ है।
- दिल्ली में सन् 2010 में राष्ट्रमंडल खेलों का आयोजन हुआ। अनुमानतः इस पर ₹20,000 करोड़ से भी ज़्यादा खर्च हुए।

तो क्या चुनावों को महँगा माना जा सकता है? इस विषय पर अपनी राय बनाएँ और कक्षा में चर्चा करें।

© NCERT not to be republished

गुलबर्गा के चुनाव परिणाम

आइए, एक बार फिर गुलबर्गा के उदाहरण पर गौर करें। सन् 2014 में यहाँ कुल 8 उम्मीदवारों ने चुनाव लड़ा था। यहाँ के मतदाताओं की संख्या 17.21 लाख थीं। इनमे से 9.98 लाख लोगों ने अपने मताधिकार का प्रयोग किया। कांग्रेस पार्टी के उम्मीदवार मल्लिकार्जुन खड़गे को 5.07 लाख वोट मिले। यह कुल पड़े मतों का 50.82 फीसदी था। लेकिन बाकी किसी भी उम्मीदवार से ज़्यादा वोट पाने के कारण उन्हें गुलबर्गा संसदीय क्षेत्र से सांसद निर्वाचित घोषित किया गया।

गुलबर्गा लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र 2014 का चुनाव परिणाम

उम्मीदवार	पार्टी	मिले वोट	वोटों का प्रतिशत
डी. जी. सागर	जनता दल (सेक्यूलर)	15690	1.57
मल्लिकार्जुन खड़गे	इंडियन नेशनल कॉंग्रेस	507193	50.82
दन्नि महादेव बी.	बहुजन समाज पार्टी	11428	1.14
रेवूनायक बेलमगि	भारतीय जनता पार्टी	432460	43.33
बी.टी. ललिता नायक	आम आदमी पार्टी	9074	0.91
एस. एम. शर्मा	एसयूसीआई	4943	0.50
शंकर जाधव	बीएचपीपी	2877	0.29
रामु	निर्दलीय	4085	0.41
नोटा (नन ऑफ द एबव)	—	9888	0.99

- **अपना मत डालने वाले मतदाताओं का प्रतिशत कितना था?**
- **क्या चुनाव जीतने के लिए यह ज़रूरी है कि किसी व्यक्ति को डाले गए मतों में से आधे से अधिक मत मिलें?**

के नाम और उनके चुनाव चिह्न बने होते हैं। निर्दलीय उम्मीदवारों को भी चुनाव अधिकारी चुनाव चिह्न देते हैं। मतदाता को जिस उम्मीदवार को वोट देना होता है उसके चुनाव चिह्न के आगे बने बटन को एक बार दबा भर देना होता है।

मतदान हो जाने के बाद सभी वोटिंग मशीनों को सील बंद करके एक सुरक्षित जगह पर पहुँचा दिया जाता है। फिर एक तय तारीख पर एक चुनाव क्षेत्र की सभी मशीनों को एक साथ खोला जाता है और मतों की गिनती की जाती है। वहाँ सभी दलों के एजेंट रहते हैं जिससे मतगणना का काम निष्पक्ष ढंग से हो सके। किसी चुनाव क्षेत्र में सबसे ज़्यादा मत पाने वाले उम्मीदवार को विजयी घोषित किया जाता है। आम चुनाव में अमूमन सभी निर्वाचन क्षेत्रों में मतगणना एक ही तारीख पर होती है। टीवी चैनल, रेडियो और अखबारों के लिए यह बहुत बड़ा अवसर होता है और वे इसकी खबरें पूरे विस्तार से देते हैं। कुछ घंटों की गिनती में ही सारे परिणाम मालूम हो जाते हैं और यह स्पष्ट हो जाता है कि कौन अगली सरकार बनाने जा रहा है।

मतदान केंद्रों और मतगणना केंद्रों पर पार्टी या उम्मीदवार के एजेंट क्यों मौजूद होते हैं?

इनमें कौन-सा काम आदर्श चुनाव संहिता का उल्लंघन है, कौन-सा नहीं?
- मतदान की तारीख से पहले मंत्री द्वारा अपने निर्वाचन क्षेत्र के लिए नई रेलगाड़ी को हरी झंडी दिखाकर रवाना करना।
- एक उम्मीदवार ने वायदा किया कि चुने जाने पर वह अपने निर्वाचन क्षेत्र में नई रेलगाड़ी चलवाएगा।
- एक उम्मीदवार के समर्थकों द्वारा मतदाताओं को एक मंदिर में ले जाकर उनसे उसी उम्मीदवार को वोट देने की शपथ दिलाना।
- किसी उम्मीदवार के समर्थकों द्वारा झुग्गी बस्ती में वोट के वायदे लेकर कंबल बाँटना।

2018-19

५.३ भारत में चुनाव क्यों लोकतांत्रिक है ?

हम चुनाव में गड़बड़ियों और धाँधलियों के बारे में पढ़ते रहते हैं। अखबार और टीवी चैनलों की खबरों में अकसर ऐसी गड़बड़ियों की चर्चा रहती है और आरोप लगाए जाते हैं। अधिकांश खबरों में कुछ इस तरह की गड़बड़ियों की सूचना होती हैं:

- मतदाता सूची में फर्जी नाम डालने और असली नामों को गायब करने की।
- शासक दल द्वारा सरकारी सुविधाओं और अधिकारियों के दुरुपयोग की।
- अमीर उम्मीदवारों और बड़ी पार्टियों द्वारा बड़े पैमाने पर धन खर्च करने की।
- मतदान के दिन चुनावी धांधली। मतदाताओं को डराना और फ़र्जी मतदान करना।

इनमें से अनेक खबरें सही होती हैं। ऐसी खबरों को पढ़ने या टीवी पर देखते हुए हमें दुख होता है। पर सौभाग्य से ये गड़बड़ियाँ इतने बड़े पैमाने पर नहीं होतीं कि चुनाव के उद्देश्य को ही नकार दें। इस परिप्रेक्ष्य में अगर एक-एक करके सवाल उठाएँ तो यह बात ज़्यादा स्पष्ट हो जाती है। क्या कोई पार्टी बिना जनसमर्थन के सिर्फ़ चुनावी धाँधलियों के सहारे चुनाव जीतकर सत्ता में आ सकती है? यह एक महत्त्वपूर्ण सवाल है। आइए, इस सवाल के विभिन्न पहलुओं पर सावधानी से गौर करें।

स्वतंत्र चुनाव आयोग

चुनाव निष्पक्ष हुए हैं या नहीं इसे जाँचने का एक सरल तरीका है यह देखना कि उनका संचालन कौन करता है। क्या चुनाव कराने वाले लोग सरकार से स्वतंत्र हैं? या फिर सरकार या शासक पार्टी उन पर दबाव और प्रभाव बनाती है? क्या उनके पास स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने की शक्ति है? क्या वे इन शक्तियों का वास्तव में प्रयोग करते हैं?

हमारे देश के लिए इन सवालों का जवाब काफी हद तक सकारात्मक है। हमारे देश में चुनाव एक स्वतंत्र और बहुत ताकतवर चुनाव आयोग द्वारा करवाए जाते हैं। इसे न्यायपालिका के समान ही आज़ादी प्राप्त है। मुख्य निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति करते हैं। एक बार नियुक्ति हो जाने के बाद निर्वाचन आयुक्त राष्ट्रपति या सरकार के प्रति जवाबदेह नहीं रहता। अगर शासक पार्टी या सरकार को चुनाव आयोग पसंद न हो तब भी मुख्य निर्वाचन आयुक्त को हटा पाना लगभग असंभव है।

दुनिया के शायद ही किसी चुनाव आयोग को भारत निर्वाचन आयोग जितने अधिकार प्राप्त होंगे।

- निर्वाचन आयोग चुनाव की अधिसूचना जारी करने से लेकर चुनावी नतीजों की घोषणा तक, पूरी चुनाव प्रक्रिया के संचालन के हर पहलू पर निर्णय लेता है।
- यह आदर्श चुनाव संहिता लागू कराता है और इसका उल्लंघन करने वाले उम्मीदवारों और पार्टियों को सज़ा देता है।
- चुनाव के दौरान निर्वाचन आयोग सरकार को दिशा-निर्देश मानने का आदेश दे सकता है। इसमें सरकार द्वारा चुनाव जीतने के लिए चुनाव में सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग रोकना या अधिकारियों का तबादला करना भी शामिल है।
- चुनाव ड्यूटी पर तैनात अधिकारी सरकार के नियंत्रण में न होकर निर्वाचन आयोग के अधीन काम करते हैं।

पिछले करीब पच्चीस वर्षों के दौरान निर्वाचन आयोग ने अपनी सारी शक्तियों का उपयोग

भारत निर्वाचन आयोग के बारे में अधिक जानकारी के लिए देखें http://eci.nic.in

चुनाव आयोग के पास इतनी शक्ति क्यों है? क्या यह लोकतंत्र के लिए अच्छा है?

© NCERT not to be republished

शुरू किया है। साथ ही उसने अपनी शक्तियों में विस्तार भी किया है। अब यह आम बात हो गयी है कि निर्वाचन आयोग सरकार और प्रशासन को उनकी गलतियों के लिए फटकार लगाए। अगर चुनाव अधिकारियों को लगता है कि कुछ मतदान केंद्रों पर या पूरे चुनाव क्षेत्र में मतदान ठीक ढंग से नहीं हुआ है तो वे वहाँ फिर से मतदान का आदेश देते हैं। अक्सर शासक दलों को निर्वाचन आयोग के कामकाज से परेशानी होती है लेकिन उन्हें निर्वाचन आयोग के आदेश मानने होते हैं। अगर निर्वाचन आयोग स्वतंत्र और शक्तिशाली नहीं होता तो यह संभव न था।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

चुनाव आयोग ने 14वीं लोकसभा के गठन की अधिसूचना जारी की ।

उच्च न्यायालय ने चुनाव आयोग से अपराधी नेताओं पर रोक लगाने को कहा।

बिहार के चुनाव में मतदान के लिए फोटो पहचान पत्र अनिवार्य।

चुनाव आयोग को हरियाणा के नए पुलिस प्रमुख की नियुक्ति स्वीकार।

चुनाव आयोग ने चुनाव खर्च पर नकेल कसी।

चुनाव आयोग ने 398 मतदान केंद्रों पर फिर से वोट डालने के आदेश दिए।

चुनाव आयोग का एक और गुजरात दौरा, चुनावी तैयारियों का जायजा लिया।

राजनैतिक विज्ञापनों पर सेंसर का अधिकार हो: चुनाव आयोग

चुनाव आयोग ने गृह मंत्रालय के चुनाव सुधार संबंधी सुझाव नकारे।

'एक्ज़िट पोल' पर प्रतिबंध लगाने की फिलहाल कोई योजना नही–चुनाव आयोग।

चुनाव के गुप्त खर्च पर चुनाव आयोग की नजर।

इन सुर्खियों को ध्यान से पढ़िए और पहचानिए कि स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव के लिए चुनाव आयोग किन शक्तियों का प्रयोग कर रहा है।

© NCERT not to be republished

चुनाव में लोगों की भागीदारी

चुनावी प्रक्रिया की गुणवत्ता को जाँचने का एक और तरीका यह देखना है कि इसमें लोग उत्साह से भागीदारी करते हैं या नहीं। अगर चुनाव प्रक्रिया स्वतंत्र और निष्पक्ष नहीं होगी तो लोग इसमें भागीदारी करना ज़ारी नहीं रखेंगे। अब इन लेखाचित्रों को पढ़िए और भारतीय चुनाव में लोगों की भागीदारी के बारे में कुछ निष्कर्ष निकालिए।

1 चुनाव में लोगों की भागीदारी का पैमाना आम तौर पर मतदान करने वाले लोगों के आँकड़े को बनाया जाता है। मतदान की योग्यता रखने वाले कितने प्रतिशत लोगों ने असल में मतदान किया यह हिसाब लगाना मुश्किल नहीं है। पिछले पचास वर्षों में यूरोप और उत्तरी अमेरिका के लोकतांत्रिक देशों में मतदान का प्रतिशत गिरा है। भारत में यह या तो स्थिर रहा है या ऊपर गया है।

1 भारत और ब्रिटेन में मतदान का प्रतिशत

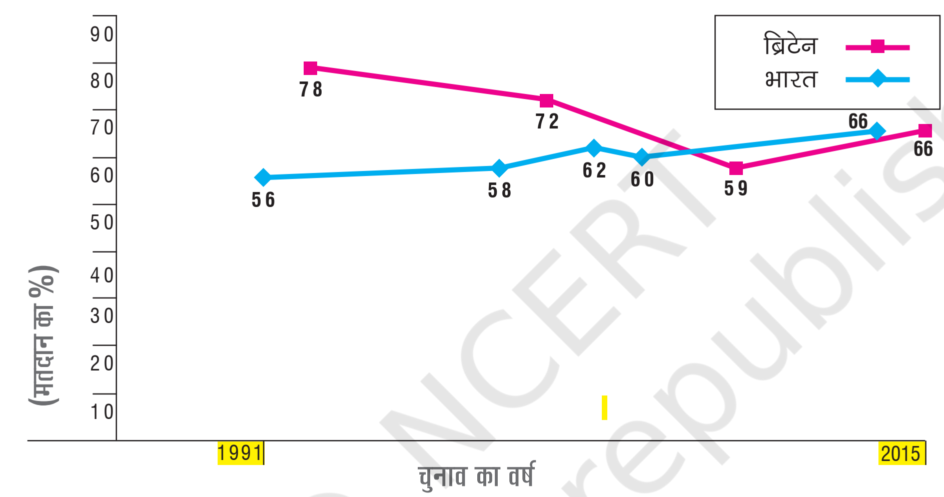

2 भारत में अमीर और बड़े लोगों की तुलना में गरीब, निरक्षर और कमज़ोर लोग ज्यादा संख्या में मतदान करते हैं। पश्चिम के लोकतंत्रों में स्थिति इससे उलट है। अमेरिका में गरीब लोग, अफ्रीकी मूल के लोग और हिस्पैनिक लोग अमीर और श्वेत लोगों की तुलना में काफी कम मतदान करते हैं।

2 भारत और अमेरिका में विभिन्न सामाजिक समूहों में मतदान प्रतिशत की तुलना

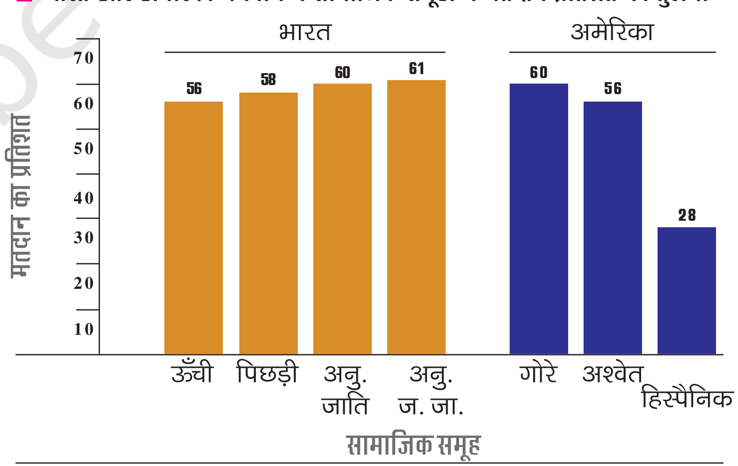

स्रोतः भारत के आँकड़े–राष्ट्रीय चुनाव अध्ययन 2004 और सीएसडीएस। अमेरिकी आँकड़े-नेशनल इलेक्शन स्टडी 2004, यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन।

© NCERT not to be republished

3 भारत में आम लोग चुनावों को बहुत महत्त्व देते हैं। उन्हें लगता है कि चुनाव के ज़रिए वे राजनैतिक दलों पर अपने अनुकूल नीति और कार्यक्रमों के लिए दबाव डाल सकते हैं। उन्हें लगता है कि देश के शासन-संचालन के तरीके में उनके वोट का महत्त्व है।

3 क्या आपको लगता है कि आपके वोट से फ़र्क पड़ता है?

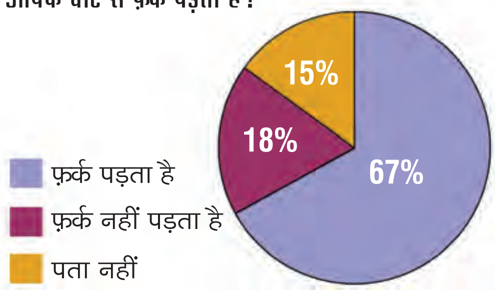

स्रोतः राष्ट्रीय चुनाव अध्ययन 2004, सीएसडीएस

4 साल-दर-साल चुनाव से संबंधित गतिविधियों में लोगों की सक्रियता बढ़ती जा रही है। 2004 के चुनाव में एक-तिहाई से ज़्यादा मतदाताओं ने चुनाव अभियान वाली गतिविधियों में किसी-न-किसी तरह की भागीदारी की। आधे से ज़्यादा लोगों ने खुद को किसी-न-किसी दल के नज़दीक बताया। प्रत्येक सात मतदाताओं में से एक व्यक्ति किसी-न-किसी राजनैतिक दल का सदस्य था।

4 भारत में चुनाव से संबंधित किसी भी गतिविधि में भाग लेने वालों का प्रतिशत

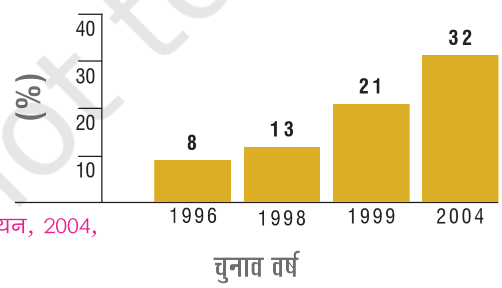

स्रोतः राष्ट्रीय चुनाव अध्ययन, 2004, सीएसडीएस

खुद करें, खुद सीखें

अपने परिवार के जो सदस्य मतदाता हैं उनसे पूछें कि उन्होंने पिछले लोकसभा या विधानसभा चुनाव में वोट दिया था या नहीं? अगर उन्होंने वोट नहीं दिया हो तो उनसे इसका कारण पूछिए। अगर उन्होंने मतदान किया हो तो उनसे पूछिए कि उन्होंने किस पार्टी और किस उम्मीदवार को वोट दिया और क्यों दिया। उनसे यह भी पूछिए कि क्या चुनावी सभा या रैली में शामिल होने जैसी किसी चुनावी गतिविधि में भी उन्होंने हिस्सा लिया था।

चुनावी नतीजों को स्वीकार करना

चुनाव के स्वतंत्र और निष्पक्ष होने का आखिरी पैमाना उसके नतीजे ही हैं। अगर चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष ढंग से न हों तो नतीजे हरदम ताकतवर जमात के पक्ष में ही जाते हैं। ऐसी स्थिति में शासक पार्टी चुनाव हारती ही नहीं है। आम तौर पर हारने वाली पार्टी गड़बड़ ढंग से कराए गए चुनाव के नतीज़ों को स्वीकार नहीं करती।

भारत में चुनावी नतीज़े खुद ही काफ़ी कुछ कह देते हैं।

- भारत में शासक दल राष्ट्रीय और प्रांतीय स्तर पर अकसर चुनाव हारते रहे हैं। बल्कि पिछले पंद्रह वर्षों में भारत में जितने चुनाव हुए हैं उनमें से प्रत्येक तीन में से दो में शासक पार्टियाँ हारी ही हैं।
- अमेरिका में मौजूदा चुना हुआ प्रतिनिधि शायद ही कभी चुनाव हारता है। भारत में निवर्तमान सांसदों और विधायकों में से आधे चुनाव हार जाते हैं।
- 'वोट खरीदने' में सक्षम पैसे वाले उम्मीदवार हों या आपराधिक पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवार, उनका भी चुनाव हारना बहुत आम है।
- कुछेक अपवादों को छोड़ दें तो अकसर हारी हुई पार्टी भी चुनाव के नतीजों को जनादेश मानकर स्वीकार कर लेती है।

2018-19

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव की चुनौतियाँ

इन बातों से हम इस सरल से निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि भारत में चुनाव बुनियादी रूप से स्वतंत्र और निष्पक्ष हैं। जो पार्टी चुनाव जीतकर सरकार बनाती है उसे लोगों का समर्थन प्राप्त होता ही है। संभव है कि हर निर्वाचन क्षेत्र पर यह बात लागू न होती हो। कुछ उम्मीदवार पैसों के ज़ोर पर या गलत तरीकों से जीते हो सकते हैं पर चुनाव का कुल नतीज़ा अभी भी लोगों की इच्छा को ही बताता है। पिछले पचास वर्षों में हमारे देश में इस सामान्य नियम के थोड़े-बहुत अपवाद हैं। और यही चीज़ भारतीय चुनाव प्रणाली को लोकतांत्रिक बनाती है।

पर जब आप थोड़े ज़्यादा गंभीर मसलों पर गौर करके कुछ सवाल उठाएँगे तो तस्वीर थोड़ी अलग लगेगी। क्या लोग पूरी समझदारी और सारी चीज़ें जानकर फ़ैसले करते हैं? क्या मतदाताओं के पास सचमुच स्वस्थ विकल्प उपलब्ध होते हैं? क्या चुनाव मैदान सबको बराबरी का अवसर देता है? क्या कोई सामान्य नागरिक चुनाव जीतने की कल्पना भी कर सकता है? इस तरह के सवाल भारतीय चुनाव व्यवस्था की सीमाओं और चुनौतियों की ओर हमारा ध्यान दिलाते हैं। ये कुछ ऐसे ही मुद्दे हैं:

- ज़्यादा रुपये-पैसे वाले उम्मीदवार और पार्टियाँ गलत तरीके से चुनाव जीत ही जाएँगे यह कहना मुश्किल है पर उनकी स्थिति दूसरों से ज़्यादा मज़बूत रहती है।

इस कार्टून में एक नेताजी को संवाददाता सम्मेलन से बाहर आते हुए दिखाया गया है और वे भाई-भतीजावाद के पक्ष में बोल रहे हैं। क्या भाई-भतीजावाद कुछ राज्यों और पार्टियों तक ही सीमित है?

कार्टून बूझें

© नर्लिकॉन, *एल इकानोमिस्ता*, केगल कार्टून्स इंक

चुनावी अभियान शीर्षक वाला यह कार्टून लातिनी अमेरिका के संदर्भ में बना था। क्या यह भारत और अन्य लोकतांत्रिक देशों पर भी लागू होता है?

कार्टून बूझें

क्या यह कार्टून वोट के पहले और बाद में मतदाता की सही स्थिति को दिखाता है? क्या किसी लोकतंत्र में ऐसा हमेशा ही होगा? क्या आप कुछ ऐसे उदाहरण सोच सकते हैं जब ऐसा नहीं हुआ हो?

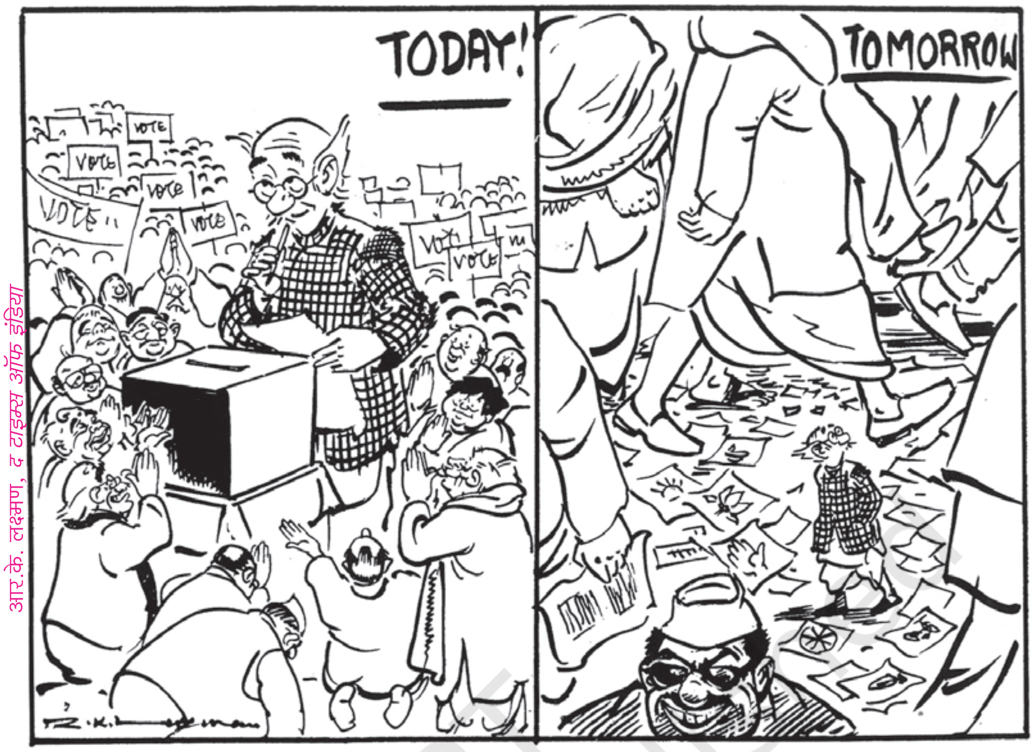

आर.के. लक्ष्मण, द टाइम्स ऑफ इंडिया

- देश के कुछ इलाकों में आपराधिक पृष्ठभूमि और संबंधों वाले उम्मीदवार दूसरों को चुनाव मैदान से बाहर करने और बड़ी पार्टियों के टिकट पाने में सफल होने लगे हैं।
- अलग-अलग पार्टियों में कुछेक परिवारों का ज़ोर है और उनके रिश्तेदार आसानी से टिकट पा जाते हैं।
- अकसर आम आदमी के लिए चुनाव में कोई ढंग का विकल्प नहीं होता क्योंकि दोनों प्रमुख पार्टियों की नीतियाँ और व्यवहार कमोबेश एक-से होते हैं।
- बड़ी पार्टियों की तुलना में छोटे दलों और निर्दलीय उम्मीदवारों को कई तरह की परेशानियाँ उठानी पड़ती हैं।

ये चुनौतियाँ भारत की ही नहीं हैं। कई स्थापित लोकतंत्रों की भी यही स्थिति है। लोकतंत्र में जो लोग आस्था रखते हैं उनके लिए ये चीज़ें गहरी चिंता का विषय हैं। इनमें से कुछ समस्याओं से मुक्ति पाने के लिए चुनाव प्रणाली में ज़रूरी बदलावों की माँग नागरिकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और संगठनों की तरफ़ से होती रही है। क्या आप कुछ चुनाव सुधार सुझा सकते हैं? इन चुनौतियों का सामना करने के लिए एक आम नागरिक क्या कर सकता है?

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

ये भारतीय चुनावों के बारे में कुछ तथ्य हैं। इनमें से प्रत्येक पर टिप्पणी करके यह बताइए कि ये चीज़ें हमारी चुनाव प्रणाली की शक्ति को बढ़ाती हैं या कमज़ोरी को।

- लोकसभा में 2009 तक महिला सदस्यों की संख्या 10 फ़ीसदी से कम ही रही है।
- चुनाव कब हों इस बारे में अकसर चुनाव आयोग सरकार की नहीं सुनता।
- सोलहवीं लोकसभा के 440 से अधिक सदस्यों की संपत्ति एक करोड़ से भी अधिक है।
- चुनाव हारने के बाद एक मुख्यमंत्री ने कहा, 'मुझे जनादेश मंजूर है।'

© NCERT not to be republished

चुनावी धांधली: चुनाव में अपने वोट बढ़ाने के लिए उम्मीदवारों और पार्टियों द्वारा की जाने वाली गड़बड़ या फ़रेब। इसमें कुछ ही लोगों द्वारा काफ़ी सारे लोगों के वोट डाल देना; एक ही व्यक्ति द्वारा अलग-अलग लोगों के नाम पर वोट डालना और मतदान-अधिकारियों को डरा-धमकाकर या रिश्वत देकर अपने उम्मीदवार के पक्ष में काम करवाना जैसी बातें शामिल हैं।

मतदान केंद्र पर कब्ज़ा: किसी उम्मीदवार या पार्टी के समर्थकों या भाड़े के अपराधियों द्वारा मतदान केंद्र पर कब्ज़ा करना, असली मतदाताओं को मतदान केंद्रों पर आने से रोकना और खुद सारे या ज़्यादातर वोट डाल देना।

निर्वाचन क्षेत्र: एक खास भौगोलिक क्षेत्र के मतदाता जो एक प्रतिनिधि का चुनाव करते हैं।

आचार-संहिता: चुनाव के समय पार्टियों और उम्मीदवारों द्वारा माने जाने वाले कायदे-कानून और दिशा-निर्देश।

प्रश्नावली

1. चुनाव क्यों होते हैं, इस बारे में इनमें से कौन-सा वाक्य ठीक नहीं है?

   क. चुनाव लोगों को सरकार के कामकाज का फ़ैसला करने का अवसर देते हैं।
   ख. लोग चुनाव में अपनी पसंद के उम्मीदवार का चुनाव करते हैं।
   ग. चुनाव लोगों को न्यायपालिका के कामकाज का मूल्यांकन करने का अवसर देते हैं।
   घ. लोग चुनाव से अपनी पसंद की नीतियाँ बना सकते हैं।

2. भारत के चुनाव लोकतांत्रिक हैं, यह बताने के लिए इनमें कौन-सा वाक्य सही कारण नहीं देता?

   क. भारत में दुनिया के सबसे ज़्यादा मतदाता हैं।
   ख. भारत में चुनाव आयोग काफ़ी शक्तिशाली है।
   ग. भारत में 18 वर्ष से अधिक उम्र का हर व्यक्ति मतदाता है।
   घ. भारत में चुनाव हारने वाली पार्टियाँ जनादेश स्वीकार कर लेती हैं।

3. निम्नलिखित में मेल ढूँढ़ें

क. समय-समय पर मतदाता सूची का नवीनीकरण आवश्यक है ताकि	1. समाज के हर तबके का समुचित प्रतिनिधित्व हो सके।
ख. कुछ निर्वाचन-क्षेत्र अनु.जाति और अनु. जनजाति के लिए आरक्षित हैं ताकि	2. हर एक को अपना प्रतिनिधि चुनने का समान अवसर मिले।
ग. प्रत्येक को सिर्फ़ एक वोट डालने का हक है ताकि	3. हर उम्मीदवार को चुनावों में लड़ने का समान अवसर मिले।
घ. सत्ताधारी दल को सरकारी वाहन के इस्तेमाल की अनुमति नहीं क्योंकि	4. संभव है कुछ लोग उस जगह से अलग चले गए हों जहाँ उन्होंने पिछले चुनाव में मतदान किया था।

© NCERT not to be republished

प्रश्नावली

4. इस अध्याय में वर्णित चुनाव संबंधी सभी गतिविधियों की सूची बनाएँ और इन्हें चुनाव में सबसे पहले किए जाने वाले काम से लेकर आखिर तक के क्रम में सजाएँ। इनमें से कुछ मामले हैं:

चुनाव घोषणा पत्र जारी करना, वोटों की गिनती, मतदाता सूची बनाना, चुनाव अभियान, चुनाव नतीजों की घोषणा, मतदान, पुनर्मतदान के आदेश, चुनाव प्रक्रिया की घोषणा, नामांकन दाखिल करना।

5. सुरेखा एक राज्य विधानसभा क्षेत्र में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने वाली अधिकारी है। चुनाव के इन चरणों में उसे किन-किन बातों पर ध्यान देना चाहिए?

क. चुनाव प्रचार
ख. मतदान के दिन
ग. मतगणना के दिन

6. नीचे दी गई तालिका बताती है कि अमेरिकी कांग्रेस के चुनावों के विजयी उम्मीदवारों में अमेरिकी समाज के विभिन्न समुदाय के सदस्यों का क्या अनुपात था। ये किस अनुपात में जीते इसकी तुलना अमेरिकी समाज में इन समुदायों की आबादी के अनुपात से कीजिए। इसके आधार पर क्या आप अमेरिकी संसद के चुनाव में भी आरक्षण का सुझाव देंगे? अगर हाँ तो क्यों और किस समुदाय के लिए? अगर नहीं, तो क्यों?

समुदाय का प्रतिनिधित्व (प्रतिशत में)

	अमेरिकी प्रतिनिधि सभा में	अमेरिकी समाज में
अश्वेत	8	13
हिस्पैनिक	5	13
श्वेत	86	70

7. क्या हम इस अध्याय में दी गई सूचनाओं के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष निकाल सकते हैं? इनमें से सभी पर अपनी राय के पक्ष में दो तथ्य प्रस्तुत कीजिए।

क. भारत के चुनाव आयोग को देश में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव करा सकने लायक पर्याप्त अधिकार नहीं हैं।
ख. हमारे देश के चुनाव में लोगों की जबर्दस्त भागीदारी होती है।
ग. सत्ताधारी पार्टी के लिए चुनाव जीतना बहुत आसान होता है।
घ. अपने चुनावों को पूरी तरह से निष्पक्ष और स्वतंत्र बनाने के लिए कई कदम उठाने ज़रूरी हैं।

8. चिनप्पा को दहेज के लिए अपनी पत्नी को परेशान करने के जुर्म में सज़ा मिली थी। सतबीर को छुआछूत मानने का दोषी माना गया था। दोनों को अदालत ने चुनाव लड़ने की इजाज़त नहीं दी। क्या यह फ़ैसला लोकतांत्रिक चुनावों के बुनियादी सिद्धांतों के खिलाफ़ जाता है? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।

9. यहाँ दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में चुनावी गड़बड़ियों की कुछ रिपोर्टें दी गई हैं। क्या ये देश अपने यहाँ के चुनावों में सुधार के लिए भारत से कुछ बातें सीख सकते हैं? प्रत्येक मामले में आप क्या सुझाव देंगे?

क. नाइजीरिया के एक चुनाव में मतगणना अधिकारी ने जान-बूझकर एक उम्मीदवार को मिले वोटों की संख्या बढ़ा दी और उसे जीता हुआ घोषित कर दिया। बाद में अदालत ने पाया कि दूसरे उम्मीदवार को मिले पाँच लाख वोटों को उस उम्मीदवार के पक्ष में दर्ज कर लिया गया था।

© NCERT not to be republished

ख. फिजी में चुनाव से ठीक पहले एक परचा बाँटा गया जिसमें धमकी दी गई थी कि अगर पूर्व प्रधानमंत्री महेंद्र चौधरी के पक्ष में वोट दिया गया तो खून-खराबा हो जाएगा। यह धमकी भारतीय मूल के मतदाताओं को दी गई थी।

ग. अमेरिका के हर प्रांत में मतदान, मतगणना और चुनाव संचालन की अपनी-अपनी प्रणालियाँ हैं। सन् 2000 के चुनाव में फ्लोरिडा प्रांत के अधिकारियों ने जॉर्ज बुश के पक्ष में अनेक विवादास्पद फ़ैसले लिए पर उनके फ़ैसले को कोई भी नहीं बदल सका।

प्रश्नावली

1`. भारत में चुनावी गड़बड़ियों से संबधित कुछ रिपोर्टें यहाँ दी गई हैं। प्रत्येक मामले में समस्या की पहचान कीजिए। इन्हें दूर करने के लिए क्या किया जा सकता है?

क. चुनाव की घोषणा होते ही मंत्री महोदय ने बंद पड़ी चीनी मिल को दोबारा खोलने के लिए वित्तीय सहायता देने की घोषणा की।

ख. विपक्षी दलों का आरोप था कि दूरदर्शन और आकाशवाणी पर उनके बयानों और चुनाव अभियान को उचित जगह नहीं मिली।

ग. चुनाव आयोग की जाँच से एक राज्य की मतदाता सूची में 20 लाख फर्ज़ी मतदाताओं के नाम मिले।

घ. एक राजनैतिक दल के गुंडे बंदूकों के साथ घूम रहे थे, दूसरी पार्टियों के लोगों को मतदान में भाग लेने से रोक रहे थे और दूसरी पार्टी की चुनावी सभाओं पर हमले कर रहे थे।

11. जब यह अध्याय पढ़ाया जा रहा था तो रमेश कक्षा में नहीं आ पाया था। अगले दिन कक्षा में आने के बाद उसने अपने पिताजी से सुनी बातों को दोहराया। क्या आप रमेश को बता सकते हैं कि उसके इन बयानों में क्या गड़बड़ी है?

क. औरतें उसी तरह वोट देती हैं जैसा पुरुष उनसे कहते हैं इसलिए उनको मताधिकार देने का कोई मतलब नहीं है।

ख. पार्टी-पॉलिटिक्स से समाज में तनाव पैदा होता है। चुनाव में सबकी सहमति वाला फ़ैसला होना चाहिए, प्रतिद्वंद्विता नहीं होनी चाहिए।

ग. सिर्फ स्नातकों को ही चुनाव लड़ने की इजाज़त होनी चाहिए।

राज्य विधानसभाओं के चुनाव अब किसी-न-किसी राज्य में हर वर्ष होते ही रहते हैं। तुम्हारी पढ़ाई के इस वर्ष में जिस राज्य में चुनाव हो रहे हैं उससे संबंधित सूचनाएँ इकट्ठा करो। सूचनाएँ जमा करते हुए उन्हें तीन हिस्सों में बाँटते चलो।

- चुनाव के पहले क्या-क्या मुख्य घटनाएँ हुईं—राजनैतिक दलों का मुख्य एजेंडा, लोगों की मांगों के बारे में सूचनाएँ, चुनाव आयोग की भूमिका।
- मतदान और मतगणना के दिन क्या मुख्य घटनाएँ थीं—चुनाव में भाग लेने वालों का प्रतिशत क्या था, क्या चुनावी गड़बड़ी भी हुई, क्या पुनर्मतदान हुए, किस तरह की भविष्यवाणियाँ की गई थीं।
- चुनाव के बाद क्या हुआ—चुनाव जीतने या हारने वाली पार्टियों ने क्या दावे किए, कौन पार्टी सफ़ल हुई, मुख्यमंत्री का चुनाव किस प्रकार हुआ।

© NCERT not to be republished

NVD PLEDGE

हम, भारत के नागरिक, लोकतंत्र में अपनी पूर्ण आस्था रखते हुए यह शपथ लेते हैं कि हम अपने देश की लोकतांत्रिक परम्पराओं की मर्यादा को बनाए रखेंगे तथा स्वतंत्र, निष्पक्ष एवं शांतिपूर्ण निर्वाचन की गरिमा को अक्षुण्ण रखते हुए, निर्भीक होकर, धर्म, वर्ग, जाति,समुदाय, भाषा अथवा अन्य किसी भी प्रलोभन से प्रभावित हुए बिना सभी निर्वाचनों में अपने मताधिकार का प्रयोग करेंगे।

We, the citizens of India, having abiding faith in democracy, hereby pledge to uphold the democratic traditions of our country and the dignity of free, fair and peaceful elections, and to vote in every election fearlessly and without being influenced by considerations of religion, race, caste, community, language or any inducement.

आपके विद्यालय ने 25 जनवरी को **राष्ट्रीय मतदाता दिवस** (National Voters' Day-NVD) कैसे मनाया? क्या आपने एनवीडी (NVD) प्रतिज्ञा ली?

2016 में 67वें गणतंत्र दिवस के अवसर पर नई दिल्ली में राजपथ से गुजरती हुई भारत निर्वाचन आयोग की झाँकी।

अध्याय 5

संस्थाओं का कामकाज

परिचय

लोकतंत्र का मतलब लोगों द्वारा अपने शासकों का चुनाव करना भर नहीं है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में शासकों को भी कुछ कायदे-कानूनों को मानना होता है। उन्हें भी संस्थाओं के साथ और संस्थाओं के भीतर ही रहकर काम करना होता है। यह अध्याय लोकतंत्र में संस्थाओं के कामकाज से संबंधित है। हम इसमें समझने का प्रयास करेंगे कि हमारे देश में किस तरह महत्त्वपूर्ण फ़ैसले करके उन्हें लागू किया जाता है। हम यह भी देखेंगे कि इन फ़ैसलों से संबंधित विवादों को किस तरह सुलझाया जाता है। इस अध्याय में हम इन फ़ैसलों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली तीन संस्थाओं—विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका—पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

आप पहले की कक्षाओं में इन संस्थाओं के बारे में कुछ जानकारी हासिल कर चुके होंगे। हम यहाँ उनका संक्षेप में वर्णन करके कुछ और महत्त्वपूर्ण सवालों पर ध्यान देंगे। हर संस्था के संबंध में हम यह प्रश्न करेंगे कि वह किस तरह के काम करती है? एक संस्था दूसरी संस्था से कैसे जुड़ी है? इनके कामों को क्या चीज़ कम या ज़्यादा लोकतांत्रिक बनाती है? इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य यह समझना है कि किस तरह ये संस्थाएँ मिलकर सरकार का काम करती हैं। कई बार हम इनकी तुलना दूसरी लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं की इसी तरह की संस्थाओं से करते हैं। इस अध्याय में हम राष्ट्रीय स्तर की सरकार के कामकाज से उदाहरण देंगे, राष्ट्रीय स्तर पर भारत की सरकार को केंद्र या संघ की सरकार भी कहा जाता है। इस अध्याय को पढ़ते हुए आप अपने प्रदेश की सरकार के कामकाज के उदाहरणों पर भी नज़र रख सकते हैं।

© NCERT not to be republished

5.1 प्रमुख नीतिगत फ़ैसले कैसे किए जाते हैं?

एक सरकारी आदेश

13 अगस्त 1990 के दिन भारत सरकार ने एक आदेश जारी किया। इसे कार्यालय ज्ञापन कहा गया। सभी सरकारी आदेशों की तरह, इस ज्ञापन पर भी एक संख्या थी। यह आदेश उसी संख्या से जाना जाता है: ओ.एम.नं. 36012/31/90। कार्मिक, जनशिकायत और पेंशन मंत्रालय के कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग के एक संयुक्त सचिव, ने इस आदेश पर दस्तखत किए थे। यह छोटा-सा आदेश, मुश्किल से एक पन्ने का था। अगर आप इसे देखेंगे तो यह एक वैसा ही आम सर्कुलर या नोटिस लगेगा जैसे आपने स्कूल में देखे होंगे। सरकार हर रोज विभिन्न मसलों पर सैकड़ों आदेश जारी करती है। लेकिन यह आदेश बहुत महत्त्वपूर्ण था और कई सालों तक विवाद का कारण बना रहा। आइए देखें कि यह निर्णय किस तरह लिया गया और इसके बाद क्या हुआ।

इस सरकारी आदेश में एक प्रमुख नीतिगत फ़ैसले की घोषणा की गई थी। इसमें कहा गया

G.I., Dept. of Per. & Trg., O.M. No.36012/31/90-Est. (SCT), dated 13.8.1990

SUBJECT: 27% Reservation for Socially and Educationally Backward Classes in Civil Posts/ Services.

In a multiple undulating society like ours, early achievement of the objective of social justice as enshrined in the Constitution is a must. The Second Backward Classes Commission, called the MANDAL COMMISSION, was established by the then Government with this purpose in view, which submitted its report to the Government of India on 31st December, 1980.

2. Government have carefully considered the report and the recommendations of the Commission in the present context regarding the benefits to be extended to the socially and educationally backward classes as opined by the Commission and are of the clear view that at the outset certain weightage has to be provided to such classes in the services of the Union and their Public Undertakings. Accordingly orders are issued as follows :-

(i) 27% of the vacancies in civil posts and services under the Government of India shall be reserved for SEBC;

(ii) The aforesaid reservation shall apply to vacancies to be filled by direct

G.I., Dept. of Per. & Trg., O.M. No.36012/22/93-Est. (SCT) dated 8.9.1993

SUBJECT: ***Reservation for Other Backward Classes in Civil Posts and Services under the Government of India - Regarding.***

The undersigned is directed to refer to this Department's O.M. No.36012/31/90-Estt. (SCT), dated the 13th August, 1990[1] and 25th September, 1991[2], regarding reservation for Socially and Educationally Backward Classes in Civil Posts and Services under the Government of India and to say that following the Supreme Court judgement in the Indira Sawhney and other v. Union of India and others case [Writ Petition (Civil) No.930 of 1990], the Government of India appointed an Expert Committee to recommend the criteria for exclusion of the socially advanced persons/sections from the benefits of reservations for Other Backward Classes in civil posts and services under the Government of India.

© NCERT not to be republished

था कि भारत सरकार के सरकारी पदों और सेवाओं में 27 फीसदी रिक्तियाँ सामाजिक एवं शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों (एसईबीसी) के लिए आरक्षित होंगी। अब तक जिन जाति समूहों को सरकार पिछड़ा मानती है उन्हीं का एक और नाम एसईबीसी (सोशली एंड एजुकेशनली बैकवर्ड क्लासेज) हैं। अब तक नौकरी में आरक्षण का लाभ केवल अनुसूचित जाति और जनजातियों को ही मिल रहा था। अब एसईबीसी या 'सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों' के लिए, तीसरी श्रेणी तैयार की जा रही थी और इनके लिए 27 फीसदी का अलग कोटा तैयार किया जा रहा था। अन्य लोग इन 27 फीसदी नौकरियों के लिए प्रतियोगिता नहीं कर सकते थे।

निर्णय करने वाले

इस ज्ञापन को जारी करने का फ़ैसला किसने किया? ज़ाहिर है, अकेले उस व्यक्ति ने इतना बड़ा फ़ैसला नहीं किया होगा जिसके हस्ताक्षर उस दस्तावेज पर थे। वह अपने मंत्री द्वारा दिए गए निर्देशों को लागू करने वाला अधिकारी था। कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग के मंत्री ने भी खुद यह निर्णय नहीं किया होगा। आप अनुमान लगा सकते हैं कि इतने बड़े निर्णय में देश के सभी प्रमुख अधिकारी शामिल रहे होंगे। आपने पिछली कक्षा में इनमें से कुछ के बारे में पहले पढ़ लिया होगा। अब एक बार फिर इन प्रमुख बिंदुओं पर सरसरी नज़र डालते हैं:

- राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष होता है और औपचारिक रूप से देश का सबसे बड़ा अधिकारी होता है।
- प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है और दरअसल सरकार की ओर से अधिकांश अधिकारों का इस्तेमाल वही करता है।
- प्रधानमंत्री की सिफ़ारिश पर राष्ट्रपति मंत्रियों को नियुक्त करता है। इनसे बनने वाले मंत्रिमंडल की बैठकों में ही राजकाज से जुड़े अधिकतर निर्णय लिए जाते हैं।
- संसद में राष्ट्रपति और दो सदन होते हैं— लोकसभा और राज्यसभा। प्रधानमंत्री को लोकसभा के सदस्यों के बहुमत का समर्थन हासिल होना ज़रूरी है।

तो, क्या कार्यालय ज्ञापन के फ़ैसले के मामले में ये सब शामिल थे? इसके बारे में पता करते हैं।

खुद करें, खुद सीखें

- ऊपर बतायी गयी बातों के अलावा इन संस्थाओं के बारे में पिछली कक्षाओं की और कौन-सी बातें आपको याद हैं? कक्षा में उस पर चर्चा करें।
- क्या आप अपनी राज्य सरकार द्वारा लिए गए किसी बड़े फ़ैसले को याद कर सकते हैं? राज्यपाल, मंत्रिमंडल, राज्य विधानसभा और न्यायालय किस तरह इस निर्णय में शामिल थे?

यह सरकारी आदेश एक लंबे घटनाचक्र का परिणाम था। भारत सरकार ने 1979 में दूसरा पिछड़ी जाति आयोग गठित किया था। इसकी अध्यक्षता बी.पी. मंडल ने की थी और इसी के कारण इसे आम तौर पर मंडल आयोग कहते हैं। इसे भारत में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की पहचान के लिए मापदंड तय करने और उनका पिछड़ापन दूर करने के उपाय बताने का जिम्मा सौंपा गया। इस आयोग ने 1980 में अपनी सिफ़ारिशें दी। आयोग द्वारा सुझाए गए उपायों में एक सिफ़ारिश थी—सरकारी नौकरियों में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए 27 फीसदी आरक्षण देना। इस रिपोर्ट और उसकी सिफ़ारिशों पर संसद में चर्चा हुई।

वर्षों तक कई पार्टियाँ और सांसद इसे लागू करने की माँग करते रहे। फिर 1989 का

क्या हर सरकारी आदेश एक बड़ा राजनैतिक फ़ैसला होता है? इस सरकारी आदेश में खास बात है।

अब आई बात समझ में इसीलिए वे राजनीति के मंडलीकरण की बात करते हैं। ठीक कहा न मैंने?

© NCERT not to be republished

कार्टून बूझें

सन् 1990-91 में आरक्षण पर बहस का मुद्दा इतना महत्त्वपूर्ण था कि विज्ञापनकर्ताओं ने अपने उत्पाद को बेचने के लिए इस विषय का उपयोग किया। क्या आप अमूल के इन होर्डिंग में राजनैतिक घटनाओं और बहसों की ओर कोई इशारा ढूँढ़ सकते हैं?

लोकसभा चुनाव हुआ। जनता दल ने अपने चुनाव घोषणापत्र में वादा किया कि सत्ता में आने पर वह मंडल आयोग की सिफ़ारिशों को लागू करेगा। चुनाव के बाद जनता दल की ही सरकार बनी और इसके नेता वी.पी. सिंह प्रधानमंत्री बने। इसके बाद कई घटनाएँ हुईं:

- नयी सरकार ने संसद में राष्ट्रपति के भाषण के जरिए मंडल रिपोर्ट लागू करने की अपनी मंशा की घोषणा की।
- 6 अगस्त 1990 को केंद्रीय कैबिनेट की बैठक में इसके बारे में एक औपचारिक निर्णय किया गया।
- अगले दिन प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह ने एक बयान के ज़रिए इस निर्णय के बारे में संसद के दोनों सदनों को सूचित किया।

© गुजरात सहकारी दुग्ध संघ, भारत

- कैबिनेट के फ़ैसले को कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग को भेज दिया गया। विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों ने कैबिनेट के निर्णय के मुताबिक एक आदेश तैयार किया और मंत्री की स्वीकृति केंद्रीय सरकार की तरफ़ से ली। एक अधिकारी ने उस आदेश पर हस्ताक्षर किए और इस तरह 13 अगस्त 1990 को ओ.एम. नं. 36012/31/90 तैयार हो गया।

अगले कुछ महीनों तक यह देश का सबसे ज्यादा चर्चित मुद्दा बना रहा। सभी अखबार और पत्रिकाओं में इस मुद्दे पर तरह-तरह के विचार आये, बहस चली। इसके चलते कई प्रदर्शन और जवाबी प्रदर्शन हुए। इनमें से कुछ हिंसक भी थे। इससे नौकरियों के हज़ारों अवसर प्रभावित होने वाले थे इसलिए लोगों की प्रतिक्रिया बहुत तीखी थी। कुछ लोगों का मानना था कि भारत में विभिन्न जातियों के बीच असमानता के कारण ही नौकरियों में **आरक्षण** ज़रूरी है। उनका मानना था कि इससे उन लोगों को बराबरी पर आने का मौका मिलेगा जिनको सरकारी नौकरियों में अभी तक उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिला है।

दूसरे पक्ष के लोगों का मानना था कि इस निर्णय से जो पिछड़े वर्ग के नहीं हैं उनके अवसर छिनेंगे। अधिक योग्यता होने पर भी उनको नौकरियाँ नहीं मिलेंगी। कुछ लोगों का मानना था कि इससे जातिवाद बढ़ेगा जिससे देश की प्रगति और एकता पर असर होगा। यह निर्णय अच्छा था या नहीं—इस अध्याय में हम इस बारे में बात नहीं करेंगे। हम इस उदाहरण को यहाँ सिर्फ़ यह समझाने के लिए बता रहे हैं कि देश में प्रमुख निर्णय कैसे लिए जाते हैं और उन्हें कैसे लागू किया जाता है।

फिर इस विवाद का निपटारा किसने किया? आप जानते हैं कि सरकारी निर्णय से उठने वाले

© NCERT not to be republished

विवादों का निपटारा सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय करते हैं। इस आदेश के विरोधी कुछ लोगों और संस्थाओं ने अदालतों में कई मुकदमे दायर कर दिए। उन्होंने अदालत से इस आदेश को अवैध घोषित करके लागू होने से रोकने की अपील की। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने इन सभी मुकदमों को एक साथ जोड़ दिया। इस मुकदमे को 'इंदिरा साहनी एवं अन्य बनाम भारत सरकार मामला' कहा जाता है। सर्वोच्च न्यायालय के 11 सबसे वरिष्ठ न्यायाधीशों ने दोनों पक्षों की दलीलें सुनीं। उन्होंने 1992 में बहुमत से फ़ैसला किया कि भारत सरकार का यह आदेश अवैध नहीं है। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार से उसके मूल आदेश में कुछ संशोधन करने को कहा। उसने कहा कि पिछड़े वर्ग के अच्छी स्थिति वाले लोगों को आरक्षण का लाभ नहीं मिलना चाहिए। उसी के मुताबिक, 8 सितंबर 1993 को कार्मिक एवं प्रशिक्षण मंत्रालय ने एक और आदेश ज़ारी किया। यह विवाद सुलझ गया और तभी से इस नीति पर अमल किया जा रहा है।

आरक्षण के मामले में किसने क्या किया?

सर्वोच्च न्यायालय	मंडल आयोग की सिफ़ारिशों को लागू करने की औपचारिक घोषणा की।
कैबिनेट	आदेश जारी करके घोषणा को लागू किया।
राष्ट्रपति	27 फीसदी आरक्षण देने का फ़ैसला किया।
सरकारी अधिकारी	आरक्षण को वैध करार दिया।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

राजनैतिक संस्थाओं की आवश्यकता

हमने एक उदाहरण देखा कि सरकार कैसे काम करती है। किसी देश को चलाने में इस तरह की कई गतिविधियाँ शामिल होती हैं। मिसाल के तौर पर, सरकार पर नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करने और सबको शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाएँ मुहैया कराने की ज़िम्मेदारी होती है। वह कर इकट्ठा करती है और इसे सेना, पुलिस तथा विकास कार्यक्रमों पर खर्च करती है। वह विभिन्न कल्याणकारी योजनाएँ बनाकर उन्हें लागू करती है। कुछ व्यक्तियों को इन गतिविधियों को चलाने के लिए फ़ैसला करना होता है। कुछ लोगों को इन्हें लागू कराना होता है। अगर इन फ़ैसलों या फिर लागू करने में कोई विवाद उठता है तो यह तय करने वाला भी कोई होना चाहिए कि क्या सही है और क्या गलत है। सबके लिए यह जानना भी ज़रूरी है कि कौन किस काम को करने के लिए ज़िम्मेदार है। यह भी ज़रूरी है कि भले ही प्रमुख पदों पर बैठे लोग बदल जाएँ लेकिन ये गतिविधियाँ जारी रहें।

लिहाज़ा, सभी आधुनिक लोकतांत्रिक देशों में इन कामों को देखने के लिए विभिन्न व्यवस्थाएँ की गई हैं। इस तरह की व्यवस्थाओं को संस्थाएँ कहते हैं। कोई भी लोकतंत्र तभी ठीक से काम करता है जब ये संस्थाएँ अपने काम को अच्छी

© NCERT not to be republished

आपके स्कूल को चलाने के लिए कौन-सी संस्थाएँ काम करती हैं? क्या यह अच्छा होता कि ज़्यादा स्कूल के कामकाज के बारे में सिर्फ एक व्यक्ति सभी फ़ैसले लेता?

तरह करती हैं। किसी भी देश के संविधान में प्रत्येक संस्था के अधिकारों और कार्यों के बारे में बुनियादी नियमों का वर्णन होता है। दिए गए उदाहरण में हमने इस तरह की विभिन्न संस्थाओं को काम करते देखा।

- प्रधानमंत्री और कैबिनेट ऐसी संस्थाएँ हैं जो सभी महत्त्वपूर्ण नीतिगत फ़ैसले करती हैं।
- मंत्रियों द्वारा किए गए फ़ैसले को लागू करने के उपायों के लिए एक निकाय के रूप में नौकरशाह ज़िम्मेदार होते हैं।
- सर्वोच्च न्यायालय वह संस्था है, जहाँ नागरिक और सरकार के बीच विवाद अंततः सुलझाए जाते हैं।

क्या आप इस उदाहरण में दूसरी संस्थाओं के बारे में सोच सकते हैं? उनकी भूमिका क्या है?

संस्थाओं के साथ काम करना आसान नहीं है। संस्थाओं के साथ कायदे-कानून जुड़े होते हैं। इनसे नेताओं के हाथ बंध सकते हैं। संस्थाओं के कामकाज में कुछ बैठकें, कुछ समितियाँ और कुछ रूटीन काम होता है। कुछ सामान्य रूटीन होता है। इनके कारण अक्सर काम में देरी और परेशानियाँ होती हैं। इसलिए संस्थाओं के साथ कामकाज में परेशानी महसूस की जा सकती है। ऐसे में कोई सोच सकता है कि एक ही व्यक्ति सारे फ़ैसले ले तो ज़्यादा बेहतर होगा। कायदे-कानून और बैठकों की क्या ज़रूरत है? पर यह सोच लोकतंत्र की बुनियादी भावना के अनुकूल नहीं है। संस्थाओं के कामकाज के तरीकों से जो कुछ परेशानियाँ होती हैं या थोड़ा वक्त लगता है, वह भी कई मायने में उपयोगी होता है। किसी भी फ़ैसले के पहले अनेक लोगों से राय-विचार करने का अवसर मिल जाता है। संस्थाओं के कारण एक अच्छा फ़ैसला झटपट करना आसान नहीं होता लेकिन संस्थाएँ बुरा फ़ैसला भी जल्दी ले पाना मुश्किल बना देती हैं। इसी कारण लोकतांत्रिक सरकारें संस्थाओं पर ज़ोर देती है।

5.2 संसद

कार्यालय ज्ञापन के उदाहरण में क्या आपको संसद की भूमिका याद है? शायद नहीं। चूंकि यह फ़ैसला संसद ने नहीं किया था, लिहाजा आपको लग सकता है कि इस फ़ैसले में संसद की कोई भूमिका नहीं थी। लेकिन पहले हम कुछ घटनाओं पर नज़र डालकर देखते हैं कि क्या उनमें संसद का कहीं कोई ज़िक्र था। हम उन्हें निम्नलिखित वाक्यों को पूरा करके याद करने की कोशिश करते हैं:

- मंडल आयोग की रिपोर्ट पर ... चर्चा हुई थी।
- भारत के राष्ट्रपति ने इसका ... ज़िक्र किया था।
- प्रधानमंत्री ने ...

© NCERT not to be republished

यह फ़ैसला सीधे संसद में नहीं किया गया था। लेकिन इस रिपोर्ट पर संसद में हुई चर्चा से सरकार की राय प्रभावित हुई थी। इसकी वजह से सरकार पर मंडल आयोग की सिफ़ारिश पर कार्रवाई करने के लिए दबाव पड़ा था। अगर संसद इस फ़ैसले के पक्ष में नहीं होती तो सरकार यह कदम नहीं उठा सकती थी। क्या आप अंदाज़ा लगा सकते हैं कि क्यों सरकार यह कदम नहीं उठा सकती थी? आपने पहले की कक्षा में संसद के बारे में जो पढ़ा है उसे याद करके यह कल्पना करने की कोशिश कीजिए कि अगर संसद ने कैबिनेट के फ़ैसले को मंजूरी न दी होती तो क्या होता?

हमें संसद की आवश्यकता क्यों है?

हर लोकतंत्र में निर्वाचित जन प्रतिनिधियों की सभा, जनता की ओर से सर्वोच्च राजनैतिक अधिकार का प्रयोग करती है। भारत में निर्वाचित प्रतिनिधियों की राष्ट्रीय सभा को संसद कहा जाता है। राज्य स्तर पर इसे विधानसभा कहते हैं। अलग-अलग देशों में इनके नाम अलग-अलग हो सकते हैं पर हर लोकतंत्र में निर्वाचित प्रतिनिधियों की सभा होती है। यह जनता की ओर से कई तरह से राजनैतिक अधिकार का प्रयोग करती है:

1. किसी भी देश में कानून बनाने का सबसे बड़ा अधिकार संसद को होता है। कानून बनाने या विधि निर्माण का यह काम इतना महत्त्वपूर्ण होता है कि इन सभाओं को विधायिका कहते हैं। दुनिया भर की संसदें नए कानून बना सकती हैं, मौजूदा कानूनों में संशोधन कर सकती हैं या मौजूदा कानून को खत्म कर उसकी जगह नये कानून बना सकती हैं।
2. दुनिया भर में संसद सरकार चलाने वालों को नियंत्रित करने के लिए कुछ अधिकारों का प्रयोग करती हैं। भारत जैसे देश में उसे सीधा और पूर्ण नियंत्रण हासिल है। संसद के पूर्ण समर्थन की स्थिति में ही सरकार चलाने वाले फ़ैसले कर सकते हैं।
3. सरकार के हर पैसे पर संसद का नियंत्रण होता है। अधिकांश देशों में संसद की मंजूरी के बाद ही सार्वजनिक पैसे को खर्च किया जा सकता है।
4. सार्वजनिक मसलों और किसी देश की राष्ट्रीय नीति पर चर्चा और बहस के लिए संसद ही सर्वोच्च संघ है। संसद किसी भी मामले में सूचना माँग सकती है।

संसद के दो सदन

चूँकि आधुनिक लोकतंत्रों में संसद बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, लिहाजा अधिकांश बड़े देशों ने संसद की भूमिका और अधिकारों को दो हिस्सों में बाँट दिया है। इन्हें चेंबर या सदन कहते हैं। पहले सदन के सदस्य आम तौर से सीधे जनता द्वारा चुने जाते हैं और जनता की ओर से असली अधिकारों का प्रयोग करते हैं। दूसरे सदन के सदस्य अमूमन परोक्ष रूप से चुने जाते हैं और कुछ विशेष काम करते हैं। दूसरे सदन का सामान्य काम विभिन्न राज्य, क्षेत्र और संघीय इकाइयों के हितों की निगरानी करना होता है।

हमारे देश में संसद के दो सदन हैं। दोनों सदनों में एक को राज्यसभा (काउंसिल ऑफ स्टेट्स) और दूसरे को लोकसभा (हाउस ऑफ पी'पल) के नाम से जाना जाता है। भारत का राष्ट्रपति संसद का हिस्सा होता है हालांकि वह दोनों में से किसी भी सदन का सदस्य नहीं होता। इसीलिए संसद के फ़ैसले राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद ही लागू होते हैं।

जब हमें मालूम है कि जिस पार्टी की सरकार है उसके विचार ही प्रभावी होंगे तो संसद में इतनी बहस और चर्चा करने का क्या मतलब है?

© NCERT not to be republished
2018-19

आपने पिछली कक्षाओं में भारतीय संसद के बारे में पढ़ा है। अध्याय 4 से आपको पता चल गया है कि लोकसभा का चुनाव कैसे होता है। अब संसद के दोनों सदनों के गठन में प्रमुख अंतर को याद करते हैं। इन मामलों में लोकसभा और राज्यसभा के बारे में अलग–अलग जवाब दीजिए:

- कुल सदस्यों की संख्या कितनी होती है ?...
- सदस्यों को कौन चुनता है ?...
- उनका कार्यकाल कितना होता है ?...
- क्या सदन को हमेशा के लिए भंग किया जा सकता है या वह स्थायी है ?...

लोकसभा बनाम राज्य सभा

दोनों सदनों में से अधिक प्रभावशाली कौन है ? राज्यसभा को कभी–कभी 'अपर हाउस' और लोकसभा को 'लोअर हाउस' कहा जाता है। इसका यह मतलब नहीं है कि राज्यसभा लोकसभा से ज़्यादा प्रभावशाली होती है। यह महज बोलचाल की पुरानी शैली है और हमारे संविधान में यह भाषा इस्तेमाल नहीं की गई है।

हमारे संविधान में राज्यों के संबंध में राज्यसभा को कुछ विशेष अधिकार दिए गए हैं। लेकिन अधिकतर मसलों पर सर्वोच्च अधिकार लोकसभा के पास ही है। आइए देखें, कैसे:

1. किसी भी सामान्य कानून को पारित करने के लिए दोनों सदनों की ज़रूरत होती है। लेकिन अगर दोनों सदनों के बीच कोई मतभेद हो तो अंतिम फ़ैसला दोनों के संयुक्त अधिवेशन में किया जाता है। इसमें दोनों सदनों के सदस्य एक साथ बैठते हैं। सदस्यों की संख्या अधिक होने के कारण इस तरह की बैठक में लोकसभा के विचार को प्राथमिकता मिलने की संभावना रहती है।
2. लोकसभा पैसे के मामलों में अधिक अधिकारों का प्रयोग करती है। लोकसभा में सरकार का बजट या पैसे से संबंधित कोई कानून पारित हो जाए तो राज्यसभा उसे खारिज नहीं कर सकती। राज्यसभा उसे पारित करने में केवल 14 दिनों की देरी कर सकती है या उसमें संशोधन के सुझाव दे सकती है। यह लोकसभा का अधिकार है कि वह उन सुझावों को माने या न माने।
3. सबसे बड़ी बात तो यह है कि लोकसभा मंत्रिपरिषद् को नियंत्रित करती है। सिर्फ़ वही व्यक्ति प्रधानमंत्री बन सकता है जिसे लोकसभा में बहुमत हासिल हो। अगर आधे से अधिक लोकसभा सदस्य यह कह दें कि उन्हें मंत्रिपरिषद् पर 'विश्वास नहीं' है तो प्रधानमंत्री समेत सभी मंत्रियों को पद छोड़ना होगा। राज्यसभा को यह अधिकार हासिल नहीं है।

खुद करें, खुद सीखें

संसद सत्र के दौरान दूरदर्शन पर लोकसभा और राज्यसभा की कार्यवाहियों पर रोज़ाना एक विशेष कार्यक्रम आता है। कार्यवाहियों को देखकर या अखबारों में उसके बारे में पढ़कर निम्नलिखित चीज़ों की सूची बनाएँ।

- **संसद के दोनों सदनों के अधिकार**
- **अध्यक्ष की भूमिका**
- **विपक्ष की भूमिका**

not to be republished © NCERT

लोकसभा में एक दिन ...

चौदहवीं लोकसभा के कार्यकाल में 7 दिसंबर 2004 एक सामान्य दिन था। आइए इस बात पर गौर करें कि सदन में इस दिन क्या हुआ। इस दिन की कार्रवाई के आधार पर संसद की भूमिका और अधिकारों की पहचान करें। आप अपनी कक्षा में इस दिन की कार्रवाई का अभिनय कर सकते हैं।

11.00 विभिन्न मंत्रियों ने सदस्यों द्वारा पूछे गए करीब 250 प्रश्नों के लिखित जवाब दिए। इन प्रश्नों में शामिल थेः

- कश्मीर के आतंकवादी समूहों से बातचीत के बारे में सरकार की नीति क्या है?
- पुलिस और आम लोगों द्वारा अनुसूचित जनजातियों के खिलाफ़ किए गए अत्याचारों का आँकड़ा बताएँ।
- बड़ी कंपनियों द्वारा दवाएँ अत्यधिक महँगी किए जाने के बारे में सरकार क्या कर रही है?

12.00 ढेर सारे सरकारी दस्तावेज़ चर्चा के लिए पेश किए गए। इन दस्तावेज़ों में शामिल थेः

- भारत-तिब्बत सीमा पुलिस बल में नियुक्ति के नियम
- इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, खड़गपुर की वार्षिक रिपोर्ट
- राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड, विशाखापत्तनम की रिपोर्ट और लेखा-जोखा

12.02 पूर्वोत्तर क्षेत्र के विकास मंत्री ने पूर्वोत्तर परिषद् को पुनर्जीवित करने के बारे में बयान दिया।

- रेल राज्य मंत्री ने एक वक्तव्य देकर बताया कि स्वीकृत रेल बजट के अतिरिक्त रेलवे को और अनुदान की ज़रूरत है।
- मानव संसाधन विकास मंत्री ने अल्पसंख्यक शैक्षिक संस्थान विधेयक, 2004 के लिए राष्ट्रीय आयोग की घोषणा की। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि इसके लिए सरकार को अध्यादेश क्यों लाना पड़ा।

12.14 कई सदस्यों ने कुछ मुद्दों को उठाया, जिनमें शामिल थेः

- तहलका मामले में कुछ नेताओं के खिलाफ़ मामले दर्ज करने में केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई) का प्रतिशोधात्मक रवैया।
- संविधान में एक आधिकारिक भाषा के रूप में राजस्थानी को शामिल करने की ज़रूरत।
- आंध्र प्रदेश के किसानों और कृषि मज़दूरों की बीमा नीतियों के नवीनीकरण की आवश्यकता।

2.26 सरकार द्वारा प्रस्तावित दो विधेयकों पर विचार करके उन्हें पारित किया गया। ये विधेयक थेः

- प्रतिभूति कानून (संशोधन) विधेयक
- प्रतिभूति ब्याज और ऋण वसूली कानून का प्रत्यावर्तन (संशोधन) विधेयक

4.00 आखिर में सरकार की विदेश नीति और इराक की स्थिति के संदर्भ में स्वतंत्र विदेश नीति ज़ारी रखने की ज़रूरत पर लंबी चर्चा हुई।

7.17 चर्चा समाप्त हुई। सदन अगले दिन तक के लिए स्थगित हुआ।

© NCERT
not to be republished

5.3 राजनैतिक कार्यपालिका

क्या आपको उस सरकारी आदेश की कहानी याद है जिससे हमने इस अध्याय की शुरुआत की थी? हमने पाया कि जिस व्यक्ति ने इस दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर किए थे उसने यह फ़ैसला नहीं किया था। वह केवल एक नीतिगत फ़ैसले को लागू कर रहा था जिसे किसी और ने किया था। हमने यह फ़ैसला करने में प्रधानमंत्री की भूमिका देखी थी। लेकिन, हम यह भी जानते हैं कि अगर उन्हें लोकसभा का समर्थन नहीं होता तो वे यह फ़ैसला नहीं कर सकते थे। इस अर्थ में वे सिर्फ़ संसद की मर्ज़ी को लागू कर रहे थे।

इसी तरह किसी भी सरकार के विभिन्न स्तरों पर हमें ऐसे अधिकारी मिलते हैं जो रोज़मर्रा के फ़ैसले करते हैं लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि वे जनता के द्वारा दिए गए सबसे बड़े अधिकारों का इस रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं। इन सभी अधिकारियों को सामूहिक रूप से कार्यपालिका के रूप में जाना जाता है। सरकार की नीतियों को 'कार्यरूप' देने के कारण इन्हें कार्यपालिका कहा जाता है। इस तरह जब हम 'सरकार' के बारे में बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य आम तौर पर कार्यपालिका से ही होता है।

राजनैतिक और स्थायी कार्यपालिका

किसी लोकतांत्रिक देश में कार्यपालिका के दो हिस्से होते हैं। जनता द्वारा खास अवधि तक के लिए निर्वाचित लोगों को राजनैतिक कार्यपालिका कहते हैं। ये राजनैतिक व्यक्ति होते हैं जो बड़े फ़ैसले करते हैं। दूसरी ओर जिन्हें लंबे समय के लिए नियुक्त किया जाता है उन्हें स्थायी कार्यपालिका या प्रशासनिक सेवक कहते हैं। लोक सेवाओं में काम करने वाले लोगों को सिविल सर्वेंट या नौकरशाह कहते हैं। वे सत्ताधारी पार्टी के बदलने के बावजूद अपने पदों पर बने रहते हैं। ये अधिकारी राजनैतिक कार्यपालिका के तहत काम करते हैं और रोज़मर्रा के प्रशासन में उनकी सहायता करते हैं। क्या आप कार्यालय ज्ञापन के मामले में राजनैतिक और गैर-राजनैतिक कार्यपालिका की भूमिका बता सकते हैं?

आप पूछ सकते हैं कि राजनैतिक कार्यपालक को गैर-राजनैतिक कार्यपालक से ज़्यादा अधिकार क्यों होते हैं? मंत्री किसी नौकरशाह से ज़्यादा प्रभावशाली क्यों होता है? नौकरशाह अमूमन अधिक शिक्षित होता है और उसे विषय की अधिक महारथ और जानकारी होती है। वित्त मंत्रालय में काम करने वाले सलाहकारों को अर्थशास्त्र की जानकारी वित्त मंत्री से ज़्यादा हो सकती है। कभी-कभी मंत्रियों को अपने मंत्रालय के अधीनस्थ मामलों की तकनीकी जानकारी बहुत कम हो सकती है। रक्षा, उद्योग, स्वास्थ्य, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, खान आदि मंत्रालयों में ऐसा होना आम बात है। फिर इन मामलों में अंतिम निर्णय करने का अधिकार मंत्रियों को क्यों हो?

इसकी वजह बहुत सीधी है। किसी भी लोकतंत्र में लोगों की इच्छा सर्वोपरि होती है। मंत्री लोगों द्वारा चुना गया होता है और इस तरह उसे जनता की ओर से उनकी इच्छाओं को लागू करने का अधिकार होता है। वह अपने फ़ैसले के नतीजे के लिए लोगों के प्रति ज़िम्मेदार होता है। इसी वजह से मंत्री ही सारे फ़ैसले करता है। मंत्री ही उस ढाँचे और उद्देश्यों को तय करता है जिसमें नीतिगत फ़ैसले किए जाते हैं। किसी मंत्री से अपने मंत्रालय के मामलों का विशेषज्ञ होने की कतई उम्मीद नहीं की जाती। सभी तकनीकी मामलों पर मंत्री विशेषज्ञों की सलाह लेता है लेकिन विशेषज्ञ अकसर अलग राय रखते हैं या फिर वे एक से अधिक विकल्प मंत्री के सामने पेश करते हैं। मंत्री अपने उद्देश्यों के मुताबिक ही निर्णय लेता है।

दरअसल, ऐसा हर बड़े संगठन में होता है। जो पूरे मामले को भली-भाँति समझते हैं, वे ही सबसे महत्त्वपूर्ण फ़ैसले करते हैं, विशेषज्ञ नहीं करते। विशेषज्ञ रास्ता बता सकते हैं लेकिन व्यापक नज़रिया रखने वाला व्यक्ति ही मंज़िल के बारे में फ़ैसला करता है। लोकतंत्र में निर्वाचित मंत्री इसी व्यापक नज़रिए वाले व्यक्ति की भूमिका निभाते हैं।

प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद्

इस देश में प्रधानमंत्री सबसे महत्त्वपूर्ण राजनैतिक संस्था है। फिर भी प्रधानमंत्री के लिए कोई प्रत्यक्ष चुनाव नहीं होता। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री को नियुक्त करते हैं। लेकिन राष्ट्रपति अपनी मर्जी से किसी को प्रधानमंत्री नियुक्त नहीं कर सकते। राष्ट्रपति लोकसभा में बहुमत वाली पार्टी या पार्टियों के गठबंधन के नेता को ही प्रधानमंत्री नियुक्त करता है। अगर किसी एक पार्टी या गठबंधन को बहुमत हासिल नहीं होता तो राष्ट्रपति उसी व्यक्ति को प्रधानमंत्री के रूप में नियुक्त करता है जिसे सदन में बहुमत हासिल होने की संभावना होती है। प्रधानमंत्री का कार्यकाल तय नहीं होता। वह तब तक अपने पद पर रह सकता है जब तक वह पार्टी या गठबंधन का नेता है।

प्रधानमंत्री को नियुक्त करने के बाद राष्ट्रपति प्रधानमंत्री की सलाह पर दूसरे मंत्रियों को नियुक्त करते है। मंत्री अमूमन उसी पार्टी या गठबंधन के होते हैं जिसे लोकसभा में बहुमत हासिल हो। प्रधानमंत्री मंत्रियों के चयन के लिए स्वतंत्र होता है, बशर्ते वे संसद के सदस्य हों। कभी-कभी ऐसे व्यक्ति को भी मंत्री बनाया जा सकता है जो संसद का सदस्य नहीं हो। लेकिन उस व्यक्ति का, मंत्री बनने के छह महीने के भीतर संसद के दोनों सदनों में से किसी एक का सदस्य चुना जाना ज़रूरी है।

शंकर, डोन्ट स्पेयर मी

© चिल्ड्रंस बुक ट्रस्ट

मंत्रिपरिषद् उस निकाय का सरकारी नाम है जिसमें सारे मंत्री होते हैं। इसमें अमूमन विभिन्न स्तरों के 60 से 80 मंत्री होते हैं।

- **कैबिनेट मंत्री** अमूमन सत्ताधारी पार्टी या गठबंधन की पार्टियों के वरिष्ठ नेता होते हैं ये प्रमुख मंत्रालयों के प्रभारी होते हैं। कैबिनेट मंत्री मंत्रिपरिषद् के नाम पर फ़ैसले करने के लिए बैठक करते हैं। इस तरह कैबिनेट मंत्रिपरिषद् का शीर्ष समूह होता है। इसमें करीब 20 मंत्री होते हैं।
- **स्वतंत्र प्रभार वाले राज्य मंत्री** अमूमन छोटे मंत्रालयों के प्रभारी होते हैं। वे विशेष रूप से आमंत्रित किए जाने पर ही कैबिनेट की बैठकों में भाग लेते हैं।
- **राज्य मंत्री** अपने विभाग के कैबिनेट मंत्रियों से जुड़े होते हैं और उनकी सहायता करते हैं।

चूँकि सारे मंत्रियों के लिए नियमित रूप से मिलकर हर बात पर चर्चा करना व्यावहारिक

कार्टून बूझें

मंत्री बनने की होड़ नयी नहीं है। यह कार्टून 1962 के बाद नेहरू मंत्रिमंडल में शामिल होने के लिए उम्मीदवारों की बेचैनी दर्शाता है। राजनेता मंत्री बनने के लिए इतने बेचैन क्यों रहते हैं? आप क्या सोचते हैं?

© NCERT not to be republished

कार्टून बूझें

इस कार्टून में अपनी लोकप्रियता के उफान वाले 1970 के दशक के शुरुआती दिनों में इंदिरा गांधी को कैबिनेट की बैठक करते दिखाया गया है। क्या आपको लगता है कि उनके बाद बने किसी प्रधानमंत्री को इसी आकार या रूप में दिखाते हुए कार्टून बनाया जा सकता है?

नहीं है लिहाजा फ़ैसले कैबिनेट बैठकों में ही किए जाते हैं। इसी वजह से अधिकांश देशों में संसदीय लोकतंत्र को सरकार का कैबिनेट रूप कहा जाता है। कैबिनेट टीम के रूप में काम करती है। मंत्रियों की राय और विचार अलग हो सकते हैं लेकिन सबको कैबिनेट के फ़ैसले की जिम्मेदारी लेनी होती है। भले ही कोई फ़ैसला किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग का हो लेकिन कोई भी मंत्री सरकार के फ़ैसले की खुलेआम आलोचना नहीं कर सकता। हर मंत्रालय में सचिव होते हैं, जो नौकरशाह होते हैं। ये सचिव फ़ैसला करने के लिए मंत्री को ज़रूरी सूचना मुहैया कराते हैं। टीम के रूप में कैबिनेट की मदद कैबिनेट सचिवालय करता है। उसमें कई वरिष्ठ नौकरशाह शामिल होते हैं जो विभिन्न मंत्रालयों के बीच समन्वय स्थापित करने की कोशिश करते हैं।

खुद करें, खुद सीखें

- केंद्र और अपनी राज्य सरकार के पाँच कैबिनेट मंत्रियों और उनके मंत्रालयों के नाम लिखें।
- अपने शहर के नगर निगम/पालिका प्रमुख या अपने जिले के जिला परिषद् के अध्यक्ष से मिलें और उनसे पूछें कि वे अपने शहर या जिले का प्रशासन किस तरह चलाते हैं।

प्रधानमंत्री के अधिकार

संविधान में प्रधानमंत्री या मंत्रियों के अधिकारों या एक-दूसरे से उनके संबंध के बारे में बहुत कुछ नहीं कहा गया है। लेकिन सरकार के प्रमुख के नाते प्रधानमंत्री के व्यापक अधिकार होते हैं। वह कैबिनेट की बैठकों की अध्यक्षता करता है। वह विभिन्न विभागों के कार्य का समन्वय

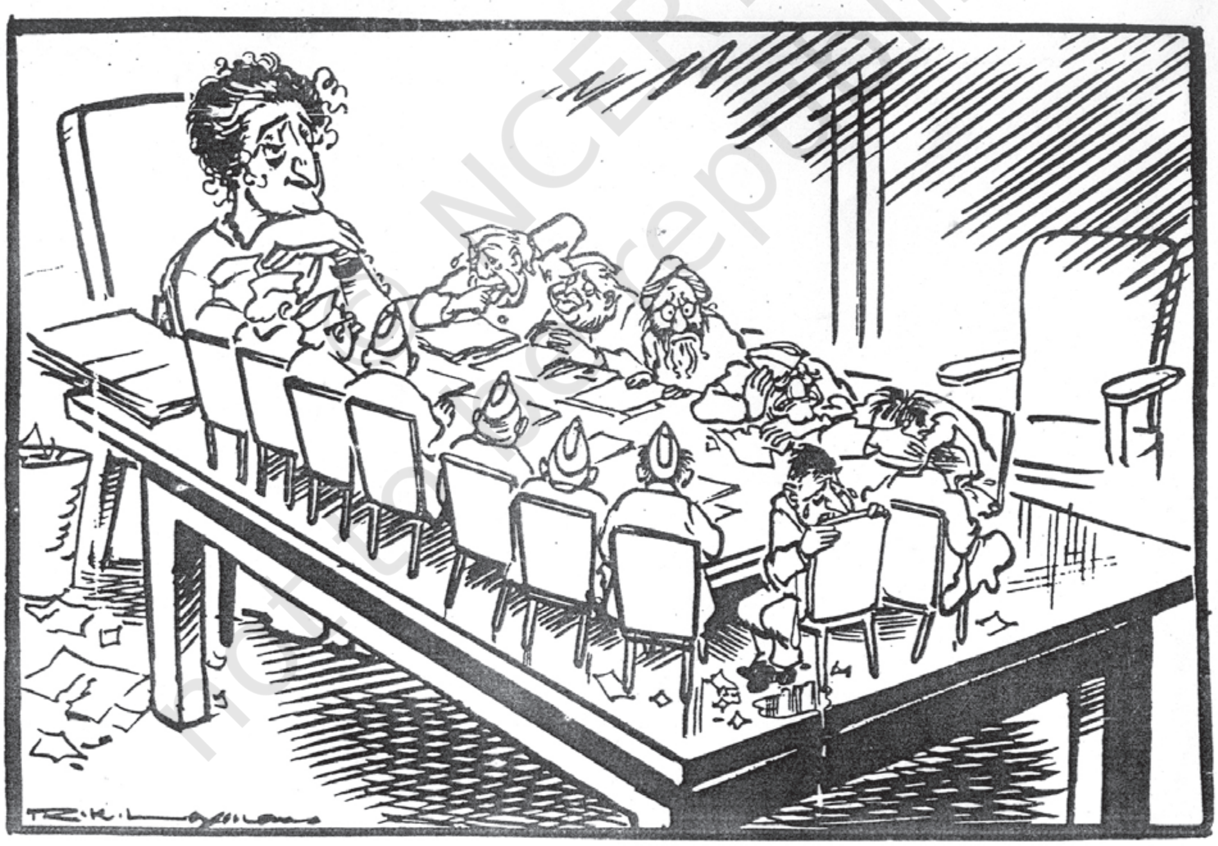

© आर.के. लक्ष्मण, द टाइम्स ऑफ इंडिया

करता है। विभागों के विवाद के मामले में उसका निर्णय अंतिम माना जाता है। वह विभिन्न विभागों की सामान्य निगरानी करता है। सारे मंत्री उसी के नेतृत्व में काम करते हैं। प्रधानमंत्री मंत्रियों को काम का वितरण और पुनर्वितरण करता है। उसे किसी मंत्री को बर्खास्त करने का भी अधिकार होता है। जब प्रधानमंत्री अपना पद छोड़ता है तो पूरा मंत्रिमंडल इस्तीफ़ा दे देता है।

इस तरह अगर भारत में कैबिनेट सबसे अधिक प्रभावशाली संस्था है तो कैबिनेट के भीतर सबसे प्रभावशाली व्यक्ति प्रधानमंत्री होता है। दुनिया के सभी संसदीय लोकतंत्रों में प्रधानमंत्री के अधिकार हाल के दशकों में इतने बढ़ गए हैं कि संसदीय लोकतंत्र को कभी-कभी सरकार का प्रधानमंत्रीय रूप कहा जाने लगा है। राजनीति में राजनैतिक दलों/पार्टियों की भूमिका बढ़ने के साथ ही प्रधानमंत्री पार्टी के जरिए कैबिनेट और संसद को नियंत्रित करने लगा है। मीडिया राजनीति और चुनाव को पार्टियों के वरिष्ठ नेताओं के बीच प्रतिस्पर्धा के रूप में पेश करके इस रुझान में अपना योगदान करती है। भारत में भी हमने प्रधानमंत्री के पास ही सारे अधिकार सीमित करने की प्रवृत्ति देखी है। भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने ढेर सारे अधिकारों का इस्तेमाल किया क्योंकि उनका जनता पर बहुत अधिक प्रभाव था। इंदिरा गांधी भी कैबिनेट के अपने सहयोगियों की तुलना में बहुत ज़्यादा प्रभावशाली थीं। ज़ाहिर है कि किसी प्रधानमंत्री का अधिकार उस पद पर बैठे व्यक्ति के व्यक्तित्व पर भी निर्भर करता है।

लेकिन हाल के वर्षों में भारत में गठबंधन की राजनीति के उभार से प्रधानमंत्री के अधिकार कुछ हद तक सीमित हुए हैं। गठबंधन सरकार का प्रधानमंत्री अपनी मर्ज़ी से फ़ैसले नहीं कर सकता। उसे अपनी पार्टी के भीतर विभिन्न समूहों और गुटों के साथ गठबंधन के साझीदारों की राय भी माननी होती है। इसके अलावा उसे गठबंधन के साझीदारों और दूसरी पार्टियों के विचारों और स्थितियों को भी देखना होता है, आखिर उन्हीं के समर्थन के आधार पर सरकार टिकी होती है।

प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति के लिए हमेशा पुल्लिंग का इस्तेमाल क्यों होता है?

राष्ट्रपति

एक ओर जहाँ प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है, वहीं राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष होता है। हमारी राजनैतिक व्यवस्था में राष्ट्राध्यक्ष केवल नाम के अधिकारों का प्रयोग करता है। भारत का राष्ट्रपति ब्रिटेन की महारानी की तरह होता हैं, जिसका काम आलंकारिक अधिक होता है। राष्ट्रपति देश की सभी राजनैतिक संस्थाओं के काम की निगरानी करता है ताकि वे राज्य के उद्देश्यों को हासिल करने के लिए मिल-जुलकर काम करें।

राष्ट्रपति का चयन जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जाता। संसद सदस्य और राज्य की विधानसभाओं के सदस्य उसे चुनते हैं। राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी को चुनाव जीतने के लिए बहुमत हासिल करना होता है। इससे यह तय हो जाता है कि राष्ट्रपति पूरे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है। लेकिन राष्ट्रपति उस तरह से प्रत्यक्ष जनादेश का दावा नहीं कर सकता जिस तरह से प्रधानमंत्री। इससे यह तय हो जाता है कि राष्ट्रपति कहने मात्र के लिए कार्यपालक की भूमिका निभाता है।

इस सवाल से तो मेरा दिमाग ही चकरा गया। जब कोई महिला राष्ट्रपति बनेगी तो क्या उसे राष्ट्रपति कहना ठीक होगा? क्या हमारी भाषा मर्दों ने बनाई है?

राष्ट्रपति के अधिकारों के मामले में भी यही बात लागू होती है। अगर आप संविधान को सरसरी तौर पर पढ़ें तो आप सोचेंगे कि ऐसा कुछ नहीं है जो राष्ट्रपति न कर सके। सारी सरकारी गतिविधियाँ राष्ट्रपति के नाम पर ही होती हैं। सारे कानून और सरकार के प्रमुख नीतिगत फ़ैसले उसी के नाम से जारी होते हैं। सभी प्रमुख नियुक्तियाँ राष्ट्रपति के नाम पर ही होती हैं। वह भारत के मुख्य न्यायाधीश, सर्वोच्च

© NCERT not to be republished

2018-19

लोकतंत्र के लिए कैसा प्रधानमंत्री होता है? ऐसा जो केवल अपनी मर्ज़ी से काम करता है या ऐसा जो दूसरी पार्टियों और व्यक्तियों से भी सलाह लेता है?

पत्र सूचना कार्यालय

राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी 26 मई 2014 को राष्ट्रपति भवन में श्री नरेन्द्र मोदी को प्रधान मंत्री पद की शपथ दिलाते हुए।

न्यायालय और राज्य के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों, राज्यपालों, चुनाव आयुक्तों और दूसरे देशों में राजदूतों आदि को नियुक्त करता है। सभी अंतर्राष्ट्रीय संधियाँ और समझौते उसी के नाम से होते हैं। भारत के रक्षा बलों का सुप्रीम कमांडर राष्ट्रपति ही होता है।

लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि राष्ट्रपति इन अधिकारों का इस्तेमाल मंत्रिपरिषद् की सलाह पर ही करता है। राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् को अपनी सलाह पर पुनर्विचार करने के लिए कह सकता है। लेकिन अगर वही सलाह दोबारा मिलती है तो वह उसे मानने के लिए बाध्य होता हैं। इसी प्रकार संसद द्वारा पारित कोई विधेयक राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद ही कानून बनता है। अगर राष्ट्रपति चाहे तो उसे कुछ समय के लिए रोक सकता है। वह विधेयक पर पुनर्विचार के लिए उसे संसद में वापस भेज सकता है। लेकिन अगर संसद दोबारा विधेयक पारित करती है तो उसे उस पर हस्ताक्षर करने ही पड़ेंगे।

तो आप सोच रहे होंगे कि राष्ट्रपति करता क्या है? क्या वह अपने विवेक से भी कुछ कर सकता है? एक महत्त्वपूर्ण चीज़ है जो उसे स्वविवेक से करनी चाहिए: प्रधानमंत्री की नियुक्ति। जब कोई पार्टी या गठबंधन चुनाव में बहुमत हासिल कर लेता है तो राष्ट्रपति के पास कोई विकल्प नहीं होता। उसे लोकसभा में बहुमत वाली पार्टी या गठबंधन के नेता को प्रधानमंत्री नियुक्त करना होता है। जब किसी पार्टी या गठबंधन को लोकसभा में बहुमत हासिल नहीं होता तो राष्ट्रपति अपने विवेक से काम लेता है। वह ऐसे नेता को नियुक्त करता है जो उसकी राय में लोकसभा में बहुमत जुटा सकता है। ऐसे मामले में राष्ट्रपति नवनियुक्त प्रधानमंत्री से एक तय समय के भीतर लोकसभा में बहुमत साबित करने के लिए कहता है।

© NCERT not to be republished

राष्ट्रपति प्रणाली

दुनिया में हर जगह राष्ट्रपति भारत की तरह औपचारिक शासनाध्यक्ष नहीं होता। दुनिया के अनेक देशों में राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष भी होता है और सरकार का मुखिया भी। अमेरिकी राष्ट्रपति इस तरह के राष्ट्रपति का जाना-माना उदाहरण है । उसका चुनाव लोग प्रत्यक्ष वोट से करते हैं। वही अपने मंत्रियों का चुनाव और नियुक्ति करता है। कानून बनाने का काम अभी भी विधायिका (अमेरिका में उसे कांग्रेस कहा जाता है) करती है पर राष्ट्रपति किसी भी कानून को वीटो के अधिकार से रोक सकता है। सबसे बड़ी बात यह है कि राष्ट्रपति बनने के लिए उसे कांग्रेस के बहुमत के समर्थन की ज़रूरत नहीं होती और न ही वह उसके प्रति उत्तरदायी है। उसका चार साल का तय कार्यकाल है और अपनी पार्टी का कांग्रेस में बहुमत न होने पर भी वह आराम से अपना कार्यकाल पूरा करता है। अमेरिकी मॉडल को लातिनी अमेरिका के अनेक देशों और सोवियत संघ का हिस्सा रहे कई देशों में अपनाया गया है। चूँकि सरकार के इस स्वरूप में राष्ट्रपति की भूमिका केंद्रीय होती है इसलिए इसे राष्ट्रपति प्रणाली कहा जाता है। ब्रिटेन के मॉडल को मानने वाले भारत जैसे देशों में संसद ही सर्वोच्च होती है। इसलिए, हमारी प्रणाली को शासन की संसदीय प्रणाली कहा जाता है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इलियम्मा, अन्नाकुट्टी और मेरीमॉल राष्ट्रपति के विषय वाले हिस्से को पढ़ती हैं। वे तीनों एक-एक सवाल का जवाब जानना चाहती हैं। क्या आप उन्हें उनके सवालों के जवाब दे सकते हैं?

इलियम्मा: अगर राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री किसी नीति पर असहमत हों तो क्या होगा? क्या प्रधानमंत्री का विचार हमेशा प्रभावी होगा?

अन्नाकुट्टी: मुझे यह बेतुका लगता है कि सशस्त्र बलों का सुप्रीम कमांडर राष्ट्रपति हो। वह तो एक भारी बंदूक भी नहीं उठा सकता। उसे कमांडर बनाने में क्या तुक है?

मेरीमॉल: मेरा सवाल यह है कि अगर असली अधिकार प्रधानमंत्री के पास ही हैं तो राष्ट्रपति की ज़रूरत ही क्या है?

5.4 न्यायपालिका

इस बार भी हम सरकारी आदेश की उसी कहानी पर लौटते हैं, जिससे हमने शुरुआत की थी। इस बार हम कहानी को याद नहीं करेंगे, बस यह कल्पना करेंगे कि यह कहानी कितनी अलग हो सकती थी। याद कीजिए कि इस कहानी का उस समय संतोषजनक अंत हो गया जब सर्वोच्च न्यायालय ने फ़ैसला सुनाया। इसे हर किसी ने स्वीकार कर लिया। कल्पना कीजिए कि निम्नलिखित परिस्थितियों में क्या होता:

- देश में सर्वोच्च न्यायालय जैसा कुछ नहीं होता।
- सर्वोच्च न्यायालय तो होता पर उसके पास सरकार की कार्रवाइयों को आँकने का अधिकार नहीं होता।
- उसे अधिकार होता मगर सर्वोच्च न्यायालय से कोई निष्पक्ष न्याय की उम्मीद नहीं रखता।
- भले ही वह निष्पक्ष फ़ैसला सुना देता लेकिन सरकार के आदेश के खिलाफ़ अपील करने वाले उसके फ़ैसले को नहीं मानते।

खुद करें, खुद सीखें

उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के किसी बड़े फ़ैसले से जुड़ी खबरों पर गौर करें। मूल फ़ैसला क्या था? क्या अदालत ने उसमें बदलाव कर दिया? इसका कारण क्या दिया गया?

इसी वजह से लोकतंत्रों के लिए स्वतंत्र और प्रभावशाली न्यायपालिका को ज़रूरी माना जाता है। देश के विभिन्न स्तरों पर मौजूद अदालतों को सामूहिक रूप से न्यायपालिका कहा जाता

© NCERT not to be republished

संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायाधीशों को उनके राजनैतिक विचार और दलीय जुड़ाव के आधार पर नियुक्त करना एक आम बात है। यह काल्पनिक विज्ञापन वहाँ सन् 2005 में एक कार्टून के रूप में छपा। उस समय राष्ट्रपति बुश अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय में मनोनयन के लिए विभिन्न उम्मीदवारों के नाम पर विचार कर रहे थे। यह कार्टून न्यायालय की स्वतंत्रता के बारे में क्या कहता है? हमारे देश में इस तरह के कार्टून क्यों नहीं छपते? क्या यह हमारी न्यायपालिका की स्वतंत्रता को दर्शाता है?

कार्टून बूझें

© सी.एम.ई. कोहेन, नेशनल, केगल कार्टून्स इंक

इस काल्पनिक विज्ञापन में लिखा है : आवश्यकता है सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश की। कोई पूर्व अनुभव ज़रूरी नहीं। कुछ टाइपिंग आना आवश्यक है। वह बिना हिचकिचाए ऐसी बातें कह सकेः ''मैं अभी तक जितने लोगों से मिला हूँ उनमें राष्ट्रपति (जार्ज बुश) सबसे अधिक प्रतिभाशाली हैं।'' कोई भी बाहरी व्यक्ति आवेदन न करे।

है। भारतीय न्यायपालिका में पूरे देश के लिए सर्वोच्च न्यायालय, राज्यों में उच्च न्यायालय, ज़िला न्यायालय और स्थानीय स्तर के न्यायालय होते हैं। भारत में न्यायपालिका एकीकृत है। इसका मतलब यह कि सर्वोच्च न्यायालय देश में न्यायिक प्रशासन को नियंत्रित करता है। देश की सभी अदालतों को उसका फ़ैसला मानना होता है। वह इनमें से किसी भी विवाद की सुनवाई कर सकता है:

- देश के नागरिकों के बीच;
- नागरिकों और सरकार के बीच;
- दो या उससे अधिक राज्य सरकारों के बीच; और
- केंद्र और राज्य सरकार के बीच।

यह फ़ौजदारी और दीवानी मामले में अपील के लिए सर्वोच्च संस्था है। यह उच्च न्यायालयों के फ़ैसलों के खिलाफ़ सुनवाई कर सकता है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता का मतलब है कि वह विधायिका या कार्यपालिका के नियंत्रण में नहीं है। न्यायाधीश सरकार के निर्देश या सत्ताधारी पार्टी की मर्ज़ी के मुताबिक काम नहीं करते। इसी वजह से सभी आधुनिक लोकतंत्रों में अदालतें, विधायिका और कार्यपालिका के अधीन नहीं होतीं। भारत ने इस लक्ष्य को हासिल कर लिया है। राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को प्रधानमंत्री की सलाह पर और सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के मशविरे से नियुक्त करता है। व्यावहारिक तौर पर अब इस व्यवस्था में सर्वोच्च न्यायालय के वरिष्ठ न्यायाधीश, सर्वोच्च

© NCERT not to be republished

न्यायालय और उच्च न्यायालयों के नए न्यायाधीशों को चुनते हैं। इसमें राजनैतिक कार्यपालिका की दखल की गुंजाइश बेहद कम है। सर्वोच्च न्यायालय के सबसे वरिष्ठ न्यायाधीश को ही अमूमन मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया जाता है। एक बार किसी व्यक्ति को सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त करने के बाद उसे उसके पद से हटाना लगभग असंभव हो जाता है। उसे हटाना भारत के राष्ट्रपति को हटाने जितना ही मुश्किल है। किसी भी न्यायाधीश को संसद के दोनों सदनों में अलग-अलग दो-तिहाई बहुमत से अविश्वास प्रस्ताव पारित करके ही हटाया जा सकता है। भारतीय लोकतंत्र में ऐसा कभी नहीं हुआ।

भारत की न्यायपालिका दुनिया की सबसे अधिक प्रभावशाली न्यायपालिकाओं में से एक है। सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों को देश के संविधान की व्याख्या का अधिकार है। अगर उन्हें लगता है कि विधायिका का कोई कानून या कार्यपालिका की कोई कार्रवाई संविधान के खिलाफ़ है तो वे केंद्र और राज्य स्तर पर ऐसे कानून या कार्रवाई को अमान्य घोषित कर सकते हैं। इस तरह जब उनके सामने किसी कानून या कार्यपालिका की कार्रवाई को चुनौती मिलती है तो वे उसकी संवैधानिक वैधता तय करते हैं। इसे न्यायिक समीक्षा के रूप में जाना जाता है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी फ़ैसला दिया है कि संसद, संविधान के मूलभूत सिद्धांतों को बदल नहीं सकती।

भारतीय न्यायपालिका के अधिकार और स्वतंत्रता उसे मौलिक अधिकारों के रक्षक के रूप में काम करने की क्षमता प्रदान करते हैं। हम नागरिकों के अधिकार वाले अध्याय में देखेंगे कि नागरिकों को संविधान से मिले अपने अधिकारों के उल्लंघन के मामले में इंसाफ़ पाने के लिए अदालतों में जाने का अधिकार है। हाल के वर्षों में अदालतों ने सार्वजनिक हित और मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए विभिन्न फ़ैसले और निर्देश दिए हैं। सरकार की कार्रवाइयों से जनहित को ठेस पहुँचने की स्थिति में कोई भी अदालत जा सकता है। इसे जनहित याचिका कहते हैं। अदालतें सरकार को निर्णय करने की शक्ति के दुरुपयोग से रोकने के लिए हस्तक्षेप करती हैं। वे सरकारी अधिकारियों को भ्रष्ट आचरण से रोकती हैं। इसी वजह से लोगों के बीच न्यायपालिका को काफ़ी विश्वास हासिल है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

निम्नलिखित संदर्भों में एक कारण देकर समझाएँ कि भारतीय न्यायपालिका किस तरह स्वतंत्र हैः

न्यायाधीशों की नियुक्तिः

न्यायाधीशों को पद से हटानाः

न्यायपालिका के अधिकारः

भारत के मुख्य न्यायमूर्ति श्री जस्टिस जे.एस. खेहर 25 जुलाई 2017 को नई दिल्ली में संसद के केंद्रीय सभागार में श्री राम नाथ कोविन्द को भारत के राष्ट्रपति पद की शपथ दिलाते हुए।

© NCERT not to be republished

गठबंधन सरकार: विधायिका में किसी एक पार्टी को बहुमत हासिल न होने की सूरत में दो या उससे अधिक राजनैतिक पार्टियों के गठबंधन से बनी सरकार।

कार्यपालिका: व्यक्तियों का ऐसा निकाय जिसके पास देश के संविधान और कानून के आधार पर प्रमुख नीति बनाने, फ़ैसले करने और उन्हें लागू करने का अधिकार होता है।

सरकार: संस्थाओं का ऐसा समूह जिसके पास देश में व्यवस्थित जन-जीवन सुनिश्चित करने के लिए कानून बनाने, लागू करने और उसकी व्याख्या करने का अधिकार होता है। व्यापक अर्थ में सरकार किसी देश के लोगों और संसाधनों को नियंत्रित और उनकी निगरानी करती है।

न्यायपालिका: एक राजनैतिक संस्था जिसके पास न्याय करने और कानूनी विवादों के निबटारे का अधिकार होता है। देश की सभी अदालतों को एक साथ न्यायपालिका के नाम से पुकारा जाता है।

विधायिका: जनप्रतिनिधियों की सभा जिसके पास देश का कानून बनाने का अधिकार होता है। कानून बनाने के अलावा विधायिका को कर बढ़ाने, बजट बनाने और दूसरे वित्त विधेयकों को बनाने का विशेष अधिकार होता है।

कार्यालय ज्ञापन: सक्षम अधिकारी द्वारा जारी पत्र जिसमें सरकार के फ़ैसले या नीति के बारे में बताया जाता है।

राजनैतिक संस्था: देश की सरकार और राजनैतिक जीवन के आचार को नियमित करने वाली प्रक्रियाओं का समूह।

आरक्षण: भेदभाव के शिकार, वंचित और पिछड़े लोगों और समुदायों के लिए सरकारी नौकरियों तथा शैक्षिक संस्थाओं में पद एवं सीटें 'आरक्षित' करने की नीति।

राज्य: निश्चित क्षेत्र में फैली राजनैतिक इकाई, जिसके पास संगठित सरकार हो और घरेलू तथा विदेश नीतियों को बनाने का अधिकार हो। सरकारें बदल सकती हैं पर राज्य बना रहता है। बोलचाल की भाषा में देश, राष्ट्र और राज्य को समानार्थी के रूप में प्रयोग किया जाता है। 'राज्य' शब्द का एक अन्य प्रयोग किसी देश के अंदर की प्रशासनिक इकाईयों या प्रांतों के लिए भी होता है। इस अर्थ में राजस्थान, झारखंड, त्रिपुरा आदि भी राज्य कहे जाते हैं।

प्रश्नावली

1. अगर आपको भारत का राष्ट्रपति चुना जाए तो आप निम्नलिखित में से कौन-सा फ़ैसला खुद कर सकते हैं?

   क. अपनी पसंद के व्यक्ति को प्रधानमंत्री चुन सकते हैं।
   ख. लोकसभा में बहुमत वाले प्रधानमंत्री को उसके पद से हटा सकते हैं।
   ग. दोनों सदनों द्वारा पारित विधेयक पर पुनर्विचार के लिए कह सकते हैं।
   घ. मंत्रिपरिषद् में अपनी पसंद के नेताओं का चयन कर सकते हैं।

2. निम्नलिखित में कौन राजनैतिक कार्यपालिका का हिस्सा होता है?

   क. जिलाधीश
   ख. गृह मंत्रालय का सचिव
   ग. गृह मंत्री
   घ. पुलिस महानिदेशक

© NCERT not to be republished

3. न्यायपालिका के बारे में निम्नलिखित में से कौन–सा बयान गलत है?

क. संसद द्वारा पारित प्रत्येक कानून को सर्वोच्च न्यायालय की मंज़ूरी की ज़रूरत होती है।
ख. अगर कोई कानून संविधान की भावना के खिलाफ़ है तो न्यायापालिका उसे अमान्य घोषित कर सकती है।
ग. न्यायपालिका कार्यपालिका से स्वतंत्र होती है।
घ. अगर किसी नागरिक के अधिकारों का हनन होता है तो वह अदालत में जा सकता है।

4. निम्नलिखित राजनैतिक संस्थाओं में से कौन–सी संस्था देश के मौजूदा कानून में संशोधन कर सकती है?

क. सर्वोच्च न्यायालय
ख. राष्ट्रपति
ग. प्रधानमंत्री
घ. संसद

5. उस मंत्रालय की पहचान करें जिसने निम्नलिखित समाचार ज़ारी किया होगा:

क. देश से जूट का निर्यात बढ़ाने के लिए एक नई नीति बनाई जा रही है।	1. रक्षा मंत्रालय
ख. ग्रामीण इलाकों में टेलीफोन सेवाएँ सुलभ करायी जाएँगी।	2. कृषि, खाद्यान्न और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
ग. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत बिकने वाले चावल और गेहूँ की कीमतें कम की जाएँगी।	3. स्वास्थ्य मंत्रालय
घ. पल्स पोलियो अभियान शुरू किया जाएगा।	4. वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय
ङ ऊँची पहाड़ियों पर तैनात सैनिकों के भत्ते बढ़ाए जाएँगे।	5. संचार और सूचना-प्रौद्योगिकी मंत्रालय

प्रश्नावली

6. देश की विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका में से उस राजनैतिक संस्था का नाम बताइए जो निम्नलिखित मामलों में अधिकारों का इस्तेमाल करती है।

क. सड़क, सिंचाई जैसे बुनियादी ढाँचों के विकास और नागरिकों की विभिन्न कल्याणकारी गतिविधियों पर कितना पैसा खर्च किया जाएगा।
ख. स्टॉक एक्सचेंज को नियमित करने संबंधी कानून बनाने की कमेटी के सुझाव पर विचार–विमर्श करती है।
ग. दो राज्य सरकारों के बीच कानूनी विवाद पर निर्णय लेती है।
घ. भूकंप पीड़ितों की राहत के प्रयासों के बारे में सूचना माँगती है।

© NCERT not to be republished

प्रश्नावली

7. भारत का प्रधानमंत्री सीधे जनता द्वारा क्यों नहीं चुना जाता? निम्नलिखित चार जवाबों में सबसे सही को चुनकर अपनी पसंद के पक्ष में कारण दीजिए:

   क. संसदीय लोकतंत्र में लोकसभा में बहुमत वाली पार्टी का नेता ही प्रधानमंत्री बन सकता है।
   ख. लोकसभा, प्रधानमंत्री और मंत्रिपरिषद का कार्यकाल पूरा होने से पहले ही उन्हें हटा सकती है।
   ग. चूँकि प्रधानमंत्री को राष्ट्रपति नियुक्त करता है लिहाजा उसे जनता द्वारा चुने जाने की ज़रूरत ही नहीं है।
   घ. प्रधानमंत्री के सीधे चुनाव में बहुत ज़्यादा खर्च आएगा।

8. तीन दोस्त एक ऐसी फिल्म देखने गए जिसमें हीरो एक दिन के लिए मुख्यमंत्री बनता है और राज्य में बहुत से बदलाव लाता है। इमरान ने कहा कि देश को इसी चीज़ की ज़रूरत है। रिज़वान ने कहा कि इस तरह का, बिना संस्थाओं वाला एक व्यक्ति का राज खतरनाक है। शंकर ने कहा कि यह तो एक कल्पना है। कोई भी मंत्री एक दिन में कुछ भी नहीं कर सकता। ऐसी फिल्मों के बारे में आपकी क्या राय है?

9. एक शिक्षिका छात्रों की संसद के आयोजन की तैयारी कर रही थी। उसने दो छात्राओं से अलग-अलग पार्टियों के नेताओं की भूमिका करने को कहा। उसने उन्हें विकल्प भी दिया। यदि वे चाहें तो राज्य सभा में बहुमत प्राप्त दल की नेता हो सकतीं थी और अगर चाहें तो लोकसभा के बहुमत प्राप्त दल की। अगर आपको यह विकल्प दिया गया तो आप क्या चुनेंगे और क्यों?

1`. आरक्षण पर आदेश का उदाहरण पढ़कर तीन विद्यार्थियों की न्यायपालिका की भूमिका पर अलग-अलग प्रतिक्रिया थी। इनमें से कौन-सी प्रतिक्रिया, न्यायपालिका की भूमिका को सही तरह से समझती है?

   क. श्रीनिवास का तर्क है कि चूँकि सर्वोच्च न्यायालय सरकार के साथ सहमत हो गई है लिहाजा वह स्वतंत्र नही है।
   ख. अंजैया का कहना है कि न्यायपालिका स्वतंत्र है क्योंकि वह सरकार के आदेश के खिलाफ़ फ़ैसला सुना सकती थी। सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को उसमें संशोधन का निर्देश दिया।
   ग. विजया का मानना है कि न्यायपालिका न तो स्वतंत्र है न ही किसी के अनुसार चलने वाली है बल्कि वह विरोधी समूहों के बीच मध्यस्थ की भूमिका निभाती है। न्यायालय ने इस आदेश के समर्थकों और विरोधियों के बीच बढ़िया संतुलन बनाया।
   आपकी राय में कौन-सा विचार सबसे सही है?

इस अध्याय में हमने देश की चार विभिन्न संस्थाओं के बारे में चर्चा की। आप कम-से-कम एक हफ्ते के समाचारों को इकट्ठा करके उन्हें चार समूहों में वर्गीकृत कीजिए:

- विधायिका की कार्यशैली
- राजनैतिक कार्यपालिका की कार्यशैली
- नौकरशाही की कार्यशैली
- न्यायपालिका की कार्यशैली

© NCERT not to be republished

अध्याय 6

लोकतांत्रिक अधिकार

भूमिका

पिछले दो अध्यायों में हमने लोकतांत्रिक सरकार के दो बुनियादी तत्वों की चर्चा की है। अध्याय 4 में हमने देखा कि किस तरह लोकतांत्रिक सरकार का निर्धारित अवधि में लोगों द्वारा स्वतंत्र और निष्पक्ष ढंग से चुना जाना ज़रूरी है। अध्याय 5 में हमने जाना कि लोकतंत्र को कुछ ऐसी संस्थाओं के ऊपर निर्भर होना चाहिए जो निर्धारित कायदे-कानून के मुताबिक काम करती हों। ये तत्व ज़रूरी हैं पर लोकतंत्र के लिए इन्हीं दो का होना पर्याप्त नहीं है। चुनाव और संस्थाओं के साथ-साथ तीसरा तत्व है—अधिकारों का उपयोग। इसकी मौजूदगी भी सरकार के लोकतांत्रिक चरित्र के लिए ज़रूरी है। बहुत सही ढंग से चुने हुए और स्थापित संस्थाओं के माध्यम से काम करने वाले शासकों को भी यह ज़रूर जानना चाहिए कि उन्हें कुछ लक्ष्मण रेखाओं का उल्लंघन नहीं करना है। नागरिकों के लोकतांत्रिक अधिकार ही इन लक्ष्मण रेखाओं का निर्माण करते हैं।

इस पुस्तक के आखिरी अध्याय में हम इसी पर चर्चा करेंगे। अधिकारों के बिना जीवन कैसा होगा इसकी कल्पना करने के लिए हम वास्तविक जीवन की कुछ घटनाओं से बात शुरू करते हैं। इससे हम इस चर्चा पर पहुँचेंगे कि अधिकारों का क्या मतलब है और हमें इनकी ज़रूरत क्यों है। पिछले अध्यायों की तरह पहले सामान्य बातों और फ़िर भारत पर केंद्रित चर्चा होगी। हम एक-एक करके भारतीय संविधान में दर्ज़ मौलिक अधिकारों पर चर्चा करेंगे। फ़िर हम इस बात पर गौर करेंगे कि सामान्य आदमी इन अधिकारों का प्रयोग कैसे कर सकता है, इनकी रक्षा कौन करेगा और इनको लागू कौन करेगा? आखिर में हम देखेंगे कि लोकतंत्र का विस्तार करने में इन अधिकारों की कैसी भूमिका हो सकती है और हाल के वर्षों में हमारे मुल्क में इन्होंने क्या भूमिका निभाई है।

© NCERT not to be republished

6.1 अधिकारों के बिना जीवन

इस किताब में हमने अधिकारों की चर्चा बार–बार की है। अगर आप याद करने की कोशिश करें तो हमने इससे पहले के सभी पाँच अध्यायों में अधिकारों की बात की है। क्या आप नीचे दिए गए खाली स्थानों को पुराने अध्यायों के अधिकारों वाली चर्चा के आधार पर भर सकते हैं?

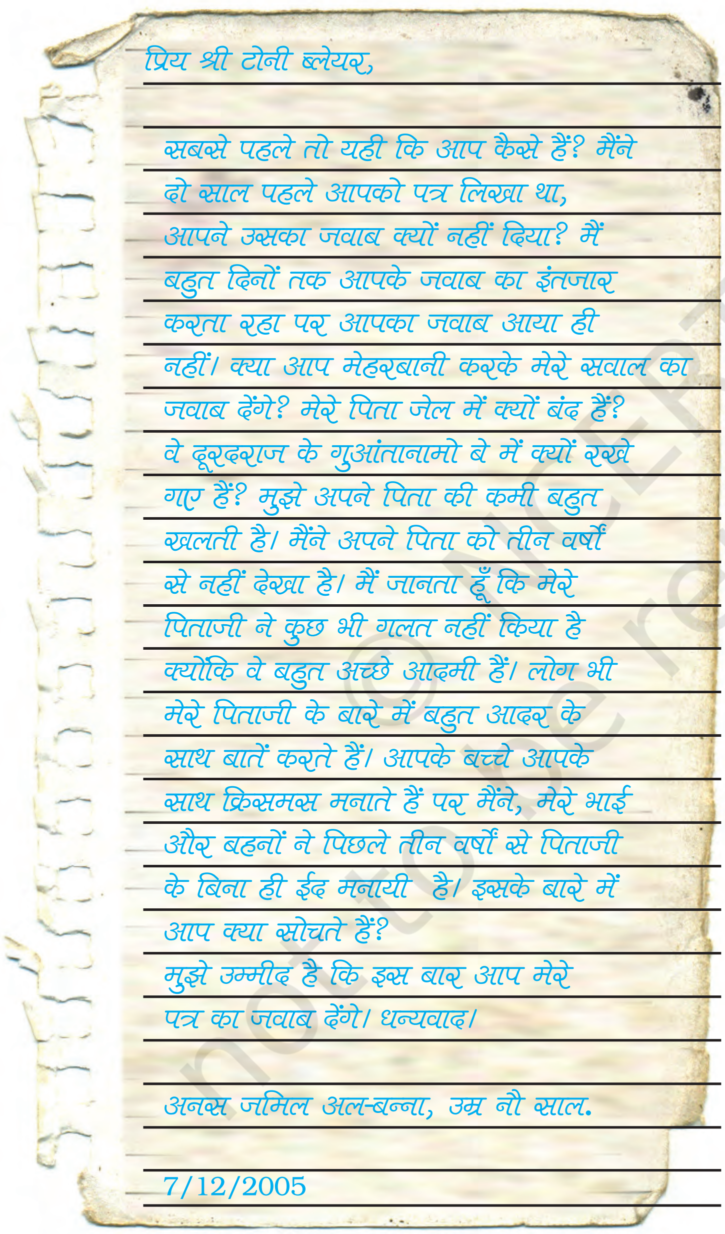

प्रिय श्री टोनी ब्लेयर,

सबसे पहले तो यही कि आप कैसे हैं? मैंने दो साल पहले आपको पत्र लिखा था, आपने उसका जवाब क्यों नहीं दिया? मैं बहुत दिनों तक आपके जवाब का इंतजार करता रहा पर आपका जवाब आया ही नहीं। क्या आप मेहरबानी करके मेरे सवाल का जवाब देंगे? मेरे पिता जेल में क्यों बंद हैं? वे दूरदराज के गुआंतानामो बे में क्यों रखे गए हैं? मुझे अपने पिता की कमी बहुत खलती है। मैंने अपने पिता को तीन वर्षों से नहीं देखा है। मैं जानता हूँ कि मेरे पिताजी ने कुछ भी गलत नहीं किया है क्योंकि वे बहुत अच्छे आदमी हैं। लोग भी मेरे पिताजी के बारे में बहुत आदर के साथ बातें करते हैं। आपके बच्चे आपके साथ क्रिसमस मनाते हैं पर मैंने, मेरे भाई और बहनों ने पिछले तीन वर्षों से पिताजी के बिना ही ईद मनायी है। इसके बारे में आप क्या सोचते हैं?

मुझे उम्मीद है कि इस बार आप मेरे पत्र का जवाब देंगे। धन्यवाद।

अनस जमिल अल-बन्ना, उम्र नौ साल.

7/12/2005

अध्याय 1: पिनोशे के शासनकाल में चिले और ज़ारूज़ेल्स्की के शासन में पोलैंड लोकतांत्रिक न था क्योंकि...

अध्याय 2: लोकतंत्र की परिभाषा में...

अध्याय 3: हमारे संविधान निर्माताओं का मानना था कि मौलिक अधिकार हमारे संविधान की आत्मा जैसे हैं क्योंकि...

अध्याय 4: भारत के प्रत्येक वयस्क व्यक्ति को...और...का अधिकार प्राप्त है।

अध्याय 5: अगर कोई कानून संविधान के खिलाफ़ है तो हर नागरिक को उसके खिलाफ़... जाने का अधिकार है।

आइए तीन उदाहरणों से बात शुरू करें कि अधिकारों के बिना जीवन कैसा होता है।

गुआंतानामो बे का जेल

अमेरिकी फ़ौज ने दुनिया भर के विभिन्न स्थानों से 600 लोगों को चुपचाप पकड़ लिया। इन लोगों को गुआंतानामो बे स्थित एक जेल में डाल दिया। क्यूबा के निकट स्थित इस टापू पर अमेरिकी नौसेना का कब्ज़ा है। अमेरिकी सरकार कहती है कि ये लोग अमेरिका के दुश्मन हैं और न्यूयॉर्क में हुए 11 सितंबर 2001 के हमलों से इनका संबंध है। अनस के पिता जमिल अल–बन्ना उन 600 लोगों में एक हैं जिन्हें केवल संदेह के आधार पर पकड़ कर जेल में डाल दिया गया। अधिकांश मामलों में, गिरफ़्तार लोगों के देश की सरकार को उनकी गिरफ़्तारी और जेल में डालने की सूचना भी नहीं दी गयी। अन्य कैदियों की तरह जमिल के परिवार वालों को भी अखबारों के माध्यम से ही खबर मिली कि उसे भी जेल में रखा गया है। इन कैदियों के परिवारवालों, मीडिया के लोगों और यहाँ तक कि संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधियों को भी उनसे मिलने की इजाज़त नहीं दी जाती। अमेरिकी

© NCERT not to be republished

सेना ने उन्हें गिरफ़्तार किया, उनसे पूछताछ की और उसी ने फ़ैसला किया कि किसे जेल में डालना है किसे नहीं। न तो किसी भी जज के सामने मुकदमा चला और ना ही ये कैदी अपने देश की अदालतों का दरवाजा खटखटा सके।

एक अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संगठन एमनेस्टी इंटरनेशनल ने गुआंतानामो बे के कैदियों की स्थिति के बारे में सूचनाएँ इकट्ठी कीं और बताया कि उनके साथ ज़्यादती की जा रही हैं। उनके साथ अमेरिकी कानूनों के अनुसार भी व्यवहार नहीं किया जा रहा है। अनेक कैदियों ने भूख हड़ताल करके इन स्थितियों के खिलाफ़ विरोध करना चाहा पर उनको ज़बर्दस्ती खिलाया गया या नाक के रास्ते उनके पेट में भोजन पहुँचाया गया। जिन कैदियों को आधिकारिक रूप से निर्दोष करार दिया गया था उनको भी नहीं छोड़ा गया। संयुक्त राष्ट्र द्वारा करायी गयी एक स्वतंत्र जाँच से भी इन बातों की पुष्टि हुई। संयुक्त राष्ट्रसंघ के महासचिव ने कहा कि गुआंतानामो बे जेल को बंद कर देना चाहिए। अमेरिकी सरकार ने इन अपीलों को मानने से इंकार कर दिया।

सऊदी अरब में नागरिक अधिकार

गुआंतानामो बे का उदाहरण एक अपवाद जैसा है क्योंकि इसमें एक देश की सरकार दूसरे देशों के नागरिकों के अधिकारों का उल्लंघन कर रही है। आइए, अब सऊदी अरब का उदाहरण देखें और वहाँ की सरकार अपने नागरिकों को कितनी आज़ादी देती है, इस पर गौर करें। जरा इन तथ्यों पर विचार करें:

- देश में एक वंश का शासन चलता है और राजा या शाह को चुनने या बदलने में लोगों की कोई भूमिका नहीं होती।
- शाह ही विधायिका और कार्यपालिका के लोगों का चुनाव करते हैं। जजों की नियुक्ति भी शाह करते हैं और वे उनके फ़ैसलों को पलट भी सकते हैं।
- लोग कोई राजनैतिक दल या संगठन नहीं बना सकते। मीडिया शाह की मर्जी के खिलाफ़ कोई भी खबर नहीं दे सकती।
- कोई धार्मिक आज़ादी नहीं है। सिर्फ़ मुसलमान ही यहाँ के नागरिक हो सकते हैं। यहाँ रहने वाले दूसरे धर्मों के लोग घर के अंदर ही अपने धर्म के अनुसार पूजा-पाठ कर सकते हैं। उनके सार्वजनिक/धार्मिक अनुष्ठानों पर रोक है।
- औरतों को वैधानिक रूप से मर्दों से कमतर का दर्ज़ा मिला हुआ है और उन पर कई तरह की सार्वजनिक पाबंदियाँ लगी हैं। मर्दों को जल्दी ही स्थानीय निकाय के चुनावों के लिए मताधिकार मिलने वाला है जबकि औरतों को यह अधिकार नहीं मिलेगा।

ये बातें सिर्फ़ सऊदी अरब पर ही लागू नहीं होतीं। दुनिया में ऐसे अनेक देश हैं जहाँ ऐसी स्थितियाँ मौजूद हैं।

कोसोवो में जातीय नरसंहार

आप यह सोच सकते हैं कि ये चीज़ें सिर्फ़ राजशाही में ही चल सकती हैं और चुनी हुई सरकार वाली शासन व्यवस्था में ऐसा नहीं होगा। पर कोसोवो की इस कथा पर गौर कीजिए। कोसोवो पुराने यूगोस्लाविया का एक प्रांत था जो अब टूट कर अलग हो गया है। इस प्रदेश में अल्बानियाई लोगों की संख्या बहुत ज्यादा थी पर पूरे देश के लिहाज से सर्ब लोग बहुसंख्यक थे। उग्र सर्ब राष्ट्रवाद के भक्त मिलोशेविक ने यहाँ के चुनावों में जीत हासिल की। उनकी सरकार ने कोसोवो के अल्बानियाई लोगों के प्रति बहुत ही कठोर व्यवहार किया। उनकी इच्छा थी कि देश पर सर्ब लोगों का ही पूरा नियंत्रण हो। अनेक सर्ब नेताओं का मानना था कि अल्बानियाई लोगों जैसे

अगर आप सर्ब होते तो कोसोवो में मिलोशेविक ने जो कुछ किया, क्या उसका समर्थन करते? सर्ब लोगों का प्रभुत्व कायम करने की उनकी योजना क्या सर्ब लोगों के वास्तविक हित में थी?

© NCERT not to be republished

अल्पसंख्यक या तो देश छोड़कर चले जाएँ या सर्बों का प्रभुत्व स्वीकार कर लें।

कोसोवो के एक शहर में अप्रैल 1999 में एक अल्बानियाई परिवार के साथ कुछ ऐसी घटना हुई:

74 वर्षीया बतीशा होक्सा अपनी रसोई में अपने 77 वर्षीय पति इजेत के साथ बैठी आग ताप रही थी। उन्होंने विस्फ़ोटों की आवाज़ सुनी पर उनको यह एहसास नहीं हुआ कि सर्बिया की फ़ौज शहर में घुस आई है। तभी उनका दरवाजा खोलकर पांच-छह सैनिक दनदनाते हुए अंदर आए और पूछा, ''बच्चे कहाँ हैं?''

बतीशा याद करती है, ''उन्होंने इजेत की छाती में तीन गोलियाँ दाग दीं।'' उसके सामने ही उसके पति की मौत हो गयी और सैनिकों ने उसकी अंगुली से शादी की अंगूठी उतार ली और उसे भाग जाने को कहा, ''मैं अभी दरवाज़े से बाहर भी नहीं निकली थी कि उन्होंने घर में आग लगा दी।'' वह बरसात में बेघर होकर सड़क पर खड़ी थी—उसके पास न मकान था, न पति और न शरीर पर पहने कपड़ों के अलावा कोई और चीज़।

समाचारों में आई यह कथा उन हज़ारों अल्बानियाई लोगों के साथ हुए बर्ताव में से एक की सच्चाई बताती है। और याद रखिए कि यह नरसंहार उस देश की अपनी ही सेना, एक ऐसे नेता के निर्देश पर कर रही थी जो लोकतांत्रिक चुनाव में जीतकर सत्ता में आया था। जातीय पूर्वाग्रहों के चलते हाल के वर्षों में जो सबसे बड़े नरसंहार हुए हैं उनमें यह संभवत: सबसे भयंकर था। आखिरकार कई और देशों ने जब दखल दिया तब जाकर यह क्रम थमा। मिलोशेविक की सत्ता गयी और बाद में अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में उन पर मानवता के खिलाफ़ अपराध का मुकदमा चला।

खुद करें, खुद सीखें

- **कोसोवो की बतीसा की तरफ़ से 1984 के सिख विरोधी दंगों या 2002 के गुजरात दंगों में वैसी ही स्थिति झेलने वाली किसी महिला के नाम एक पत्र लिखिए।**
- **सऊदी अरब की महिलाओं की तरफ से संयुक्त राष्ट्र महासचिव के नाम एक ज्ञापन लिखिए।**

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

अधिकारविहीन जीवन के इन तीनों मामलों से मिलते-जुलते उदाहरण भारत से भी दें। ये उदाहरण निम्नलिखित में से हो सकते हैं:

- पुलिस हिरासत में हिंसा की अखबारी खबरें
- भूख हड़ताल पर जाने वाले कैदियों को ज़बरदस्ती खाना खिलाने की अखबारी रपट
- हमारे देश के किसी हिस्से में जातीय हिंसा
- महिलाओं के साथ गैर-बराबरी वाले व्यवहार की खबरें

फ़िर इन मामलों और भारतीय मामलों के बीच **समानता** और **अंतरों** की सूची बनाएँ। यह ज़रूरी नहीं है कि प्रत्येक मामले के लिए आप ठीक उसी तरह का भारतीय उदाहरण दें।

6.2 लोकतंत्र में अधिकार

हमने पहले जिन उदाहरणों का जिक्र किया है उन सब पर विचार कीजिए। हर उदाहरण में जिसे कष्ट हुआ उसके बारे में सोचिए। गुआंतानामो बे के कैदियों, सऊदी अरब की औरतों और कोसोवो के अल्बानियाई लोगों और भारत में 1984 तथा 2002 के दंगों का शिकार हुए लोगों के बारे में सोचिए। अगर आप इनकी जगह होते तो आपके मन में क्या विचार आते? अगर आपके हाथ में महत्त्वपूर्ण फ़ैसले करने का अधिकार हो तो आप उपर्युक्त घटनाओं को न होने देने के लिए क्या करेंगे?

© NCERT not to be republished

शायद आप एक ऐसी व्यवस्था बनाना चाहेंगे जिसमें लोगों की सुरक्षा, उनके सम्मान का ख्याल और समान अवसर ज़रूर हों। जैसे, आप यह चाह सकते हैं कि बिना उचित कारण और सूचना के किसी को गिरफ़्तार न किया जाए और अगर किसी को गिरफ़्तार किया जाता है तो उसे अपना पक्ष रखने और अपने आपको निर्दोष साबित करने का पर्याप्त अवसर मिले। आप इस बात पर सहमत हो सकते हैं कि ऐसा भरोसा सभी चीज़ों पर लागू नहीं हो सकता। हम हर किसी से जिन चीज़ों की माँग करते हैं या जिन बातों की उम्मीद करते हैं उसमें हमें तार्किक नज़रिया अपनाना चाहिए, क्योंकि उसे ये चीज़ें सबको उपलब्ध करानी हैं। पर आप इस बात पर ज़ोर दे सकते हैं कि आश्वासन सिर्फ़ कागज़ों में ही न रहे, उन पर अमल भी हो और जो लोग ऐसा न करें उनको सज़ा भी मिले। दूसरे शब्दों में कहें तो आप एक ऐसी व्यवस्था बनाना चाहेंगे जहाँ हर किसी को कुछ न्यूनतम बातों की गारंटी होगी—अमीर या गरीब, ताकतवर या कमज़ोर, बहुसंख्यक या अल्पसंख्यक, हर किसी को इन न्यूनतम चीज़ों की गारंटी होगी। अधिकारों की सोच के पीछे यही भावना होती है।

अधिकार क्या है ?

अधिकार किसी व्यक्ति का अपने लोगों, अपने समाज और अपनी सरकार से दावा है। हम सभी खुशी से, बिना डर-भय के और अपमानजनक व्यवहार से बचकर जीना चाहते हैं। इसके लिए हम दूसरों से ऐसे व्यवहार की अपेक्षा करते हैं जिससे हमें कोई नुकसान न हो, कोई कष्ट न हो। इसी प्रकार हमारे व्यवहार से भी किसी को नुकसान नहीं होना चाहिए, कोई कष्ट नहीं होना चाहिए। इसलिए, अधिकार तभी संभव है जब आपका अपने बारे में किया हुआ दावा दूसरे पर भी समान रूप से लागू हो। आप ऐसे अधिकार नहीं रख सकते जो दूसरों को कष्ट दें या नुकसान पहुँचाएँ। आप इस तरह क्रिकेट खेलने के अधिकार का दावा नहीं कर सकते कि पड़ोसी की खिड़की के शीशे टूट जाएँ और आपके अधिकार को कुछ न हो। यूगोस्लाविया के सर्ब लोग पूरे देश पर सिर्फ़ अपना दावा नहीं कर सकते थे। सो, हम जो दावे करते हैं वे तार्किक भी होने चाहिए। वे ऐसे होने चाहिए कि हर किसी को समान मात्रा में उन्हें दे पाना संभव हो। इस प्रकार हमें कोई भी अधिकार इस बाध्यता के साथ मिलता है कि हम दूसरों के अधिकारों का आदर करें।

हम कुछ दावे कर दें सिर्फ़ इतने भर से वह हमारा अधिकार नहीं हो जाता। इसे उस पूरे समाज से भी स्वीकृति मिलनी चाहिए जिसमें हम रहते हैं। हर समाज अपने आचरण को व्यवस्थित करने के लिए कुछ कायदे-कानून बनाता है। ये कायदे-कानून हमें बताते हैं कि क्या सही है, क्या गलत है। समाज जिस चीज़ को सही मानता है, सबके अधिकार लायक मानता है वही हमारे भी अधिकार होते हैं। इसीलिए समय और स्थान के हिसाब से अधिकारों की अवधारणा भी बदलती रहती है। दो सौ साल पहले अगर कोई कहता कि औरतों को भी वोट देने का अधिकार होना चाहिए तो उसे अजीब माना जाता। आज सऊदी अरब में उनको वोट का अधिकार न होना ही अजीब लगता है।

जब समाज में मान्य कायदों को लिखत-पढ़त में ला दिया जाता है तो उनको असली ताकत मिल जाती है। इसके बिना वे प्राकृतिक या नैतिक अधिकार ही रह जाते हैं। गुआंतानामो बे के कैदियों को अपने दमन का विरोध करने का, उसे गलत बताने का सिर्फ़ नैतिक अधिकार है। पर वे इसके भरोसे किसी ऐसे व्यक्ति या संस्था के पास नहीं जा सकते जो इन्हें लागू करा दे। जब कानून कुछ दावों को मान्यता देता है तो

चुनी हुई सरकारों द्वारा अपने नागरिक के अधिकार की रक्षा न करने या इन अधिकारों पर हमला करने के उदाहरण कौन से हैं? सरकार ऐसा क्यों करती है?

2018-19

उनको लागू किया जा सकता है। फ़िर हम उन्हें लागू करने की माँग कर सकते हैं।

अगर अन्य नागरिक या सरकार इन अधिकारों का आदर नहीं करते, इनका उल्लंघन करते हैं तो हम इसे अपने अधिकारों का हनन कहते हैं। ऐसी स्थिति में कोई भी नागरिक अदालत का दरवाजा खटखटा सकता है, अपने अधिकारों की रक्षा की माँग कर सकता है। इसलिए हम अगर किसी दावे को अधिकार कहते हैं तो उसमें ये तीन बुनियादी चीज़ें होनी चाहिए। **अधिकार लोगों के तार्किक दावे हैं, इन्हें समाज से स्वीकृति और अदालतों द्वारा मान्यता मिली होती है।**

लोकतंत्र में अधिकारों की क्या ज़रूरत है?

लोकतंत्र की स्थापना के लिए अधिकारों का होना ज़रूरी है। लोकतंत्र में हर नागरिक को वोट देने और चुनाव लड़कर प्रतिनिधि चुने जाने का अधिकार है। लोकतांत्रिक चुनाव हों इसके लिए लोगों को अपने विचारों को व्यक्त करने की, राजनैतिक पार्टी बनाने और राजनैतिक गतिविधियों की आज़ादी का होना ज़रूरी है।

लोकतंत्र में अधिकारों की एक खास भूमिका भी है। अधिकार बहुसंख्यकों के दमन से अल्पसंख्यकों की रक्षा करते हैं। ये इस बात की व्यवस्था करते हैं कि बहुसंख्यक किसी लोकतांत्रिक व्यवस्था में मनमानी न करें। अधिकार स्थितियों के बिगड़ने पर एक तरह की गारंटी जैसे हैं। अगर कुछ नागरिक दूसरों के अधिकारों को हड़पना चाहें तो स्थिति बिगड़ सकती है। यह स्थिति आम तौर पर तब आती है जब बहुमत के लोग अल्पमत में आ गए लोगों पर प्रभुत्व कायम करना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में सरकार को नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए। लेकिन कई बार चुनी हुई सरकार भी अपने ही नागरिकों के अधिकारों पर हमला करती है या संभव है, वह नागरिक के अधिकारों की रक्षा न करे। इसीलिए कुछ अधिकारों को सरकार से भी ऊँचा दर्ज़ा दिए जाने की ज़रूरत है ताकि सरकार भी उनका उल्लंघन न कर सके। अधिकांश लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं में नागरिकों के अधिकार संविधान में लिखित रूप में दर्ज़ होते हैं।

6.3 भारतीय संविधान में अधिकार

विश्व के अधिकांश दूसरे लोकतंत्रों की तरह भारत में भी ये अधिकार संविधान में दर्ज़ हैं। हमारे जीवन के लिए बुनियादी रूप से ज़रूरी अधिकारों को विशेष दर्ज़ा दिया गया है। इन्हें मौलिक अधिकार कहा जाता है। अध्याय 3 में हमने अपने संविधान की प्रस्तावना पढ़ी है। यह सभी नागरिकों को समानता, स्वतंत्रता और न्याय दिलाने की बात कहता है। मौलिक अधिकार इन वायदों को व्यावहारिक रूप देते हैं। ये अधिकार भारत के संविधान की एक महत्त्वपूर्ण बुनियादी विशेषता है।

आप जानते हैं कि हमारा संविधान छः मौलिक अधिकार प्रदान करता है। क्या आप इन्हें बता सकते हैं? एक आम नागरिक के लिए इन अधिकारों का ठीक-ठीक क्या मतलब होता है? आइए एक-एक करके इन पर नज़र डालें।

समानता का अधिकार

हमारा संविधान कहता है कि सरकार भारत में किसी व्यक्ति को कानून के सामने समानता या कानून से संरक्षण के मामले में समानता के अधिकार से वंचित नहीं कर सकती। इसका

2018-19

मतलब यह हुआ कि किसी व्यक्ति का दर्ज़ा या पद, चाहे जो हो सब पर कानून समान रूप से लागू होता है। इसे कानून का राज भी कहते हैं। कानून का राज किसी भी लोकतंत्र की बुनियाद है। इसका अर्थ हुआ कि कोई भी व्यक्ति कानून के ऊपर नहीं है। किसी राजनेता, सरकारी अधिकारी या सामान्य नागरिक में कोई अंतर नहीं किया जा सकता।

प्रधानमंत्री हों या दूरदराज के गाँव का कोई खेतिहर मज़दूर, सब पर एक ही कानून लागू होता है। कोई भी व्यक्ति वैधानिक रूप से अपने पद या जन्म के आधार पर विशेषाधिकार या खास व्यवहार का दावा नहीं कर सकता। जैसे, कुछ साल पहले देश के एक पूर्व प्रधानमंत्री पर भी धोखाधड़ी का मुकदमा चला था। सारे मामले पर गौर करने के बाद अदालत ने उनको निर्दोष घोषित किया था। लेकिन जब तक मामला चला उन्हें किसी अन्य आम नागरिक की तरह ही अदालत में जाना पड़ा, अपने पक्ष में सबूत देने पड़े, कागज़ात दाखिल करने पड़े।

इस बुनियादी स्थिति को संविधान ने समानता के अधिकार के कुछ निहितार्थों को स्पष्ट करके और साफ़ किया है। सरकार किसी से भी उसके धर्म, जाति, समुदाय लिंग और जन्म स्थल के आधार पर भेदभाव नहीं कर सकती। दुकान, होटल और सिनेमाघरों जैसे सार्वजनिक स्थल में किसी के प्रवेश को रोका नहीं जा सकता। इसी प्रकार सार्वजनिक कुएँ, तालाब, स्नान-घाट, सड़क, खेल के मैदान और सार्वजनिक भवनों के इस्तेमाल से किसी को वंचित नहीं किया जा सकता। ये चीज़ें ऊपर से बहुत सरल लगती हैं पर जाति व्यवस्था वाले हमारे समाज में कुछ समुदायों के लोगों को सार्वजनिक सुविधाओं का इस्तेमाल करने से रोका जाता है।

सरकारी नौकरियों पर भी यही सिद्धांत लागू होता है। सरकार में किसी पद पर नियुक्ति या रोज़गार के मामले में सभी नागरिकों के लिए

अवसर की समानता है। उपरोक्त आधारों पर किसी भी नागरिक को रोजगार के अयोग्य नहीं करार दिया जा सकता या उसके साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता। पिछले अध्याय में आपने पढ़ा कि भारत सरकार ने नौकरियों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की है। अनेक सरकारें विभिन्न योजनाओं के तहत कुछ नौकरियों में स्त्री, गरीब या शारीरिक रूप से विकलांग लोगों को प्राथमिकता देती हैं। आप सोच सकते हैं कि आरक्षण की इस तरह की व्यवस्था समानता के अधिकार के खिलाफ़ है। पर असल में ऐसा नहीं है। समानता का मतलब है हर किसी से उसकी ज़रूरत का खयाल रखते हुए समान व्यवहार करना। समानता का मतलब है हर आदमी को उसकी क्षमता के अनुसार काम करने का समान अवसर उपलब्ध कराना है। कई बार अवसर की समानता सुनिश्चित करने भर के लिए ही कुछ लोगों को विशेष अवसर देना ज़रूरी होता है। आरक्षण यही करता है। इसी बात को साफ़ करने के लिए संविधान स्पष्ट रूप से कहता है

हर आदमी जानता है कि अमीर आदमी मुकदमे के समय अच्छे वकीलों की मदद ले सकता है। फ़िर कानून के समक्ष समानता की बात का क्या महत्त्व रह जाता है?

© NCERT not to be republished

छुआछूत के अनेक रूप

1999 में प्रसिद्ध पत्रकार पी. साईंनाथ ने दलितों या अनुसूचित जाति के लोगों के खिलाफ़ अभी तक बरकरार छुआछूत के व्यवहार पर अंग्रेजी अखबार 'हिंदू' में एक लेखमाला लिखी। वे देश के अनेक स्थानों पर गए और पाया कि अनेक स्थानों पर:

- चाय की दुकानों पर दो तरह के कप रखे जाते हैं–एक दलितों के लिए, दूसरा बाकी लोगों के लिए।
- हजाम दलितों के बाल नहीं काटते, दाढ़ी नहीं बनाते।
- दलित छात्रों को कक्षा में अलग बैठना होता है और अलग रखे घड़े से पानी पीना होता है।
- दलित दूल्हों को बारात में घोड़ी पर नहीं चढ़ने दिया जाता।
- दलितों को सार्वजनिक हैंड पंप से पानी नहीं लेने दिया जाता या उनके पानी भर लेने के बाद हैंड पंप को धो दिया जाता है।

ये सभी काम छुआछूत की परिभाषा के दायरे में आते हैं। क्या आप अपने इलाके से कुछ ऐसे ही उदाहरण सोच सकते हैं।

खुद करें, खुद सीखें

- किसी भी स्कूल के खेल के मैदान या किसी स्टेडियम में जाकर 400 मीटर दौड़ वाली पट्टी को गौर से देखिए। वहाँ बाहरी लेन में दौड़ने वाले खिलाड़ी को अंदर वाली लेन के खिलाड़ी से आगे के स्थान से दौड़ शुरू करने क्यों दिया जाता है? अगर सभी दौड़ने वाले एक ही लाइन पर से दौड़ प्रारंभ करें तो क्या होगा? इन दोनों स्थितियों में से कौन-कौन सी स्थिति दौड़ के मुकाबले को समान बनाती है? नौकरियों में प्रतिद्वंद्विता के मामले में भी इसी चीज़ को लागू कीजिए।
- किसी भी बड़ी सार्वजनिक इमारत को गौर से देखिए। क्या वहाँ विकलांगों के आने-जाने के लिए अलग से विशेष व्यवस्था है? विकलांग लोग उस जगह का उपयोग किसी भी अन्य व्यक्ति की तरह ही कर सकें क्या इसका कोई और विशेष इंतजाम वहाँ है? ज़्यादा खर्च होने पर भी क्या ये विशेष इंतजाम किए जाने चाहिए? क्या ये विशेष इंतज़ाम समानता के सिद्धांत का उल्लंघन करते हैं?

कि इस तरह का आरक्षण समानता के अधिकार का उल्लंघन नहीं है।

किसी तरह का भेदभाव न होने का सिद्धांत सामाजिक जीवन पर भी इसी तरह लागू होता है। संविधान सामाजिक भेदभाव के एक बहुत

© NCERT not to be republished

ही प्रबल रूप—छुआछूत का ज़िक्र करता है और सरकार को निर्देश देता है कि वह इसे समाप्त करे। किसी भी तरह के छुआछूत को कानूनी रूप से गलत करार दिया गया है। यहाँ छुआछूत का मतलब कुछ खास जातियों के लोगों के शरीर को छूने से बचना भर नहीं है। यह उन सारी सामाजिक मान्यताओं और आचरणों को भी गलत करार देता है जिसमें किसी खास जाति में जन्म लेने भर से लोगों को नीची नज़र से देखा जाता है या उनके साथ अलग तरह का व्यवहार किया जाता है। इसीलिए संविधान ने छुआछूत को दंडनीय अपराध घोषित किया है।

स्वतंत्रता का अधिकार

स्वतंत्रता का मतलब बाधाओं का न होना है। व्यावहारिक जीवन में इसका मतलब होता है हमारे मामलों में किसी किस्म का दखल न होना—न सरकार का, न व्यक्तियों का। हम समाज में रहना चाहते हैं लेकिन हम स्वतंत्रता भी चाहते हैं। हम मनचाहे ढंग से काम करना चाहते हैं। कोई हमें यह आदेश न दे कि इसे ऐसे करो, वैसे करो। इसीलिए भारतीय संविधान ने प्रत्येक नागरिक को कई तरह की स्वतंत्रताएँ दी हैं ?

- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता
- शांतिपूर्ण ढंग से जमा होने की स्वतंत्रता
- संगठन और संघ बनाने की स्वतंत्रता
- देश में कहीं भी आने-जाने की स्वतंत्रता
- देश के किसी भी भाग में रहने-बसने की स्वतंत्रता है, और
- कोई भी काम करने, धंधा चुनने या पेशा करने की स्वतंत्रता

याद रखिए कि हर नागरिक को ये स्वतंत्रताएँ प्राप्त हैं। इसका मतलब यह हुआ कि आप अपनी स्वतंत्रता का ऐसा उपयोग नहीं कर सकते जिससे दूसरे की स्वतंत्रता का हनन होता हो। आपकी स्वतंत्रता सार्वजनिक परेशानी या अव्यवस्था पैदा नहीं कर सकती। आप वह सब करने के लिए आज़ाद हैं जिससे दूसरों को परेशानी न हो। स्वतंत्रता का मतलब असीमित मनमानी करने का लाइसेंस पा लेना नहीं है। इसी कारण समाज के व्यापक हितों को देखते हुए सरकार हमारी स्वतंत्रताओं पर कुछ किस्म की पाबंदियाँ लगा सकती है।

अभिव्यक्ति की आज़ादी हमारे लोकतंत्र की एक बुनियादी विशेषता है। अभिव्यक्ति की आज़ादी में बोलने, लिखने और कला के विभिन्न रूपों में स्वयं को व्यक्त करना शामिल है। दूसरों से स्वतंत्र ढंग से विचार-विमर्श और संवाद करके ही हमारे विचारों और व्यक्तित्व का विकास होता है। आपकी राय दूसरों से अलग हो सकती है। संभव है कि कई सौ लोग एक ही तरह से सोचते हों, तब भी आपको अलग राय रखने और व्यक्त करने की आज़ादी है। आप सरकार की किसी नीति से या किसी संगठन की गतिविधियों से असहमति रख सकते हैं। अपने मां-बाप, दोस्तों या रिश्तेदार से बातचीत करते हुए आप सरकार की किसी नीति या किसी संगठन की गतिविधियों की आलोचना

क्या गलत और संकीर्ण विचारों का प्रचार करने वालों को भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए? क्या उन्हें लोगों को भ्रमित करने की अनुमति दी जानी चाहिए?

© NCERT not to be republished

करने को स्वतंत्र हैं। आप अपने विचारों को परचा छापकर या अखबारों–पत्रिकाओं में लेख लिखकर भी व्यक्त कर सकते हैं। आप यह काम चित्र बनाकर, कविता या गीत लिखकर भी कर सकते हैं। पर आप इस स्वतंत्रता का उपयोग करके किसी व्यक्ति या समुदाय के खिलाफ़ हिंसा को नहीं भड़का सकते। आप इस स्वतंत्रता का उपयोग करके लोगों को सरकार के खिलाफ़ बगावत के लिए नहीं उकसा सकते। आप किसी के खिलाफ़ झूठी बातें कहने या उसकी प्रतिष्ठा गिराने वाली बातें प्रचारित करने में इस स्वतंत्रता का इस्तेमाल नहीं कर सकते।

नागरिकों को किसी मुद्दे पर जमा होने, बैठक करने, प्रदर्शन करने, जुलूस निकालने का अधिकार है। वे यह सब किसी समस्या पर चर्चा करने, विचारों का आदान–प्रदान करने, किसी उद्देश्य के लिए जनमत तैयार करने या किसी चुनाव में किसी उम्मीदवार या पार्टी के लिए वोट मांगने के लिए कर सकते हैं। पर ऐसी बैठकें शांतिपूर्ण होनी चाहिए। इससे सार्वजनिक अव्यवस्था या समाज में अशांति नहीं फ़ैलनी चाहिए। इन बैठकों और गतिविधियों में भाग लेने वालों को अपने पास हथियार नहीं रखने चाहिए। नागरिकों को संगठन बनाने की भी स्वतंत्रता है। जैसे किसी कारखाने के मज़दूर अपने हितों की रक्षा के लिए मज़दूर संघ बना सकते हैं। किसी शहर के कुछ लोग भ्रष्टाचार या प्रदूषण के खिलाफ़ अभियान चलाने के लिए संगठन बना सकते हैं।

किसी भी नागरिक को **देश के किसी भी हिस्से में जाने की स्वतंत्रता है।** हम भारत के किसी भी हिस्से में रह और बस सकते हैं। जैसे असम का कोई व्यक्ति हैदराबाद में व्यवसाय करना चाहता है। संभव है कि उसने इस शहर को देखा भी न हो या यहाँ उसका कोई संपर्क न हो। फिर भी भारत का नागरिक होने के कारण उसे ऐसा करने का अधिकार है। इसी अधिकार के चलते लाखों लोग गाँवों से निकल कर शहरों में और देश के गरीब इलाकों से निकल कर समृद्ध इलाकों में आकर काम करते हैं, बस जाते हैं। पेशा चुनने के मामले में भी ऐसी ही स्वतंत्रता प्राप्त है। आपको कोई भी यह आदेश नहीं दे सकता कि आप सिर्फ़ यह काम करें या वह। महिलाओं से यह नहीं कहा जा सकता कि फलां काम उनके लिए नहीं है। पिछड़ी और कमज़ोर जातियों के लोगों से नहीं कहा जा सकता कि वे अपने परंपरागत पेशे में ही रहें।

इरफ़ान खान

संविधान कहता है कि किसी भी व्यक्ति को उसके **जीने के अधिकार और निजी स्वतंत्रता** से वंचित नहीं किया जा सकता— कानून द्वारा स्थापित व्यवस्थाओं को छोड़कर। इसका मतलब यह है कि जब तक अदालत किसी व्यक्ति को मौत की सज़ा नहीं सुनाती, उसे मारा नहीं जा सकता। इसका यह भी मतलब है कि कानूनी आधार होने पर ही सरकार या पुलिस अधिकारी किसी नागरिक को गिरफ़्तार कर सकता है। अगर वे ऐसा करते हैं तब भी उन्हें कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है।

- गिरफ़्तार या हिरासत में लिए गए व्यक्ति को उसकी गिरफ़्तारी और हिरासत में लेने के कारणों की जानकारी देनी होती है।

- गिरफ़्तार या हिरासत में लिए गए व्यक्ति को सबसे निकट के मजिस्ट्रेट के सामने गिरफ़्तारी के 24 घंटों के अंदर प्रस्तुत करना होता है।
- ऐसे व्यक्ति को वकील से विचार-विमर्श करने और अपने बचाव के लिए वकील रखने का अधिकार होता है।

आइए एक बार फिर से गुआंतानामो बे और कोसोवो को याद करें। इन दोनों ही मामलों में शिकार लोगों को सभी स्वतंत्रताओं में सबसे बुनियादी दो चीज़ों—जीवन रक्षा और निजी स्वतंत्रता—से वंचित रखा गया है।

इरफ़ान खान

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

क्या ये उदाहरण स्वतंत्रता के अधिकार के उल्लंघन के हैं? अगर हाँ, तो प्रत्येक में संविधान के कौन-से प्रावधान का उल्लंघन हुआ है?

- भारत सरकार ने सलमान रुश्दी की किताब 'सैटेनिक वर्सेज' को इस आधार पर प्रतिबंधित कर दिया कि इसमें पैगंबर मोहम्मद के प्रति अनादर का भाव दिखाया गया और इससे मुसलमानों की भावनाओं को ठेस पहुँच सकती है।
- हर फ़िल्म को सार्वजनिक प्रदर्शन से पूर्व भारत सरकार के सेंसर बोर्ड से प्रमाण पत्र लेना होता है। पर वही कहानी अगर किताब या पत्रिका में छपे तो उस पर ऐसी पाबंदी नहीं है।
- सरकार इस बात पर विचार कर रही है कि कुछ खास औद्योगिक क्षेत्रों या अर्थव्यवस्था के कुछ क्षेत्रों में काम करने वालों को यूनियन बनाने और हड़ताल पर जाने का अधिकार नहीं होगा।
- नगर प्रशासन ने माध्यमिक परीक्षाओं के मद्देनजर शहर में रात 10 बजे के बाद सार्वजनिक लाउडस्पीकर के प्रयोग पर पाबंदी लगा दी है।

शोषण के खिलाफ़ अधिकार

स्वतंत्रता और बराबरी का अधिकार मिल जाने के बाद स्वाभाविक है कि नागरिक को यह अधिकार भी हो कि कोई उसका शोषण न कर सके। हमारे संविधान निर्माताओं ने इसे भी संविधान में लिखित रूप से दर्ज़ करने का फ़ैसला किया ताकि कमज़ोर वर्गों का शोषण न हो सके।

संविधान ने खास तौर से तीन बुराइयों का जिक्र किया है और इन्हें गैर-कानूनी घोषित किया है।

पहला, संविधान मनुष्य जाति के अवैध व्यापार का निषेध करता है। आम तौर पर ऐसे धंधे का शिकार महिलाएँ होती हैं जिनका अनैतिक कामों के लिए शोषण होता है। दूसरा, हमारा संविधान किसी किस्म के 'बेगार' या जबरन काम लेने का निषेध करता है। बेगार प्रथा में मज़दूरों को अपने मालिक के लिए मुफ़्त या बहुत थोड़े से अनाज वगैरह के लिए जबरन काम करना पड़ता है। जब यही काम मज़दूर को जीवन भर करना पड़ जाता है तो उसे बंधुआ मज़दूरी कहते हैं। तीसरा, संविधान बाल मज़दूरी का भी निषेध

© NCERT not to be republished

करता है। किसी कारखाने–खदान या रेलवे और बंदरगाह जैसे खतरनाक काम में कोई भी 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चे से काम नहीं करा सकता। इसी को आधार बनाकर बाल मज़दूरी रोकने के लिए अनेक कानून बनाए गए हैं। इसमें बीड़ी बनाने, पटाखे बनाने, दियासलाई बनाने, प्रिंटिंग और रंगरोगन जैसे कामों में बाल मज़दूरी रोकने के कानून शामिल हैं।

खुद करें, खुद सीखें

क्या आपको अपने प्रदेश में लागू न्यूनतम मज़दूरी का पता है? अगर नहीं तो क्या आप यह पता कर सकते हैं? अपने मुहल्ले में अलग-अलग काम करने वालों से बात करके यह जानने की कोशिश कीजिए कि क्या उनको न्यूनतम मज़दूरी मिल रही है। उनसे पूछिए कि क्या उनको न्यूनतम मज़दूरी का पता है? उनसे यह भी पूछिए कि उसी काम के लिए क्या मर्द और औरत को समान मज़दूरी मिलती है?

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इन खबरों के आधार पर संपादक के नाम एक लंबा पत्र या शोषण के खिलाफ़ अधिकार के उल्लंघन की बात उजागर करते हुए अदालत के लिए अर्ज़ी लिखिएः

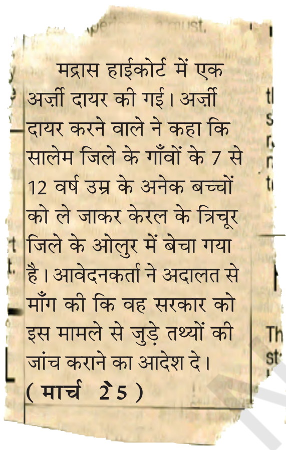

मद्रास हाईकोर्ट में एक अर्ज़ी दायर की गई। अर्ज़ी दायर करने वाले ने कहा कि सालेम जिले के गाँवों के 7 से 12 वर्ष उम्र के अनेक बच्चों को ले जाकर केरल के त्रिचूर जिले के ओलुर में बेचा गया है। आवेदनकर्ता ने अदालत से माँग की कि वह सरकार को इस मामले से जुड़े तथ्यों की जांच कराने का आदेश दे।

(मार्च 2̀5)

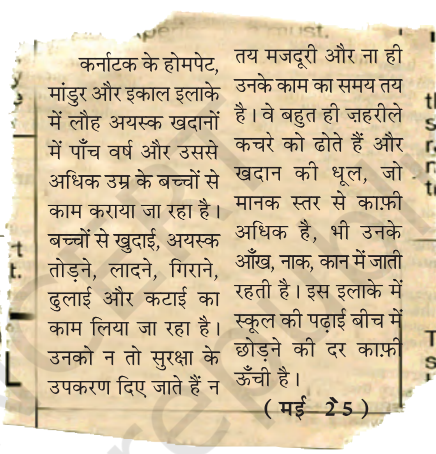

कर्नाटक के होमपेट, मांडुर और इकाल इलाके में लौह अयस्क खदानों में पाँच वर्ष और उससे अधिक उम्र के बच्चों से काम कराया जा रहा है। बच्चों से खुदाई, अयस्क तोड़ने, लादने, गिराने, ढुलाई और कटाई का काम लिया जा रहा है। उनको न तो सुरक्षा के उपकरण दिए जाते हैं न तय मजदूरी और ना ही उनके काम का समय तय है। वे बहुत ही ज़हरीले कचरे को ढोते हैं और खदान की धूल, जो मानक स्तर से काफ़ी अधिक है, भी उनके आँख, नाक, कान में जाती रहती है। इस इलाके में स्कूल की पढ़ाई बीच में छोड़ने की दर काफ़ी ऊँची है।

(मई 2̀5)

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के नवीनतम वार्षिक सर्वेक्षण में पाया गया कि ग्रामीण और शहरी, दोनों क्षेत्रों में लड़कियों से काम कराने का क्रम बढ़ता जा रहा है और अब, ज़्यादा बच्चियों से काम कराया जा रहा है। सर्वेक्षण में यह बात सामने आई कि पहले जहाँ प्रति हजार कामगारों में बच्चियों की संख्या 34 थी वहीं अब 41 हो गयी है। लड़कों की संख्या का अनुपात 31 बना हुआ है।

(अप्रैल 2̀5)

धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

स्वतंत्रता के अधिकार में धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार भी शामिल है और इस मामले में भी हमारे संविधान निर्माता खास तौर से चौकस थे। उन्होंने इस स्वतंत्रता को स्पष्ट रूप से अलग दर्ज़ किया। आप अध्याय 3 में पढ़ चुके हैं कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है। विश्व के अन्य देशों के समान भारत के अधिकांश लोग अलग-अलग धर्म को मानते हैं। कुछ लोग किसी भी धर्म को नहीं मानते। धर्मनिरपेक्षता इस सोच पर आधारित है कि शासन का काम व्यक्तियों के बीच के मामलों को ही देखना है, व्यक्ति और ईश्वर के बीच के मामलों को नहीं। धर्मनिरपेक्ष शासन वह है जहाँ किसी भी धर्म को आधिकारिक धर्म की मान्यता नहीं होती। भारतीय धर्मनिरपेक्षता में सभी धर्मों के प्रति शासन का समभाव रखना शामिल है। धर्म के मामले में शासन को सभी धर्मों से उदासीन और निरपेक्ष होना चाहिए।

हर किसी को **अपना धर्म मानने, उस पर आचरण करने और उसका प्रचार करने का अधिकार है।** हर धार्मिक समूह या पंथ को अपने धार्मिक कामकाज का प्रबंधन करने की आज़ादी है। पर अपने धर्म का प्रचार करने के

© NCERT not to be republished

अधिकार का मतलब किसी को झाँसा देकर, फ़रेब करके, लालच देकर उससे धर्म परिवर्तन कराना नहीं है। निस्संदेह व्यक्ति को अपनी इच्छा से धर्म परिवर्तन करने की आज़ादी है। अपना धर्म मानने और उसके अनुसार आचरण का यह अर्थ भी नहीं है कि व्यक्ति अपने मन के अनुसार जो चाहे सो करे। जैसे, कोई आदमी देवता या कथित अदृश्य शक्तियों को संतुष्ट करने के लिए नर बलि या पशु बलि नहीं दे सकता। औरतों को कमतर मानने या औरतों की आज़ादी का हनन करने वाले धार्मिक रीति-रिवाजों पर आचरण करने की अनुमति नहीं है। जैसे, कोई ज़बर्दस्ती किसी विधवा का मुंडन नहीं करा सकता या उसे सिर्फ़ सफ़ेद कपड़े पहनने के लिए मज़बूर नहीं कर सकता।

धर्मनिरपेक्ष शासन का मतलब किसी एक धर्म का पक्ष लेना या उसे विशेषाधिकार देना भी नहीं है। ना ही ऐसा शासन किसी व्यक्ति को उसकी धार्मिक मान्यताओं के कारण सजा दे सकता है या उसके साथ भेदभाव कर सकता है। इसी प्रकार सरकार किसी धर्म या धार्मिक संस्था को बढ़ावा देने या उसके रख-रखाव के लिए कर देने के लिए किसी व्यक्ति को मज़बूर नहीं कर सकती। सरकारी शैक्षिक संस्थानों में किसी किस्म का धार्मिक निर्देश नहीं होना चाहिए। अगर किसी शैक्षिक संस्थान का संचालन कोई निजी संस्था करती है तो वहाँ के किसी भी व्यक्ति को प्रार्थना में हिस्सा लेने या किसी धार्मिक निर्देश का पालन करने के लिए मज़बूर नहीं किया जा सकता।

सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार

आप हैरान हो सकते हैं कि हमारे संविधान निर्माता अल्पसंख्यकों के अधिकारों की लिखित गारंटी को लेकर इतने सचेत क्यों थे। बहुसंख्यकों के लिए ऐसी कोई गारंटी क्यों नहीं है? इसका सीधा सा कारण यह है कि लोकतंत्र की कार्यपद्धति अपने आप बहुसंख्यकों को ज़्यादा ताकत दे देती है। अल्पसंख्यकों को ही भाषा, संस्कृति और धर्म के विशेष संरक्षण की ज़रूरत होती है। अन्यथा वे बहुसंख्यकों की भाषा, धर्म और संस्कृति के प्रभाव में पिछड़ते चले जाएँगे। इसी के चलते संविधान अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकारों को स्पष्ट करता है:

- नागरिकों में विशिष्ट भाषा या संस्कृति वाले किसी भी समूह को अपनी भाषा और संस्कृति को बचाने का अधिकार है।
- किसी भी सरकारी या सरकारी अनुदान पाने वाले शैक्षिक संस्थान में किसी नागरिक को धर्म या भाषा के आधार पर दाखिला लेने से नहीं रोका जा सकता।
- सभी अल्पसंख्यकों को अपनी पसंद का शैक्षिक संस्थान स्थापित करने और चलाने का अधिकार है।

यहाँ अल्पसंख्यक का अर्थ राष्ट्रीय स्तर पर धार्मिक अल्पसंख्यक भर नहीं है। किसी स्थान पर एक खास भाषा को बोलने वालों का बहुमत होगा। वहाँ अलग भाषा बोलने वाले अल्पसंख्यक होंगे। जैसे आंध्र प्रदेश में तेलुगु बोलने वालों का बहुमत है, पर कर्नाटक में वे अल्पसंख्यक हैं। पंजाब में सिख बहुसंख्यक हैं, पर राजस्थान, हरियाणा और दिल्ली में वे अल्पसंख्यक हैं।

हमें ये अधिकार कैसे मिल सकते हैं?

यद्यपि अधिकार गारंटी की तरह हैं तब भी ये हमारे किसी काम के नहीं हैं, अगर इन गारंटियों

संविधान लोगों का धर्म नहीं तय करता। पर लोगों को अपने धार्मिक कामकाज करने का अधिकार इसे क्यों देना पड़ा?

© NCERT not to be republished

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इन खबरों को पढ़िए और प्रत्येक में जिस अधिकार की चर्चा है, उसकी पहचान कीजिए।

- शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की आपात् बैठक में हरियाणा के सिख धार्मिक स्थलों के प्रबंधन के लिए अलग संगठन बनाने के प्रस्ताव को ठुकरा दिया गया। सरकार को यह चेतावनी दी गई कि सिख समुदाय अपने धार्मिक मामलों में किसी भी किस्म की दखलंदाजी बरदाश्त नहीं करेगा। (जून 2005)
- इलाहाबाद हाईकोर्ट ने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को अल्पसंख्यक दर्जा देने वाले केंद्रीय कानून को रद्द कर दिया और मेडिकल स्नातकोत्तर डिग्री कोर्स में सीटों के आरक्षण को गैर-कानूनी करार दिया। (जनवरी 2005)
- राजस्थान सरकार ने धर्म परिवर्तन विरोधी कानून बनाने का फ़ैसला किया है। ईसाई नेताओं का कहना है कि इस विधेयक से अल्पसंख्यकों में डर और असुरक्षा की भावना बढ़ेगी। (मार्च 2005)

को मानने और लागू करने वाला न हो। संविधान में दिए गए मौलिक अधिकार महत्त्वपूर्ण हैं। इसीलिए इन्हें लागू किया जा सकता है। हमें उपर्युक्त अधिकारों को लागू कराने की माँग करने का अधिकार है, हमारे पास उन्हें लागू कराने के उपाय हैं। इसे **संवैधानिक उपचार का अधिकार** कहा जाता है। यह भी एक मौलिक अधिकार है। यह अधिकार अन्य अधिकारों को प्रभावी बनाता है। संभव है कि कई बार हमारे अधिकारों का उल्लंघन कोई और नागरिक या कोई संस्था या फिर स्वयं सरकार ही कर रही हो। पर जब इनमें से हमारे किसी भी अधिकार का उल्लंघन हो रहा हो तो हम अदालत के ज़रिए उसे रोक सकते हैं, इस समस्या का निदान पा सकते हैं। अगर मौलिक अधिकारों का मामला हो तो हम सीधे सर्वोच्च न्यायालय या किसी राज्य के उच्च न्यायालय में जा सकते हैं। इसी कारण डॉ. अंबेडकर ने संवैधानिक उपचार के अधिकार को हमारे संविधान की 'आत्मा और हृदय' कहा था।

मौलिक अधिकार विधायिका, कार्यपालिका और सरकार द्वारा गठित किसी भी अन्य प्राधिकारी की गतिविधियों तथा फ़ैसलों से ऊपर हैं। मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने वाला कोई कानून नहीं बन सकता, कोई फ़ैसला नहीं लिया जा सकता। विधायिका या कार्यपालिका के किसी भी फ़ैसले या काम से मौलिक अधिकारों का हनन हो या उनमें कमी हो तो वह फ़ैसला या काम ही अवैध हो जाएगा। हम केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा बनाए गए ऐसे कानूनों को, उनकी नीतियों और फ़ैसलों को या राष्ट्रीयकृत बैंक या बिजली बोर्ड जैसी उनके द्वारा गठित संस्थाओं की नीतियों और फ़ैसलों को चुनौती दे सकते हैं। वे भी व्यक्तियों या निजी संस्थाओं के खिलाफ़ मौलिक अधिकार के मामले में दखल दे सकती हैं। सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालयों को मौलिक अधिकार लागू कराने के मामले में निर्देश देने, आदेश या रिट जारी करने का अधिकार है। अदालतें गड़बड़ी का शिकार होने वालों को हर्जाना दिलवा सकती हैं और गड़बड़ी करने वालों को दंडित कर सकती हैं। अध्याय 5 में हमने देखा है कि हमारे देश की न्यायपालिका सरकार और संसद से स्वतंत्र है। हमने यह भी देखा है कि न्यायपालिका बहुत शक्तिशाली है और नागरिकों के अधिकारों के लिए जो कुछ ज़रूरी हो, वह करने में सक्षम है।

मौलिक अधिकारों के हनन के मामले में कोई भी पीड़ित व्यक्ति न्याय पाने के लिए तुरंत अदालत में जा सकता है। पर अब, अगर मामला सामाजिक या सार्वजनिक हित का हो तो ऐसे मामलों में मौलिक अधिकारों के उल्लंघन को

क्या आपको अपने मौलिक अधिकारों के लिए सर्वोच्च न्यायालय जाने से राष्ट्रपति भी रोक सकते हैं?

© NCERT not to be republished

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

क्या आपने ऊपर बने 'न्यूज कोलाज' पर ध्यान दिया। इसमें राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का जिक्र आया है। यह संदर्भ मानवाधिकार के प्रति बढ़ती जागरूकता और मानव गरिमा के संघर्षों के बारे में है। विभिन्न क्षेत्रों में मानवाधिकार उल्लंघनों के गुजरात दंगे जैसे कई मामले हैं। इनके बारे में देश भर से लोगों का ध्यान आकृष्ट किया जा रहा है। इन मामलों को गम्भीरता से नहीं लेने और उनके दोषियों को नहीं पकड़ पाने के लिए मानवाधिकार संगठन तथा संचार माध्यम अक्सर सरकारी ऐजेन्सियों की आलोचना करते हैं।

ऐसे में पीड़ितों की तरफ़ से किसी को दखल देने की आवश्यकता थी और राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने इस मामले में पहल की। यह 1993 में कानून के द्वारा बनाया गया एक स्वतंत्र आयोग है। न्यायपालिका की तरह आयोग भी सरकार से स्वतंत्र होते हैं। आयोग की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं और इसमें आमतौर पर सेवानिवृत्त जज, अधिकारी या प्रमुख नागरिकों को ही नियुक्त किया जाता है। किंतु इस पर अदालती मामलों में फ़ैसले देने का दायित्व या बोझ नहीं होता। सो यह पीड़ितों को उनके मानवाधिकार दिलाने में मदद करने पर ही सारा ध्यान दे सकता है। इनमें संविधान प्रदत्त अधिकार भी शामिल हैं। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के लिए अधिकारों की परिभाषा में संयुक्त राष्ट्र द्वारा कराई गई वे संधियाँ और अंतर्राष्ट्रीय घोषणाएँ भी शामिल हैं जिन पर भारत ने दस्तखत किए हैं।

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग खुद किसी को सज़ा नहीं दे सकता। यह ज़िम्मेवारी अदालतों की है। आयोग का काम मानवाधिकार के उल्लंघन के किसी मामले में स्वतंत्र और विश्वसनीय जाँच करना है। यह उन मामलों की भी जाँच करता है जहाँ ऐसे उल्लंघन में या इन्हें रोकने में सरकारी अधिकारियों पर उपेक्षा बरतने का आरोप हो। यह देश में मानवाधिकारों को बढ़ाने और उनके प्रति चेतना जगाने का काम भी करता है। आयोग अपनी जाँच की रिपोर्ट और अपने सुझाव सरकार को देता है या पीड़ितों की ओर से अदालत में दखल देता है। अपनी जाँच करने के सिलसिले में इसके पास व्यापक अधिकार हैं। किसी भी अदालत की तरह यह चश्मदीद गवाहों को सम्मन भेजकर बुला सकता है, किसी सरकारी अधिकारी से पूछताछ कर सकता है, किसी सरकारी दस्तावेज़ की माँग कर सकता है, किसी जेल में जाकर जाँच कर सकता है या घटनास्थल पर अपनी जाँच टीम भेज सकता है।

भारत का कोई भी नागरिक मानवाधिकारों के उल्लंघन के मामले में इसके पास निम्नलिखित पते पर शिकायत भेज सकता है: **राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग,** जी.पी.ओ. कम्प्लेक्स, आई.एन.ए., नई दिल्ली-110023 आयोग के पास अर्जी भेजने की न तो कोई फ़ीस है, न फ़ार्म और न ही कोई तय तरीका। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की तरह ही 26 राज्यों (10 दिसंबर 2017 की स्थिति) में **राज्य मानव अधिकार आयोग** हैं। अधिक जानकारी के लिए, देखें www.nhrc.nic.in

© NCERT not to be republished

लेकर कोई भी व्यक्ति अदालत में जा सकता है। ऐसे मामलों को 'जनहित याचिका' के माध्यम से उठाया जाता है।

इसमें कोई भी व्यक्ति या समूह सरकार के किसी कानून या काम के खिलाफ़ सार्वजनिक हितों की रक्षा के लिए सर्वोच्च न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय में जा सकता है। ऐसे मामले जज के नाम पोस्टकार्ड पर लिखी अर्जी के माध्यम से भी उठाए जा सकते हैं। अगर न्यायाधीशों को लगे कि सचमुच इस मामले में सार्वजनिक हितों पर चोट पहुँच रही है तो वे मामले को विचार के लिए स्वीकार कर सकते हैं।

खुद करें, खुद सीखें

क्या आपके राज्य में मानवाधिकार आयोग है? इसकी गतिविधियों के बारे में जानकारियाँ इकट्ठी कीजिए।

इस अध्याय में आए मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों या आपको ज्ञात किसी भी ऐसे मामले को लेकर राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को एक आवेदन लिखें।

6.4 अधिकारों का बढ़ता दायरा

हमने इस अध्याय की शुरुआत अधिकारों के महत्त्व पर चर्चा से की थी। पर अध्याय के ज्यादातर हिस्से में हमारा ध्यान संविधान द्वारा दिए गये मौलिक अधिकारों पर ही रहा। आप सोच सकते हैं कि संविधान द्वारा दिए गए मौलिक अधिकार ही नागरिकों को मिलने वाले अधिकार हैं। यह सही नहीं है। मौलिक अधिकार बाकी सारे अधिकारों के स्रोत हैं। हमारा संविधान और हमारे कानून हमें और बहुत सारे अधिकार देते हैं और साल दर साल अधिकारों का दायरा बढ़ता गया है।

समय-समय पर अदालतों ने ऐसे फ़ैसले दिए हैं जिनसे अधिकारों का दायरा बढ़ा है। प्रेस की स्वतंत्रता का अधिकार, सूचना का अधिकार और शिक्षा का अधिकार जैसी चीजें मौलिक अधिकारों का ही विस्तार हैं, उन्हीं से निकली हैं। अब स्कूली शिक्षा हर भारतीय का अधिकार बन चुकी है। 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को मुफ़्त और अनिवार्य शिक्षा दिलाना सरकार की ज़िम्मेदारी है। संसद ने नागरिकों को सूचना का अधिकार देने वाला कानून भी पास कर दिया है। यह अधिकार विचारों और अभिव्यक्ति की आज़ादी के मौलिक अधिकार के तहत ही है। हमें सरकारी दफ़्तरों से सूचना माँगने और पाने का अधिकार है। हाल में ही सर्वोच्च न्यायालय ने जीवन के अधिकार को नया विस्तार देते हुए उसमें भोजन के अधिकार को भी शामिल कर दिया है। साथ ही, अधिकारों का दायरा संविधान द्वारा दिए गए मौलिक अधिकारों तक ही सीमित नहीं है। संविधान अनेक दूसरे अधिकार भी देता है जो मौलिक अधिकार नहीं हैं। जैसे संपत्ति रखने का अधिकार मौलिक अधिकार नहीं है पर संवैधानिक अधिकार है। चुनाव में वोट देने का अधिकार एक महत्वपूर्ण संवैधानिक अधिकार है।

जरा सोचिए: क्या ये अधिकार सिर्फ़ वयस्क लोगों के हैं? बच्चों के लिए कौन-कौन से अधिकार हैं?

कई बार मानवाधिकारों का भी विस्तार होता है। ये असल में सर्वमान्य नैतिक दावे हैं जो कानून द्वारा मान्य हो भी सकते हैं और नहीं भी और इन्हें उस अर्थ में अधिकार नहीं कहा जा सकता जैसा कि हमने पहले परिभाषा के माध्यम से बताया था। दुनिया में लोकतंत्र के फ़ैलाव के साथ सरकारों पर दबाव बढ़ता जा रहा है कि वे इन सर्वमान्य नैतिक दावों को मानें, उन्हें कानूनी रूप दें। कई अंतर्राष्ट्रीय संधियों और प्रतिज्ञा पत्रों ने भी अधिकारों का दायरा बढ़ाने में मदद की है।

© NCERT not to be republished

इस प्रकार हम देखते हैं कि अधिकारों का दायरा बढ़ता जा रहा है और हर समय नए अधिकार सामने आ रहे हैं। ये लोगों के संघर्षों से हासिल हुए हैं। समाज के विकास या नए संविधानों के निर्माण के साथ नए अधिकार सामने आते हैं। संविधान बनाने संबंधी अध्याय में हमने देखा है कि दक्षिण अफ्रीका के संविधान में नागरिकों को कई तरह के नए अधिकार मिले हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं:

- निजता का अधिकार: इसके कारण नागरिकों और उनके घरों की तलाशी नहीं ली जा सकती, उनके फ़ोन टैप नहीं किए जा सकते, उनकी चिट्ठी-पत्री को खोलकर पढ़ा नहीं जा सकता।
- पर्यावरण का अधिकार: ऐसा पर्यावरण पाने का अधिकार जो नागरिकों के स्वास्थ्य या कुशलक्षेम के प्रतिकूल न हो।
- पर्याप्त आवास पाने का अधिकार।
- स्वास्थ्य सेवाओं, पर्याप्त भोजन और पानी तक पहुँच का अधिकार; किसी को भी आपात् चिकित्सा देने से इंकार नहीं किया जा सकता।

अनेक लोगों का मानना है कि काम का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, जीने के लिए ज़रूरी न्यूनतम आवश्यकताओं का अधिकार और निजता के अधिकार को भारत में भी मौलिक अधिकार बना देना चाहिए? आप इसके बारे में क्या सोचते हैं?

आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय प्रतिज्ञा पत्र

इस अंतर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञापत्र में अनेक ऐसे अधिकारों को मान्यता दी गई है जो भारतीय संविधान के मौलिक अधिकारों से सीधे नहीं जुड़े हैं। इसने अभी अंतर्राष्ट्रीय संधि का रूप नहीं लिया है। लेकिन दुनिया भर के मानवाधिकार कार्यकर्त्ता इसे एक मानक मानवाधिकार के रूप में देखते हैं। इनमें शामिल हैं:

- काम करने का अधिकार: हर किसी को काम करने, अपनी जीविका का उपार्जन करने का अवसर।
- काम करने के सुरक्षित और स्वास्थ्यप्रद माहौल का अधिकार तथा मज़दूरों और उनके परिवारों के लिए सम्मानजनक जीवनस्तर लायक उचित मज़दूरी का अधिकार।
- समुचित जीवन स्तर जीने के अधिकार में पर्याप्त भोजन, कपड़ा और मकान का अधिकार शामिल है।
- सामाजिक सुरक्षा और बीमा का अधिकार।
- स्वास्थ्य का अधिकार: बीमारी के समय इलाज, प्रजनन काल में महिलाओं का ख़ास ख्याल और महामारियों से रोकथाम।
- शिक्षा का अधिकार: मुफ्त एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, उच्चतर शिक्षा तक समान पहुँच।

प्रतिज्ञा पत्र: नियमों और सिद्धांतों को कायम रखने का व्यक्ति, समूह या देशों का वायदा। ऐसे बयान या संधि पर दस्तखत करने वाले पर इसके पालन की कानूनी बाध्यता होती है।
दावा: सभी नागरिकों, समाज या सरकार से किसी नागरिक द्वारा कानूनी या नैतिक अधिकारों की माँग।
दलित: ऐसी जाति में जन्मा व्यक्ति जिसे दूसरी जातियों के व्यक्ति छूने लायक नहीं मानते। दलितों के लिए अनुसूचित जाति, कमज़ोर वर्ग जैसे शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है।
जातीय समूह: मानव जाति का ऐसा समूह जिसमें लोग आपस में एक मूल या सम्यक वंश के हों। एक जातीय समूह के लोग सांस्कृतिक आचरणों, धार्मिक विश्वासों और ऐतिहासिक स्मृतियों के ज़रिए जुड़े होते हैं।
सम्मन: अदालत द्वारा ज़ारी एक आदेश जिसमें किसी व्यक्ति को अदालत के सामने पेश होने के लिए कहा गया हो।
अवैध व्यापार: अनैतिक कामों के लिए स्त्री, पुरुष या बच्चों की खरीद-बिक्री।

© NCERT not to be republished

रिट : उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सरकार को जारी किया गया एक औपचारिक लिखित आदेश।

एमनेस्टी इंटरनेशनलः मानवाधिकारों के लिए काम करने वाले कार्यकर्ताओं का एक अंतरराष्ट्रीय संगठन। यह संगठन दुनिया भर में मानवाधिकारों के उल्लंघन पर स्वतंत्र रिपोर्ट जारी करता है।

प्रश्नावली

1. इनमें से कौन-सा मौलिक अधिकारों के उपयोग का उदाहरण नहीं है?
   क. बिहार के मजदूरों का पंजाब के खेतों में काम करने जाना।
   ख. ईसाई मिशनों द्वारा मिशनरी स्कूलों की शृंखला चलाना।
   ग. सरकारी नौकरी में औरत और मर्द को समान वेतन मिलना।
   घ. बच्चों द्वारा मां-बाप की संपत्ति विरासत में पाना।

2. इनमें से कौन-सी स्वतंत्रता भारतीय नागरिकों को नहीं है?
   क. सरकार की आलोचना की स्वतंत्रता
   ख. सशस्त्र विद्रोह में भाग लेने की स्वतंत्रता
   ग. सरकार बदलने के लिए आंदोलन शुरू करने की स्वतंत्रता
   घ. संविधान के केंद्रीय मूल्यों का विरोध करने की स्वतंत्रता

3. भारतीय संविधान इनमें से कौन-सा अधिकार देता है?
   क. काम का अधिकार
   ख. पर्याप्त जीविका का अधिकार
   ग. अपनी संस्कृति की रक्षा का अधिकार
   घ. निजता का अधिकार

4. उस मौलिक अधिकार का नाम बताएँ जिसके तहत निम्नलिखित स्वतंत्रताएँ आती हैं?
   क. अपने धर्म का प्रचार करने की स्वतंत्रता
   ख. जीवन का अधिकार
   ग. छुआछूत की समाप्ति
   घ. बेगार पर प्रतिबंध

5. लोकतंत्र और अधिकारों के बीच संबंधों के बारे में इनमें से कौन-सा बयान ज़्यादा उचित है? अपनी पसंद के पक्ष में कारण बताएँ?
   क. हर लोकतांत्रिक देश अपने नागरिकों को अधिकार देता है।
   ख. अपने नागरिकों को अधिकार देने वाला हर देश लोकतांत्रिक है।
   ग. अधिकार देना अच्छा है, पर यह लोकतंत्र के लिए ज़रूरी नहीं है।

6. स्वतंत्रता के अधिकार पर ये पाबंदियाँ क्या उचित हैं? अपने जवाब के पक्ष में कारण बताएँ।
   क. भारतीय नागरिकों को सुरक्षा कारणों से कुछ सीमावर्ती इलाकों में जाने के लिए अनुमति लेनी पड़ती है।
   ख. स्थानीय लोगों के हितों की रक्षा के लिए कुछ इलाकों में बाहरी लोगों को संपत्ति खरीदने की अनुमति नहीं है।
   ग. शासक दल को अगले चुनाव में नुकसान पहुँचा सकने वाली किताब पर सरकार प्रतिबंध लगाती है।

© NCERT not to be republished

7. मनोज एक सरकारी दफ़्तर में मैनेजर के पद के लिए आवेदन देने गया। वहाँ के किरानी ने उसका आवेदन लेने से मना कर दिया और कहा, 'झाड़ू लगाने वाले का बेटा होकर तुम मैनेजर बनना चाहते हो। तुम्हारी जाति का कोई कभी इस पद पर आया है? नगरपालिका के दफ़्तर जाओ और सफ़ाई कर्मचारी के लिए अर्जी दो।' इस मामले में मनोज के किस मौलिक अधिकार का उल्लंघन हो रहा है? मनोज की तरफ़ से जिला अधिकारी के नाम लिखे एक पत्र में इसका उल्लेख करो।

8. जब मधुरिमा संपत्ति के पंजीकरण वाले दफ़्तर में गई तो रजिस्ट्रार ने कहा, "आप अपना नाम मधुरिमा बनर्जी, बेटी ए.के. बनर्जी नहीं लिख सकतीं। आप शादीशुदा हैं और आपको अपने पति का ही नाम देना होगा। फ़िर आपके पति का उपनाम तो राव है। इसलिए आपका नाम भी बदलकर मधुरिमा राव हो जाना चाहिए।" मधुरिमा इस बात से सहमत नहीं हुई। उसने कहा, "अगर शादी के बाद मेरे पति का नाम नहीं बदला तो मेरा नाम क्यों बदलना चाहिए? अगर वह अपने नाम के साथ पिता का नाम लिखते रह सकते हैं तो मैं क्यों नहीं लिख सकती?" आपकी राय में इस विवाद में किसका पक्ष सही है? और क्यों?

प्रश्नावली

9. मध्य प्रदेश के होशंगाबाद ज़िले के पिपरिया में हज़ारों आदिवासी और जंगल में रहने वाले लोग सतपुड़ा राष्ट्रीय पार्क, बोरी वन्यजीव अभ्यारण्य और पंचमढ़ी वन्यजीव अभ्यारण्य से अपने प्रस्तावित विस्थापन का विरोध करने के लिए जमा हुए। उनका कहना था कि यह विस्थापन उनकी जीविका और उनके विश्वासों पर हमला है। सरकार का दावा है कि इलाके के विकास और वन्य जीवों के संरक्षण के लिए उनका विस्थापन ज़रूरी है। जंगल पर आधारित जीवन जीने वाले की तरफ़ से राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को एक पत्र, इस मसले पर सरकार द्वारा दिया जा सकने वाला संभावित जवाब और इस मामले पर मानवाधिकार आयोग की रिपोर्ट तैयार करो।

1`. इस अध्याय में पढ़े विभिन्न अधिकारों को आपस में जोड़ने वाला एक मकड़जाल बनाएँ। जैसे आने-जाने की स्वतंत्रता का अधिकार तथा पेशा चुनने की स्वतंत्रता का अधिकार आपस में एक-दूसरे से जुड़े हैं। इसका एक कारण है कि आने-जाने की स्वतंत्रता के चलते व्यक्ति अपने गाँव या शहर के अंदर ही नहीं, दूसरे गाँव, दूसरे शहर और दूसरे राज्य तक जाकर काम कर सकता है। इसी प्रकार इस अधिकार को तीर्थाटन से जोड़ा जा सकता है जो किसी व्यक्ति द्वारा अपने धर्म का अनुसरण करने की आज़ादी से जुड़ा है। आप इस मकड़जाल को बनाएँ और तीर के निशानों से बताएँ कि कौन-से अधिकार आपस में जुड़े हैं। हर तीर के साथ संबंध बताने वाला एक उदाहरण भी दें।

अभी तक के सभी अध्यायों में हमने अखबार पढ़ने वाला अभ्यास रखा है। आइए, अब अखबारों के लिए लिखने का प्रयास करें। इस अध्याय में आई रिपोर्टों या अपने आसपास के उदाहरणों के आधार पर इन कुछ चीजों को लिखने का प्रयास करें:

- मानवाधिकारों के उल्लंघन के मामले पर संपादक के नाम पत्र।
- मानवाधिकार संगठन की तरफ़ से एक प्रेस विज्ञप्ति।
- मौलिक अधिकार संबंधी सर्वोच्च न्यायालय के फ़ैसले से जुड़े समाचार और उनका शीर्षक।
- पुलिस हिरासत में मौत की बढ़ती घटनाओं पर संपादकीय टिप्पणी।

इन सबको मिलाकर अपने स्कूल के नोटिस बोर्ड के लिए एक अखबार तैयार करें।

© NCERT not to be republished